Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेष इतिहास

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रमेश उपाध्याय

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रिय अग्निशेखर जी के लिए

4.2.2002

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
Acc. No. 4080
Date 26.12.2023

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेष इतिहास

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेष इतिहास

(कहानी संग्रह)

रमेश उपाध्याय

शब्दसंधान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
प्रथम संस्करण आर्य बुक डिपो, दिल्ली द्वारा 1973 में प्रकाशित

© रमेश उपाध्याय

प्रकाशक
शब्दसंधान
112, एस.एफ.एस. फ्लैट्स,
ई ब्लॉक, सेक्टर-18, रोहिणी,
दिल्ली-110 085

पेपरबैक संस्करण : 2001

मूल्य : 50 रुपये

मुद्रक
जयभारत प्रिंटिंग प्रेस
शाहदरा, दिल्ली-32

SHESH ITIHAS (Short Stories)
By Ramesh Upadhyaya
Rs 50/-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुम्हारे लिए

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित इन कहानियों को संग्रह के रूप में तुम्हें देने से पहले मैं तुमसे थोड़ी बातचीत कर लेना चाहता हूँ। क्यों? क्या कहानियाँ मेरी बात कहने के लिए काफी नहीं हैं? क्या कहानियों में जो कुछ मैंने कहा है, उसके अतिरिक्त भी कुछ रह गया है कहने को? हाँ, तभी तो।

१९६२ में मैंने पहली कहानी लिखी थी। कैसे लिखी थी, यह बताऊँ? जोधपुर के साधना प्रेस में कम्पोजीटर था मैं उन दिनों। इंटरमीडिएट पास था, इसलिए प्रेस-मालिक थोड़ी कद्र करते थे और शायद उस कद्रदानी के तहत ही उन्होंने रोज सुबह अपनी बेटी को पढ़ा देने का काम मुझे सौंप दिया था। रोज की तरह उस दिन भी पढ़ाने गया था, लेकिन उस दिन उनके घर में भयंकर झगड़ा हो रहा था। पारिवारिक कलह। और उस झगड़े का प्रभाव मेरे मन पर ऐसा पड़ा कि मैं प्रेस में पहुँचा तो बहुत क्षुब्ध था। उनके घर में झगड़ा हुआ करता है, यह मैं जानता था; क्यों हुआ करता है, यह भी जानता था—और वह 'क्यों' मुझे इतना अनावश्यक और हास्यास्पद लगता था कि उस पर कुछ सोचना व्यर्थ मालूम होता था। लेकिन उस दिन अपनी आँखों से देखकर लगा कि उनके घर में भयंकर गड़बड़ी है—और अक्सर उस घर में जाते-आते रहने के कारण कहीं मैं भी उस गड़बड़ी में शामिल हूँ। बस, मुझे ऐसा लगा ही, शामिल-वामिल मैं नहीं था। और उस दिन दोपहर को जब प्रेस में खाना खाने की छुट्टी हुई तो खाना खाने के बजाय मैंने कम्पोज्ड मैटर रखने की एक खाली गैली को आगे केस पर उठाया, प्रूफ उठाने के लिए रखे हुए न्यूजप्रिंट के कुछ टुकड़े

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए और खड़े-खड़े ही उल्टी गैली की सपाट सतह पर उन कागजों को रखकर एक पेंसिल से लिखना शुरू किया···

तब कहाँ मालूम था कि यह कहानीकार बनने की शुरुआत है। लेकिन वह कहानी 'लहर' में छप गयी। प्रोत्साहित होकर कुछ दिन बाद एक कहानी और लिखी। वह भी प्रकाशित हो गयी। फिर एक और···और यह सिलसिला चल निकला।

इस सिलसिले में एक बात और हुई। इलाहाबाद से निकलने वाले 'माध्यम' में कहानी छपी तो साठ रुपये पारिश्रमिक-स्वरूप मिले। साठ रुपये ! उन दिनों एक कम्पोजीटर की एक महीने की मजदूरी होती थी साठ रुपये। और तब यह विचार मेरे लिए अस्वाभाविक नहीं था कि महीने भर मजदूरी करने से तो अच्छा है कि कहानियाँ ही लिखी जायें। इसे तुम व्यावसायिकता कहना चाहो तो खुशी से कह लो, वास्तविकता यही है। और मेरा दावा है कि सुबह से शाम तक टाइप चुनने का नीरस काम करने वाले किसी भी मजदूर के सामने तुम यह विकल्प रखकर देखो, वह वही करेगा जो मैंने किया। और ऐसा करने को मैं गलत भी नहीं मानता।

आत्मनिर्वासन (एलियेनेशन) की समस्या को जो लोग समझते हैं, वे जानते हैं कि श्रम मनुष्य के जीवन का आधार है, उसी से वह प्रकृति का और अपना रूपांतरण करता है, लेकिन श्रम या कार्य करने की प्रक्रिया पर और श्रम के उत्पाद्य पर उसका नियंत्रण होना चाहिए। लेकिन पूँजीवादी व्यवस्था में कार्य की प्रक्रिया और श्रमोत्पाद्य, दोनों पर से मनुष्य का नियंत्रण हट जाता है। ऐसा श्रम मनुष्य को संतुष्ट करने के बजाय दुखी करता है और मनुष्य या तो अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को जर्जर करता हुआ अपने काम से जी चुराने लगता है, या उस दुःख से छूटने के लिए, अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को विकसित करने के लिए उस व्यवस्था को बदलता है, जो कार्य में श्रमिक की स्थापना के बजाय उसे निर्वासित करके आत्मनिर्वासन की उस हद तक पहुँचा देती है, जहाँ उसका श्रम उससे अलग और पराया हो जाता है। और चूँकि इस व्यवस्था को बदलना बहुत बड़ी क्रांति है, और चूँकि क्रांति अकेले नहीं हो सकती, इसलिए पूँजीवादी व्यवस्था के श्रमिक में अपना पेशा बदलकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थोड़ी सुविधा हासिल करने की ललक हमेशा रहती है—और वह स्वाभाविक है। इसे व्यावसायिकता और सुविधाजीविता मानना गलत है। (श्री रवीन्द्र कालिया इस बात को नोट कर लें, जिन्होंने 'वातायन' में मेरे लिए यह तजवीज की थी कि मैं धर्मयुग-सारिका में लिखने के बजाय बोरीबंदर के फुटपाथ पर खड़ा होकर फाउंटेनपेन बेचूँ !)

खैर, मैंने पेशा बदल लिया। दिये हुए मैटर को सीसे के टाइपों में अक्षर-अक्षर जोड़ने के बजाय कागज पर अपनी कलम से अक्षर जोड़कर 'अपना' मैटर तैयार करना निस्संदेह ज्यादा सुखद था। इसीलिए अनुवाद, जिसे लोग महा बोर काम कहते हैं, मुझे बोर या बुरा काम नहीं लगता। अनुवाद में भी आखिर यह स्वतंत्रता रहती है कि मैं एक शब्द की जगह दूसरा शब्द चुन सकूँ, बात को एक तरह से कहने के बजाय दूसरी तरह से कह सकूँ। फिर कहानियों में तो मैं पूरी तरह स्वच्छंद हूँ, जैसा चाहूँ वैसा करूँ। इसलिए अपने लेखन के प्रारंभिक वर्षों में मैंने अपनी कहानियों में तरह-तरह के प्रयोग खूब किये। पहले कहानी-संग्रह 'जमी हुई झील' की पहली सात कहानियाँ और इस संग्रह की भी कुछ कहानियाँ प्रयोगधर्मा हैं। लेकिन···

कोई भी लेखक पूरी तरह स्वच्छंद नहीं होता। कुछ चीजें होती हैं जो लेखक को अनुशासित करती हैं। इनमें से दो चीजें मुख्य हैं—सामाजिक यथार्थ और भाषा। कवि की अपेक्षा कथाकार पर यह अनुशासन अधिक कड़ाई से लागू होता है। कहानी में तुम कितनी भी उछल-कूद कर लो, समय-सत्य और सामाजिक यथार्थ से ज्यादा दूर नहीं जा सकते। जाओगे तो कहानी नकली, बनावटी और बेकार हो जायेगी। इसी तरह भाषा का अनुशासन भी तुम्हें स्वीकारना ही पड़ेगा। उस भाषा का, जो तुम्हारी भाषा है, तुम्हारे आसपास के लोगों की भाषा है—बातचीत की भाषा। अगर यों कहूँ तो भी ठीक होगा कि सामाजिक यथार्थ जनता की भाषा के द्वारा भी कथाकार को अनुशासित करता है। लेकिन इस अनुशासन से भी ऊपर एक चीज होती है—लेखकीय दृष्टि। क्योंकि सामाजिक यथार्थ को उसी से देखा जाता है। दृष्टि यदि धुँधली होगी तो धुँधला दिखायी देगा ही, उस पर लाल-पीले चश्मे चढ़े होंगे तो सामाजिक यथार्थ भी लाल-पीला

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिखायी देगा। इसलिए लेखक के लिए आवश्यक होती है साफ-साफ और दूर तक देखनेवाली खुली, पैनी दृष्टि, जो सामाजिक यथार्थ की गहराई में पैठ जाये।

और यहीं से अक्षर-अक्षर जोड़े हुए शब्दों में अर्थ की बात शुरू होती है। यानी सार्थकता और सोद्देश्यता की बात। जिस प्रकार प्रतिभा कोई जन्मजात या दैवी गुण न होकर निरन्तर सचेत परिश्रम और अभ्यास से प्राप्त होने वाला कौशल है, उसी प्रकार लेखकीय दृष्टि भी प्राप्त और विकसित की जाती है—की जा सकती है। जैसे-जैसे लेखक का ज्ञान बढ़ता जाता है, उसके अनुभवों में व्यापकता और गहराई आती जाती है, उसकी संवेदना का परिष्कार होता जाता है, वैसे-वैसे उसकी दृष्टि विकसित होती जाती है और उसके लेखन में धुँधलके छँटने लगते हैं, प्रखरता और परिपक्वता आने लगती है।

तब साहित्य-रचना अक्षर-अक्षर जोड़कर पेट पालने का पेशा, धंधा या व्यवसाय नहीं, कुछ और ही हो जाती है। तब कोई रचना केवल कविता-कहानी नामक वस्तु (कोमोडिटी) नहीं रह जाती, जिसे बेचकर भौतिक मूल्यों का उपार्जन किया जा सके। तब रचना में एक सार्थक, सोद्देश्य जीवंतता आ जाती है, रचना का अपना एक व्यक्तित्व बन जाता है, जो समाज से प्रभावित होता है और समाज को प्रभावित करता है।

लेकिन लेखक और रचना को वहाँ तक पहुँचने में समय लगता है—किसी को कम, किसी को ज्यादा। मैं अभी उस विकास की प्रक्रिया में हूँ, वहाँ तक पहुँचा नहीं हूँ। अपने दस वर्षों के लेखन के बारे में यह मेरी स्पष्ट स्वीकारोक्ति है कि उसका बहुत कम अंश ऐसा है, जिसे मैं अपने मापदंड से भी बहुत सार्थक और सोद्देश्य कह सकूँ। लेकिन अब मैं निरन्तर उस दिशा में बढ़ रहा हूँ, यह एहसास मुझे है और यह एहसास गलत नहीं है। प्रमाण तो मेरी आगे आने वाली कहानियाँ ही जुटायेंगी।

इसलिए 'शेष इतिहास' तक मैंने अपनी रचनाशीलता का एक दौर पूरा कर लिया है, ऐसा कहूँ तो तुम इसे अनर्गलता या कोरी विनम्रता मत समझना। आइ मीन इट। और अब जो मेरे लेखन का दूसरा दौर शुरू हो रहा है मैं तुम्हें बता नहीं सकता कि आजकल मैं अपने आपको कितना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नया, कितना स्फूर्त, कितना जीवंत महसूस कर रहा हूँ। जैसे कोई चीज कम थी, जो मिल गयी है।

लेकिन उस चीज के बारे में बात करने से पहले कुछ बातें और।

शारीरिक श्रम करते-करते मानसिक श्रम करने लगना सुखद तो होता है, पर कुछ ही समय के लिए। कारण ? सुख तभी तक होता है जब तक कार्य की प्रक्रिया और श्रमोत्पाद्य पर मनुष्य का नियंत्रण रहे। लेकिन मानसिक श्रम करने वाले का भी क्या इस पूँजीवादी व्यवस्था में वह नियंत्रण रह सकता है ? नहीं। नहीं रहता। लेखक अपने को कितना भी स्वतंत्र-स्वच्छंद माने, प्रकाशन की व्यवस्था उसे लगभग उसी प्रकार नियंत्रित करने लगती है, जिस प्रकार किसी कारखाने की व्यवस्था मजदूर को। वहाँ उसी मजदूर को मजदूरी मिलती है, जो उस कारखाने की जरूरतों को पूरा कर सके। वहाँ के तंत्र में काम करने लायक कुशलता उसमें हो और वहाँ के कायदे-कानून मानने को भी वह प्रस्तुत हो। लेखक के साथ भी, जाने या अनजाने, ऐसा ही होता है। वह अचेत या सचेत रूप से वैसा ही लिखने लगता है, जैसा उसके सम्पादक-प्रकाशक उससे लिखवाना चाहते हैं। तभी वह प्रकाशित हो पाता है और तभी उसे मान्यता दी जाती है। यह बात और है कि कोई लेखक यथार्थ के इतने नजदीक रहे कि उस व्यवस्था में बँधकर लिखता हुआ भी अपनी सार्थकता बनाये रखे। लेकिन इतने से वह आत्मनिर्वासन से नहीं बच सकता। अपनी सृजन-प्रक्रिया पर से उसका नियंत्रण एक हद तक तो हट ही जाता है और अपने श्रम के उत्पाद्य पर से भी— जब वह अपने श्रम के बल पर प्रकाशकों को फूलते हुए देखता है और खुद मामूली रोटी-कपड़ा भी नहीं जुटा पाता !

यह एक तथ्य है, लेकिन बहुत-से लेखक या तो इसे जानते नहीं, या जान-बूझकर नज़रअंदाज करते हैं; क्योंकि यह जानकारी लेखक को तब होती है जब वह पूँजीवादी प्रतिष्ठानों से निकलने वाली पत्रिकाओं में खूब छपने और चर्चित होने लगता है। तब वह जान रहा होता है कि वह, वह नहीं लिख रहा है जो उसे लिखना चाहिए, बल्कि वह लिख रहा है जो उससे लिखवाया जा रहा है। यह निर्णय लेने का समय होता है कि वह इस व्यवस्था का पुर्जा बना रहे या इसका विरोध करे। जाहिर है, विरोध

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महँगा पड़ता है। व्यवस्था उसे 'अपना लेखक' बनाकर उसे जो सुविधाएँ देने लगती है, उनके छिन जाने का डर तो रहता ही है, प्रकाशन-जगत में अपना भविष्य भी अंधकारमय दिखायी देने लगता है। दूसरे, एक अर्से तक 'प्रकाशनीय' चीजें लिखते रहने के कारण वैसी चीजें लिखने की जो आदत पड़ जाती है, उसे छोड़कर नयी अभिव्यक्ति की राह पर कदम रखना भी कुछ मुश्किल लगता है।

यही वह निर्णायक बिन्दु है, जहाँ खड़ा होकर लेखक फैसला करता है कि उसे सामाजिक यथार्थ से प्रतिबद्ध होना है या व्यवस्था का पुर्जा बने रहकर सुविधाएँ प्राप्त करते रहना है। यह तो स्पष्ट ही है कि प्रतिबद्धता के रास्ते में संघर्ष है, अनेक कष्ट हैं, खतरे हैं और व्यवस्था के राजमार्ग पर मोटा पारिश्रमिक है, ऊँचे-ऊँचे पद हैं, प्रतिष्ठा है, पुरस्कार हैं। यहीं सवाल उठता है लेखकीय ईमानदारी और बेईमानी का, स्वतंत्र अभिव्यक्ति का और व्यावसायिकता का। पूँजीवादी प्रेस के लिए लिखना अपने आप में बेईमानी और व्यावसायिकता नहीं है, लेकिन पूँजीवादी प्रेस जैसा चाहे वैसा लिखना लेखकीय कर्म के साथ बेईमानी भी है और व्यावसायिकता भी। यह बेईमानी किसी लेखक से अनजाने में होती है तो वह क्षम्य हो सकता है, उसके बारे में आशा की जा सकती है कि जिस दिन वह व्यवस्था के षड्यंत्र को समझ लेगा, उससे अलग हो जायेगा। लेकिन जो जानते-बूझते व्यवस्था के साथ हों, उन्हें क्या कहा जाये ?

खैर, मैं अपनी बात कहूँ। मुझे यह सोचने का मौका बहुत बाद में मिला कि मैं क्या लिख रहा हूँ और किसके लिए लिख रहा हूँ। लिख तो मैं वही रहा था, जो मैंने अपने अनुभवों से पाया था, लेकिन उसमें कुछ ऐसा था जो 'कहानी' से लेकर 'सारिका' तक और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' से लेकर 'धर्मयुग' तक स्वीकार्य था। यह 'कुछ' क्या था, मैं नहीं जानता था। शायद उसे मैं अपनी योग्यता और कुशलता समझता था। लेकिन छपते-छपते बात जब फरमाइशों पर आयी, तो मैं चौकन्ना हुआ। यह कहानी नहीं, वैसी कहानी लिखो जो तुमने तब लिखी थी···यह उपन्यास नहीं, वैसा उपन्यास दो जैसा तुमने पहली बार लिखा था···हमारे लिए कोई [illegible] लिख दो न ! और तब मैंने चौक-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चौंक कर अपनी उन चीजों को फिर से पढ़ा, जो बड़े प्रेम से छापी और सराही गयी थीं। पहले की उन चीजों में और अब की चीजों में एक स्पष्ट अन्तर था—है। पहले की चीजें यथार्थ को देखने वाली मेरी धुँधली दृष्टि के कारण एक ऐसी धुँधली दुनिया सामने रखती थीं, जिसमें सामाजिक यथार्थ इतना धुँधला हो जाता था कि उसके तमाम तीखे-नुकीले कोने घिसकर खुट्टल हो जाते थे—वे धारदार टुकड़े, जो तुम्हें छीलकर रख देते, आराम से जेब में रखने लायक हो जाते थे। और अब···अब मेरी रचनाओं में वह धारदार नुकीलापन सिर उठाने लगा है। इसीलिए वह 'कुछ' जो स्वीकार्य था, अब उन्हें नहीं मिलता और वे बड़े प्यार से मुझे समझा देना चाहते हैं कि तुम में आया हुआ यह परिवर्तन ठीक नहीं है। लेकिन मैं तुम्हें आश्वस्त कर दूँ कि मैं उनकी इस प्यार भरी समझाइश का शिकार नहीं होऊँगा। तुम्हारे जीवन में जो संघर्ष दिन-पर-दिन तीव्र होता जा रहा है, मैं उसी का चित्रण करूँगा। मुझे मालूम है, तुम संघर्षरत हो और तुम्हें अपनी कथा लिखने का अवकाश नहीं है, जब तक तुम्हें अवकाश नहीं मिलता, तुम्हारी कथा मैं लिखूँगा—एकदम सच्ची-सच्ची।

हो सकता है, भविष्य में तुम्हें अपनी कहानियाँ रंगीन पृष्ठों पर पढ़ने को न मिलें, लेकिन क्या तुम सादे-सस्ते कागजों पर लिखी-छपी अपनी सच्ची संघर्ष-कथा ढूँढ़-ढूँढ़कर पढ़ना पसन्द नहीं करोगे? करोगे, मुझे विश्वास है।

और हाँ, वह चीज जिसका जिक्र मैंने ऊपर किया था, वह तो तुम्हें बतायी ही नहीं। वह चीज है यथार्थ को देखने वाली एक दृष्टि। बात यह है कि समाज में रहने के नाते सामाजिक यथार्थ को देखते तो हम सभी हैं, पर नजरिया सबका अलग-अलग होता है। घटना एक ही होती है, लेकिन उसकी व्याख्याएँ अलग-अलग होती हैं, उससे निष्कर्ष अलग-अलग निकाले जाते हैं। यह बात दृष्टि या दृष्टिकोण पर ही निर्भर नहीं, उस स्थान पर भी निर्भर है जहाँ से चीजों को, लोगों को, घटनाओं को देखा जाता है। लेखक को अपने लिए यह स्पष्ट कर लेना जरूरी है कि वह कहाँ खड़ा है, कहाँ से बोल रहा है, यानी उसका स्टैंड क्या है, उसकी पक्षधरता क्या है।

मैं यहाँ की व्यवस्था को ही देखकर लिखता था, लेकिन यथार्थ को देखने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation (Chennai) Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu. IKS-HAE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है और उसके बीच खड़ा हुआ या जूझता हुआ आदमी जब तक यह निश्चय न कर ले कि वह किस पक्ष में है, तब तक वह लड़ेगा क्या खाक ! दरअसल तब तक वह एक स्पष्ट संघर्ष को बेमतलब का दंगा समझता है और खुद को दंगे में फँसा हुआ आदमी, जिसे महज अपनी जान बचाने की पड़ी रहती है। ऐसा आदमी (यानी लेखक) अपनी घबराहट में कितना भी चीखे-चिल्लाये, उसकी चीख-पुकार कोई नहीं सुनता और अंततः वह अपनी बदहवासी में पैरों तले रौंद दिया जाता है। उस संघर्ष का सत्य तभी उसकी समझ में आता है, जब वह संघर्षरत दोनों पक्षों को देख-समझकर एक पक्ष में शामिल होने का फैसला कर लेता है। तभी वह व्यर्थ में पैरों तले रौंदे जाने से बचता है और यथाशक्ति सही ढंग से लड़ भी सकता है। तभी दूसरों के लिए, समाज के लिए उसकी उपयोगिता और सार्थकता भी होती है।

'शेष इतिहास' तक की कहानियों में आज के सामाजिक यथार्थ वर्ग-संघर्ष का स्पष्ट रूप मेरे सामने नहीं था, इसलिए इन कहानियों में है तो तुम्हारा यथार्थ ही, लेकिन एक अस्पष्ट और धुंधली नजर से देखा हुआ। इसलिए ये कहानियाँ तुम्हें सौंपते हुए थोड़ा हिचक रहा हूँ—यद्यपि हिचक का कोई कारण नहीं है। ना, मैं शर्मिन्दा कतई नहीं हूँ। अपने बचपन पर कोई शर्मिन्दा होता है ?

अच्छा, जब तक मैं आगे की कहानियाँ लिखूँ, तुम इन कहानियों को पढ़कर बताओ कि मैं इनमें तुम्हारे जीवन का कितना सत्य दे पाया, कितनी गलतियाँ मुझसे हुईं, कहाँ-कहाँ मैंने असावधानी की और कहाँ-कहाँ मूर्खता। सच, मैं तुम्हारी बात सुनने, अपनी कमजोरियों को जानने और अपने आपको बदलने को प्रस्तुत हूँ। और सुनो, अपने संघर्ष में तुम मुझे अपने साथ ही समझो। मैं यहीं हूँ। बिल्कुल तुम्हारे पास। तुम्हारा।

—रमेश उपाध्याय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्रम

अपने ही शहर में	१
चील	९
घोंसले	१६
उद्धारक	२२
रोज़ की तरह	३१
सागर-संगम	४१
गलत पते पर	५३
अलग और विपरीत	६३
नाटकीय	७८
समतल	९३
मदद	११२
दूसरी पवित्रा	१२२
शेष इतिहास	१३४

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपने ही शहर में

मुझे इसका अनुमान पहले से ही था। मैं जानता था कि जिन लोगों के चंगुल में फँस गया हूँ, वे यही करेंगे और यह भी जानता था कि यदि मैंने उनकी इच्छा से सब कुछ होने दिया, तो वे मुझ पर हावी हो जायेंगे और फिर मेरे लिए कोई विकल्प नहीं बचेगा। यही हुआ।

हुआ यों कि मैं अपने दफ्तर वाली लेन से निकल कर रोज की तरह मुख्य सड़क के फुटपाथ पर चल रहा था। अपनी धुन में मस्त। अपने विचारों में व्यस्त। किसी से टकराने की कोई आशंका नहीं थी; क्योंकि यदि रास्ते के नियमों का पालन करते हुए चला जाये तो टकराने की कोई आशंका नहीं होती है। मैं बायीं पटरी पर था। और वह पटरी केवल पैदल चलने वालों के लिए है। दुर्घटना अधिक-से-अधिक यह हो सकती है कि कोई ज़्यादा ही उतावला मुझ से आगे निकलने के प्रयत्न में मुझे धक्का दे जाये, सो उसके लिए मैं सावधान था। सड़कों और फुटपाथों पर सावधानी से चलना मेरी आदत है और आदतें आदमी का साथ बहुत दिनों तक देती हैं। मेरी एक पुरानी आदत यह है कि मैं अपनी ज़िन्दगी को शाम तक सही-सलामत बचाकर घर ले जाऊँ। इसलिए मुझे कोई चिन्ता नहीं थी।

लेकिन बायीं पटरी पर कुछ लोगों को सामने से आते देखकर मैं चौंका। नीरू ने मुझे बताया था कि कुछ दिनों से शहर में कुछ अजनबी लोगों का एक दल सक्रिय है जो बड़ी गड़बड़ी मचाये हुए है। उस दल के लोग, सुना है, कोई क़ानून नहीं मानते, किसी नियम का पालन नहीं करते। लूटपाट तो उनके लिए मामूली बात है, हत्या करने में भी उन्हें कोई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उलझन नहीं होती। सुधीर ने तो यहाँ तक कहा कि वे लोग यह सब करने पर भी कभी पकड़े नहीं जाते; क्योंकि उनके पास कोई रहस्यमयी शक्ति है। वर्मा ने इस बात पर चुटकी लेते हुए कहा था, "वे आधुनिक सिद्ध पुरुष हैं।"

"कहीं वे ही न हों।" सामने से आते हुए उन लोगों को देखकर मैंने सोचा और ग़ौर से उनकी ओर देखने लगा। वे कई थे और बेतरतीब झुंड बनाकर चल रहे थे। उनके कपड़े चुस्त लेकिन मैले थे, दाढ़ियाँ बढ़ी हुई थीं, सिर के बाल शायद महीनों से नहीं धुले थे और जूतों से लगता था कि वे बहुत लम्बी-लम्बी यात्राएँ करके आ रहे हैं। उनके हाथों में कोई खास सामान नहीं था—छोटा-सा झोला या ब्रीफकेस या किताब या अखबार। लेकिन उनकी पतलूनों की जेबें फूली हुई थीं। मुझे लगा, वे उन जेबों में पिस्तौलें रखे होंगे। उनमें से कुछ के दाहिने हाथ दाहिनी जेबों के अन्दर देखकर तो मेरा सन्देह पक्का हो गया कि जेबों में पिस्तौलें ही हैं और उनकी उँगलियाँ गोली चलाने के लिए एकदम तैयार हैं। घबराहट होनी ही थी।

सबसे ज़्यादा घबराहट मुझे तब हुई जब उन लोगों ने मुझे घेर लिया। उनमें से एक ने मेरी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया, दूसरा मेरी ओर देखकर प्यार से मुस्कराया, तीसरे ने अपने सिर को हौले-से झटका देकर प्रसन्नता प्रकट की और चौथे ने अपना सिगरेट-केस खोलकर मेरे सामने बढ़ा दिया। पाँचवाँ, छठा, सातवाँ, आठवाँ आदमी चुप बना रहा। शेष को शायद मेरी परवाह नहीं थी या वे मुझे फालतू समझकर मुझसे असंम्पृक्त रहने का प्रयत्न कर रहे थे।

मैंने मन-ही-मन घबराते हुए, ऊपर से मुस्कराते हुए कहा, "बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर। मेरा नाम किशोर श्रीवास्तव है, यहाँ बिजलीघर में काम करता हूँ। आप लोग ?"

"कहाँ जा रहे हो ?" अपना परिचय न देकर उसने पूछा, जो मेरी ओर देखकर प्यार से मुस्कराया था।

"घर !" मैंने अपने कंठ में रुकावट-सी अनुभव करते हुए कहा।

"तुम्हारा घर कहाँ है ?" वही मुस्कान से पूछा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ई, छप्पन बटा एक सौ तेरह, गांधी नगर।" मैंने घबराहट में पूरा पता बोल दिया।

"अकेले रहते हो ?"

"नहीं, मेरे साथ नीरू रहती है—मेरी पत्नी।"

यह सुनकर मेरी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाने वाला ज़ोर से हँस पड़ा। अपने साथियों की ओर देखकर बोला, "देखा ! आज का दिन ही खराब है। जो भी मिलता है, शादीशुदा मिलता है।"

"आप लोग कौन हैं ?" मैंने फिर पूछा।

"बच्चे भी हैं ?" मुझे सिगरेट देने वाले ने पूछा।

"नहीं, कुछ महीनों बाद होने वाला है।"

"और तुम खुश हो ?" सिर को झटका देकर प्रसन्नता प्रकट करने वाले ने कहा।

"हाँ, सामान्य रूप से···लेकिन सुनिए, मुझे जल्दी घर पहुँचना है, इसलिए जो कुछ आपको मुझसे कहना है, सीधे-सीधे और जल्दी कहिए !"

"हमें जानते हो ?" अब तक चुप खड़े हुओं में से एक ने पूछा।

"नहीं !" मैंने कहा और कहते ही कहीं से मेरी कनपटी झनझना उठी। उनमें से पता नहीं किसने एक ज़ोरदार थप्पड़ मुझे मार दिया था।

"यह क्या बदतमीजी है।" मैं ज़ोर से बोला और अगले क्षण मुझे अपनी पसलियों पर एक ताकतवर घूँसे का आघात अनुभव हुआ। मैं गिर पड़ता, लेकिन मेरे पीछे खड़े हुए किसी आदमी ने मुझे अपने हाथों पर थाम कर फिर खड़ा कर दिया। पसलियों के दर्द से मैं आगे की ओर झुकने लगा तो किसी ने मुझे मेरे सिर के बालों से पकड़कर सीधा किया और गरजकर पूछा, "जानते हो ?"

"जानता हूँ !" मैंने कराहते हुए बड़ी मुश्किल से कहा, "जानता हूँ।"

"क्या है तुम्हारे पास ?" असम्पृक्त खड़े हुए लोगों में से एक मेरे पास आया। उसकी मुद्रा से लगा, यदि मैंने सच नहीं बोला तो वह मेरी तलाशी लेगा और बहुत मारेगा।

"मेरी तनख्वाह के पैसे हैं।" मैंने बता दिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"निकालो।"

मैंने पैसे निकालकर दे दिये तो एक मोटा और बदसूरत आदमी आगे बढ़ आया, "यह घड़ी तुम्हारी कलाई में नहीं जँचती, उतारो।"

मैंने घड़ी भी दे दी।

"ये जूते कब पहने ? लगता है, नये हैं ?" एक फटीचर शक्ल आगे बढ़ आयी।

"दो महीने पहले।" कहते हुए मैंने जूते उतारे और मोजे भी उतार-कर उन्हीं में डाल दिये। जूते माँगने वाला जब अपने फटे-पुराने धूल-भरे जूते उतारकर मेरे जूते जबरदस्ती अपने पैरों में डाल रहा था, तब मैंने अपनी बुशर्ट भी उतारकर उनमें से एक के ऊपर फेंक दी। उसे लगा, मैंने उसका अपमान किया है और उसने अपने अपमान का बदला लेने के लिए बुशर्ट को मज़बूत और फुर्तीले हाथों से फाड़ना शुरू किया और मुँह से गालियाँ बरसाने लगा। बुशर्ट फाड़कर उसने मेरे ऊपर फेंकी और चीते की तरह उछलकर मुझ पर टूट पड़ा···और फिर मुझे होश नहीं रहा। पता नहीं कितनी देर बाद मैंने पाया कि फुटपाथ पर एक आदमी सिर्फ अंडरबियर पहने पड़ा है और उसका सारा जिस्म लहूलुहान है। सड़क पर बहती हुई ट्रेफिक की नदी सूख गयी है। और फुटपाथ भी मरकरी ट्यूब की रोशनी में धुला सूना पड़ा है। दूर चौराहे पर जलती-बुझती रहने वाली लाल-पीली-हरी बत्तियों में निरंतर चलने वाला क्रम रुक गया है और केवल बीच वाली पीली बत्ती जल-बुझ रही है। जीवन्त, किन्तु गति और ठहराव के बीच की कोई चीज़।

मैं फुटपाथ पर पड़े उस लहूलुहान आदमी की मदद करना चाहता था। लेकिन मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। इतनी शक्ति मुझ में कभी नहीं रही कि एक और व्यक्ति को लादकर अस्पताल तक ढो ले जा सकूँ और इस काम में साथ देने वाला कोई दिखायी नहीं दे रहा था।

काफी देर बाद एक कार चौराहे की तरफ से आती दिखायी दी। मैंने हाथ के इशारे से उसे रोकना चाहा; लेकिन वह सरसराती हुई निकल गयी। असहाय ! एक शब्द मेरे मन में कौंधा और मुझे नयी खोज की तरह महसूस हुआ कि असहाय उसे ही कहते हैं जो अपनी सहायता आप नहीं कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सकता। फिर मुझे लगा कि यही या ऐसी ही बात मैं किसी पुस्तक में पढ़ चुका हूँ। लेकिन उस पुस्तक का नाम उस समय मुझे याद नहीं आया। यह भी नहीं कि वह पुस्तक मैंने कितने दिन पहले पढ़ी थी। वास्तव में मैं इस हिसाब से कुछ तय करना चाहता था। मुझे पता है कि यदि पुस्तक कुछ ही दिन पहले पढ़ी हो तब तो कोई बात नहीं; क्योंकि पुस्तकों का प्रभाव कुछ समय तक तो रहता ही है, मगर बहुत लम्बे अरसे के बाद भी कोई किताब किसी पर छायी रहे तो उसे समझ लेना चाहिए कि उसकी अकल कमज़ोर है, कि वह आगे नहीं सोच सकता।

"मुझे जल्दी घर पहुँचना है।" फुटपाथ पर पड़ा वह लाशनुमा आदमी बोला।

"तुम्हारा घर कहाँ है ?" मैंने पूछा।

"फुटपाथ पर खड़े होकर अजनबी लोगों से बातें करना···ग़ैर कानूनी है।" उसने अटकते हुए कहा, जिससे मुझे लगा कि उपयुक्त शब्द नहीं मिल पाने पर ही उसने 'ग़ैरकानूनी' शब्द का प्रयोग किया है।

"ग़ैरकानूनी ?" मैंने कहा जिससे वह अपनी भूल समझ सुधार ले।

"तुम नहीं जानते, यह क़ानून है कि फुटपाथों पर अजनबी लोगों से बातें नहीं की जायें। पहले यह क़ानून केवल कॉलिजों में पढ़ने वाले छोकरों के लिए बनाया गया था जिससे वे फुटपाथों पर अजनबी लड़कियों से प्रेम निवेदन नहीं कर सकें···लेकिन क़ानून किसी महामारी से कम नहीं होते। वे इतनी जल्दी फैलते हैं कि···"

"जब यह ग़ैरकानूनी है तो तुम फुटपाथ पर पड़े मुझसे क्यों···?"

"मैं पड़ा कहाँ हूँ, मैं तो चल रहा हूँ।" उसने मेरी बात काटकर कहा और मुझे आश्चर्य में डाल दिया। जिसे मैं पड़ा हुआ समझ रहा था, वह सचमुच चल रहा था···घिसट रहा था, फिर भी गतिशील तो था ही··· और मैं जो सहायता करने और प्राप्त करने के लिए प्रतीक्षारत खड़ा था, वास्तव में खड़ा नहीं था, बातें करता हुआ उसके साथ चल रहा था। चौराहे की बीच वाली पीली बत्ती जब ठीक मेरे सिर पर झिप-झिप करने लगी तब मुझे विश्वास हुआ कि वास्तविक स्थिति यही है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मुझे पता नहीं था कि वह नंगा और लहूलुहान आदमी वास्तव में मुझे

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपने साथ ले जाने के इरादे से वहाँ पड़ा हुआ था। उसने अपने इरादे की हवा भी मुझे नहीं लगने दी। मेरे पास समय न होने और जल्दी घर पहुँचने की बात पर वह सहमत हो गया था। उसने यह भी मान लिया था कि फुटपाथ पर खड़े होकर बातें करना भी ग़ैरकानूनी है, लेकिन चूँकि वह चल रहा है इसलिए क़ानून तोड़ने से बचा हुआ है। क़ानूनी शिकंजे में फँसने से बचने के लिए अपनाया गया यह तरीका मुझे दिलचस्प लगा। और लगा कि अब मैं उसकी सहायता के लिए उसके साथ नहीं चल रहा हूँ बल्कि इस तरह चलने का प्रयोग कर रहा हूँ और एक नयी अनुभूति से गुज़र रहा हूँ।

कुछ देर बाद मैंने अपनी चाल बढ़ाकर देखना चाहा कि वह मेरा साथ दे पाता है या नहीं, या वह किस अनुपात से पिछड़ता है। लेकिन वह साथ लगा रहा और घिसटते हुए मजे में बातें करता रहा। वह मेरी बातें इस तरह सुनता चल रहा था जैसे मुझ से ज्यादा दिलचस्प बातें करने वाला उसे कोई और नहीं मिला हो। इस बात का एहसास मुझे बहुत देर बाद हुआ कि मैं चाहकर भी अपनी चाल तेज़ नहीं कर सकता हूँ—जैसे मेरे पैर किसी अदृश्य चीज़ से उसके साथ बँधे हुए हैं। इस बात पर मुझे गुस्सा आया, लेकिन अपने गुस्से में मैंने मन-ही-मन कहा, "बदमाश ! तुम बहुत होशियार बनते हो, पर मुझ से बँधे होने के कारण उठकर भाग नहीं सकते।"

अपने विचार से मैं सही रास्ते से घर जा रहा था, लेकिन घर पहुँचने के लिए जब मैं मुख्य सड़क से गांधी नगर की ओर जाने वाली छोटी सड़क पर मुड़ने लगा तो मुझे पता चला कि मैं एकदम उल्टी दिशा में आ गया हूँ और अब घर तक पहुँचने के लिए मुझे दो गुनी दूरी तय करनी होगी। मैं झुँझला गया। आँखों में आँसू आ गए। शरीर जो अब तक साथ दे रहा था अकथ्य पीड़ा से कराह उठा और मैंने स्वयं को अपने से बँधे हुए उस आदमी के पास मूर्छित होकर गिरते पाया।

"तुम मुझे कहाँ ले आये हो ?" आँखें खुलने पर मैंने पूछा। कई चेहरे मेरे ऊपर झुके हुए थे और सबके होंठों में एक-एक व्यंग्य भरी मुस्कान दबी हुई थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हम तुम्हें कहीं नहीं लाये, हम तो सिर्फ तुम्हारे साथ थे।" एक ने कहा।

"तुम्हें अपना रास्ता याद रखना चाहिए था।" दूसरे ने कहा।

"तुम हम पर इलजाम लगा रहे हो।" तीसरे ने कहा।

"अजनबी लोगों से इस तरह के सवाल नहीं पूछे जाते।" चौथे ने कहा। और इसके बाद पाँचवे-छठे-सातवें-आठवें आदमी ने क्या-क्या कहा, मुझे याद नहीं। चेहरे से घिरे हुए आसमान के नीले तालाब में मैंने स्वयं को गहरे डूबते महसूस किया।

और फिर मैंने स्वयं को सफेद बिस्तर पर सफेद चादर से ढका हुआ पाया। क्रीम कलर के रोगन से पुती हुई दीवारें, उसी रंग का धीरे-धीरे घूमता हुआ छत से लटका पंखा, उसी रंग का फर्नीचर देखकर मैंने जाना कि मैं अस्पताल में हूँ।

मेरे सामने खिड़की खुली हुई थी, जिसके रास्ते मेरी आँखें बाहर कूद गयीं। बाहर फूल थे और चटकीली धूप थी और खुला-चमकीला-नीला आकाश। एक ओर सफेदे के लम्बे पेड़ थे और दूसरी ओर एक कँटीली झाड़ी का स्तूप। देखने में सब अच्छा लगता था लेकिन मेरी नाक में फिनायल और स्पिरिट की-सी गंध भरी हुई थी। उस गंध में कहीं एनस्थीसिया की गंध भी थी—बेहोशी लाने वाली। मेरी साँस रुकती जा रही थी कि बाँहों में फूल लिए, भरे-भरे जिस्म की एक सुन्दर लड़की मुझे अपनी ओर आती हुई दिखाई दी। निकट आयी तो मैंने देखा, वह नीरू है, मेरी पत्नी। उसने फूल मेरे सिरहाने रख दिये और बोली, "चिन्ता मत करो, तुम बहुत जल्दी अच्छे हो जाओगे।"

"मुझे यहाँ कौन लाया है?" मैंने पूछा।

"मैं लायी थी। तुम तो बेहोश थे। कुछ भले आदमी तुम्हें उठाकर घर छोड़ गये थे। उन्होंने बताया कि वे रास्ता भूलकर भटके हुए और सड़क पर एक्सीडेंट में घायल हुए लोगों को उनके घर पहुँचाने का ही काम करते हैं। परोपकार के इस काम में ही उन्होंने अपना जीवन लगा रखा है···कितनी अच्छी बात है, लोगों में सामाजिक दायित्व की भावना बढ़ रही है···।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नीरू बहुत देर तक उन लोगों के बारे में बताती रही, मेरी आँखें बन्द देखकर उसने हौले से मेरा माथा छुआ और आहिस्ते से उठकर बाहर चली गयी। मेरी आँखें बन्द देखकर उसने सोचा होगा कि मैं सो गया हूँ और सोते हुए मरीज के पास बैठना कौन पसन्द करता है। लेकिन मैं सोया नहीं था इसलिए, या न जाने किस लिए मैंने आँखें खोलकर बाहर देखा।

देखा तो चौंक गया। बाहर कँटीली झाड़ी के स्तूप के पास खड़ी नीरू उन्हीं लोगों से हँस-हँसकर बातें कर रही थी जो रात को मुझे मिले थे और जिन्होंने···

मुझे गुस्सा आया और मैंने ज़ोर से कहना चाहा, "नीरू ! तुम्हें इन लोगों से बातें नहीं करनी चाहिएँ।" लेकिन कह नहीं पाया। स्वरतंत्रियाँ बेकार हो गयी-सी लगीं। इच्छा हुई कि खिड़की से छलाँग लगाकर वहाँ पहुँच जाऊँ और नीरू को अलग हटाकर उनसे बदला लूँ, किन्तु यह भी सम्भव नहीं हुआ। शायद मुझे अस्पताल के बेड से बाँध दिया गया था कि मैं हिल भी न सकूँ।

इस अप्रिय और असहाय स्थिति से बचने के लिए मैंने स्वेच्छापूर्वक मूर्छित हो जाना चाहा, किन्तु हो नहीं सका। इसके विपरीत चेतना की नदी में बाढ़ आती महसूस हुई और उस बाढ़ में अवश बहते हुए मैंने देखा कि मेरी पत्नी भी उन्ही में से एक हो गयी है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चील

चारों ओर एक मनहूस धुंध छायी हुई थी। साफ-साफ कुछ भी देख पाना मुश्किल था। उसे महसूस हुआ कि अब वह कुछ भी साफ-साफ नहीं देख पायेगा। "हो सकता है, यह मेरा वहम ही हो।" उसने सोचा। उसे लगा कि वह बेहोश है, या कम से कम इतना तो है ही कि नींद पूरी तरह नहीं खुली है। "नींद और बेहोशी में क्या कोई फर्क नहीं होता ?" उसने स्वयं से पूछा। "क्या दोनों स्थितियों में धुंध ही दिखायी देती है ?" उसने दिमाग़ पर ज़ोर दिया। "लेकिन मैं सोया था या बेहोश हुआ था ? सोया था तो कहाँ और बेहोश हुआ था तो क्यों ? यह जगह कौन-सी है जहाँ मैं पड़ा हूँ ?"

उसने हाथ-पैरों को तानकर उठने की कोशिश की, लेकिन उस कोशिश में उसका अंग-अंग दर्द से कराह उठा। "यह दर्द ?" उसकी आँखें मुँद गयीं और उस मनहूस धुंध की जगह कुछ लाल-काले धब्बे उभर आए। रेशमी-से वे लाल-काले धब्बे आँखों में थोड़ी देर फैलते-सिकुड़ते रहे और फिर न जाने किस रास्ते से कहीं बह गये। उसे लगा, वह अवसन्न होता जा रहा है। "अचेत होते जाने की अनुभूति स्वयं की जा सकती है क्या !" उसने फिर सोचा और स्वयं से पूछा, "मैं अचेत क्यों हो रहा हूँ ?"

"सपना है। डरावना सपना। कभी-कभी ऐसा हो जाता है। अभी यह सपना टूट जायेगा। आँखें खुल जायेंगी और सब ठीक हो जायेगा। सारी असम्भाव्यता की जगह वास्तविकताएँ लौट आयेंगी और मैं स्वयं से बिस्तर पर पड़ा हुआ मिलूँगा। जागता हुआ। रानी पास ही सोयी हुई होगी। उसे जगा लूँगा और कहूँगा—उठकर मुझे एक गिलास पानी पिला दो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पानी पीने के बाद नींद ठीक से आ जायेगी।" इस राहत तक पहुँच कर भी वह सही-सही निश्चय नहीं कर पाया कि वह नींद में है या बेहोशी में, सोया हुआ है या जाग रहा है। "मेरे हाथ कहाँ हैं ? सीने पर तो नहीं रखे हुए हैं ? रानी कहा करती है कि सीने पर हाथ रखा रह जाये तो डरावने सपने आते हैं। रानी सच कहती है। मैं कई बार के अनुभव से उसकी बात की सच्चाई को परख चुका हूँ।···लेकिन जब मैं यह जान रहा हूँ कि यह सपना है तो यह सपना कैसे हो सकता है ? कहीं कुछ गड़बड़ है रानी···"

उसने देखा, वह एक पहाड़ी पर चढ़ रहा है। पहाड़ी पर हर तरफ अनगढ़ और नुकीले पत्थर हैं और कँटीली झाड़ियाँ हैं, जिनमें उसके पायजामे के पाँयचों का खुलापन उलझ रहा है। हालाँकि पास ही एक साफ-सुथरा सीमेंट का बना रास्ता है, जिस पर आराम से चला जा सकता है, लेकिन रास्ते के किनारे एक तख्ती लगी हुई है, जिस पर लिखा है—केवल नीचे जाने के लिए। यह पढ़कर उसे बुरा लगा है। उसे अपने दफ्तर की लिफ्ट याद आ गयी है, जिसके बारे में न जाने किस अहमक ने यह नियम बना दिया था कि लिफ्ट सिर्फ ऊपर जाने के लिए है, उतरने के लिए सीढ़ियों का प्रयोग कीजिए। इस नियम पर उसे बहुत क्रोध आया करता है, क्योंकि जब वह जल्दी में सीढ़ियों से उतरा करता है, उसे हमेशा आशंका बनी रहती है कि वह किसी दिन यों ही उतरते हुए गिर पड़ेगा और सीढ़ियों पर गोल-गोल लुढ़कता हुआ नीचे जा पड़ेगा—औंधे मुँह। और नीचे पहुँचने तक उसके प्राण निकल चुके होंगे।

लेकिन यहाँ तो उलटा नियम है—चढ़ने के लिए यह ऊबड़-खाबड़ कँटीली-पथरीली पहाड़ी और उतरने के लिए सह सीधा-सपाट सीमेंटी रास्ता। फिर भी वह मन में बड़ी कोफ्त महसूस करते हुए पहाड़ी पर चढ़ता रहा। "जगह यह ज़रूर जानी-पहचानी है।" उसने सोचा, "नींद खुलने पर मैं सोचकर इस जगह का नाम बता सकता हूँ, लेकिन अभी उसकी ज़रूरत नहीं है। अभी तो यह देखूँ कि इस पहाड़ी पर बनी उस इमारत के भीतर क्या है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उसे आश्चर्य हुआ कि अगले ही क्षण वह उसे इमारत के अन्दर था और

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसे महसूस हुआ कि अन्दर का मौसम बदला हुआ है। गर्म और चमकीली धूप से भरा हुआ, और सामने एक ऊँची-लम्बी दीवार के सिवा कुछ भी नहीं है। दीवार सपाट है और उसमें ऊपर की ओर एक—सिर्फ एक अंधी खिड़की है, जिसमें कोई रोशनी, कोई चेहरा नहीं है। "क्या दीवार के उस पार रात हो गयी है ?" उसने स्वयं से सवाल किया लेकिन जवाब नहीं दे पाया। उसी समय उस अंधी खिड़की से एक झंडे की शक्ल में कोई चीज़ बाहर निकली और झूल गयी। झण्डा ही था। लाल और उस पर एक स्वास्तिक चिह्न। "यह हिटलर का झंडा है क्या ? तो क्या मैं जर्मनी में हूँ ?" उसने स्वप्न की असम्भाव्यता पर ज़ोर से हँसना चाहा, लेकिन तभी वह अजीब-से खौफ़ से जकड़-सा गया और उसे लगा कि किसी ने उसे उठाकर 'केवल नीचे जाने के लिए' वाले रास्ते पर लुढ़का दिया है और वह लुढ़कता जा रहा है। लहूलुहान होता जा रहा है···थोड़ी देर और···और वह नीचे जा पड़ेगा···औंधे मुँह···और नीचे पहुँचने पर उसके प्राण निकल चुके होंगे···

हड़बड़ा कर उसने आँखें खोल दीं। फिर वही मनहूस धुंध दिखायी दी, लेकिन अपने घर की परिचित दीवारें नहीं। एक ओर कुछ पीलापन-सा दिखायी दिया। ग़ौर से देखा तो कुछ सरसों के फूल बिखरे दिखायी दिये। हरियाली और पीलापन। "हरे पत्ते और पीले फूल ? मैं कहाँ आ गया हूँ ? रानी कहाँ है ? रानी ··।" उसने फिर उठने की कोशिश की, लेकिन फिर उसके अंग भयंकर पीड़ा से कराह उठे। उसे लगा कि दर्द मोटी-मोटी रस्सियों की शक्ल में उसके सारे जिस्म पर बँधा हुआ है। हाथों को शायद लकवा मार गया है कि वे हिल भी नहीं सकते। वह सिर भी नहीं उठा सकता। ऐसा हो सकता तो वह उचककर कम से कम अपनी हालत तो देख सकता। "यह क्या हो गया है मुझे ?" उसने अन्दर ही अन्दर चीखकर पूछा और अपनी बेबसी पर एक वहशी पागलपन से भर उठा कि उसका वश चले तो स्वयं को मार-मार कर अधमरा कर दे।

"मार-मारकर अधमरा···?" उसे कुछ याद आया। मुँदती आँखों में बन्द फैलते-सिकुड़ते लाल काले रेशमी धब्बों की शक्ल में हल्का-सा कुछ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

याद आया, लेकिन कुछ भी साफ नहीं हो सका। "मारेगा कोई क्यों मुझे ? मैंने किसी का क्या बिगाड़ा है ? बचपन से अब तक कोई अपराध नहीं किया। किसी को छेड़ा-सताया नहीं। पढ़ता था तब भी, और पढ़ाई के बाद अब इतने वर्षों से नौकरी कर रहा हूँ सो अब भी पूरे अनुशासन में रहता हूँ। किसी को कोई कड़वी बात नहीं कहता। किसी के झमेले में नहीं पड़ता। फिर कोई क्यों मारेगा मुझे ? ग़लत है। बकवास है। सपना है। अभी नींद टूटने पर सब ठीक हो जायेगा। रानी, तुम ज़रा उठकर मुझे झकझोर दो न ! सुनो, तुम मुझे झिंझोड़ कर जगा दो और एक गिलास पानी पिला दो···"

उसे लगा कि रानी बहुत गहरी नींद में है। जाग नहीं सकती, जब तक कि उसे ख़ूब झिंझोड़ कर जगाया नहीं जाये। क्या मुसीबत है ! इस स्वप्न को देखते चले जाने के सिवा कोई चारा नहीं है। लेकिन ये सरसों के पीले फूल यहाँ क्यों हैं ?···नाइजर नदी के किनारे उसका गाँव था, उसका अपना घर था, जहाँ से पकड़कर उसे बेच दिया गया था और एक दिन अपने मालिक के खेत में काम करते-करते वह सो गया था और सपने में वह नीग्रो गुलाम नाइजर नदी के किनारे पहुँच गया था।···लेकिन मेरा घर तो सरसों के फूलों के पास नहीं था। मैं तो···मैं तो···हाँ, याद आया, मैं तो महात्मा गांधी लेन के आखिरी स्क्वायर में रहता हूँ···अपने फ्लैट की हर चीज़ को मैं अच्छी तरह पहचानता हूँ। फिर ये फूल ? हे भगवान् ! यह सब क्या है ? मेरी नींद क्यों नहीं टूटती है ? यह सपना कब तक चलेगा ?"

अचानक उसे अपने दाहिने हाथ में, हाथ की उँगलियों में कुछ हरकत होती हुई-सी महसूस हुई। "हे ईश्वर ! मेरी चेतना लौट रही हैं। अभी सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा। लेकिन मेरी उँगलियाँ यह क्या टटोल रही हैं ? घास ? लेकिन मेरे बिस्तर पर घास कहाँ से आ गयी ? रानी के बाल तो नहीं ? रानी के बालों की छुअन को तो मैं अच्छी तरह पहचानता हूँ। यह घास ही है—ताजा गीलापन, नुकीलापन—लेकिन मेरे न चाहते हुए भी मेरे हाथ की उँगलियाँ थोड़ी-सी घास तोड़कर आँखों के सामने क्यों ले आती हैं ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दूर से आती हुई घूं-घर्रर्रर्र की आवाज़ पास आकर दूर चली गयी। "शायद कोई ट्रक था ! ट्रक ? तो क्या मैं किसी सड़क के किनारे···? ओफ्फ···!"

भक्क से अँधेरे में बिजली का बल्ब क्षण भर के लिए जिस तरह जलकर बुझ जाता है, उसी तरह उसे कुछ याद आया, लेकिन वह उस आकस्मिक कौंध के रूप में आयी हुई क्षणिक स्मृति को ठीक से पकड़ नहीं पाया। इतना उसे ज़रूर लगा कि थी वह कोई खौफनाक चीज़। फिर भी उसे अपनी चेतना पर विश्वास नहीं हुआ। "ऐसा नहीं हो सकता।" उसने अपने आपको फिर सपने में ग़ाफिल मानने की 'कोशिश' की। उसे लग रहा था कि थोड़ी देर पहले कोई भयंकर दृश्य देखा है, लेकिन उसे ठीक-ठीक याद करने की इच्छा के बावजूद उस दृश्य की भयंकरता से डरता हुआ उसे भूले रहने के लिए ही प्रयत्नशील है।

तभी उसे अपने ऊपर आसमान में एक चील मँडराती हुई दिखायी दी। धूप ने उसे सुनहरे रंग में रंग दिया था। "सुनहरे रंग में चील ? ऐसा नहीं हो सकता।" उसने फैसला-सा किया। उड़ती हुई चील पर धूप का दिखना ? नहीं, यह सम्भव नहीं है। लेकिन अभी कुछ याद तो आया था ? क्या ? क्या था वह ?"

सूनी सड़क पर दौड़ती हुई जीप···

"हाँ, जीप को दौड़ते हुये देखा था मैंने—हाँ, याद आया, वे रानी को ले जा रहे थे—रानी उनकी गिरफ्त में छटपटा रही थी और चीख रही थी—उसके कपड़े—नंगी थी वह—"

स्मृति का बल्ब फिर बुझ गया। उसे फिर महसूस हुआ कि वह अभी तक अपने दुःस्वप्न से उबर नहीं पाया है। स्वप्न में उसने देखा कि एक जगह बहुत-से लोग इकट्ठे हुए हैं। खूब रोशनी है। चहल-पहल है। कहीं कुछ दिखाया जा रहा है और दर्शक मग्न होकर देख रहे हैं—"हाँ, अचानक ही रोशनी चली गयी थी और भगदड़ मच गयी थी—मुझे याद है, मैं रानी का हाथ पकड़कर भागा था, लेकिन भीड़ में भागने का रास्ता नहीं मिला था और तभी अचानक रानी चीखी थी और मुझे धक्का दे दिया था [illegible] सोचने दो, हाँ, फिर मैंने उठकर रानी को इधर-उधर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खोजना चाहा था और वह नहीं मिली थी और—नंगी औरतें चीख रही थीं और ताकतवर मर्द उन्हें पीस रहे थे—सामूहिक बलात्कार, नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता—यह सब झूठ है। बकवास है। सपना है। अपने देश में ऐसा नहीं हो सकता—"

वही मनहूस धुंध आँखों में फिर से घिर आयी। उसे फिर अपनी चेतना लुप्त होती हुई महसूस हुई। राहत-सी मिली। "नहीं, यह सब सच नहीं हो सकता। मैं स्वप्न में हूँ और उस बर्बर युग में पहुँच गया हूँ, जिसमें कभी भी किसी लुटेरे की फौज अँधेरे की तरह घिर आती थी, रक्तपात होता था, लूट मचती थी और भूखे फौजी परास्त देश की स्त्रियों पर सामूहिक बलात्कार करते थे—लेकिन अपनी कार से मैंने उस जीप को दौड़ाते हुए देखा था—फिर एक जगह रुकते हुए—मैंने अपनी कार रोकी थी और रानी को उन बदमाशों के चंगुल से छुड़ाने के लिए उतरा था और वे भी उतरे और—अब तक तो वे जीप लेकर भाग गये होंगे—रानी उस समय नंगी थी और चीख रही थी—मेरी कार कहाँ है ?"

उसने पूरा ज़ोर लगा कर उठने का प्रयत्न किया। चीखना भी चाहा। लेकिन शरीर का कोई भी हिस्सा उठ नहीं रहा था और गले में कोई गाढ़ी-सी तरल चीज़ भरी हुई थी, जिसे उगलना या निगलना संभव नहीं लग रहा था। उसकी साँस घुट रही थी। एक बार फिर उसने स्वयं को अचेत होते हुए महसूस किया। अब उसे अपने ऊपर आसमान में उड़ती हुई चील दिखायी दे रही थी। रोशनी, जो कुछ-कुछ साफ हो आयी थी, फिर बुझने लगी और आँखों में आतिशबाजी के गरम फूल खिलने लगे। "यह मुझे क्या हो गया है ?" उसने दिमाग़ पर ज़ोर देकर सोचने की कोशिश की। सपना तो यह हरगिज़ नहीं है। "फिर क्या है ? फिर क्या है यह ? कोई मुझे बताता क्यों नहीं ? सब लोग कहाँ मर गये हैं !"

उसने तड़पकर उठने की कोशिश की और उस कोशिश में वह उलट गया। उसे अपने लहुलुहान जिस्म की एक झलक दिखायी दी और उसके सारे जख्म एक साथ दहक उठे। उसे लगा कि उस पर मक्खियाँ भिनभिना रही हैं और किसी किस्म के कीड़े उसे जगह-जगह से कुतर रहे हैं—

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एकाएक आसमान में उड़ती देखी हुई सुनहरी चील के ख्याल से वह दहशत से भर उठा। वह अपना चेहरा घास में छिपा लेना चाहता था, लेकिन उलटते ही उसका मुँह खुल गया था और आँखों के करीब कोई लाल चीज़ बिखर गयी। "खून है—मेरा खून—" उसने सोचा और अपने आपको बेहद कमज़ोर महसूस करते हुए आँखें मूँद लीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घोंसले

मुझे नहीं मालूम था कि वह घोंसले बेचने की बात कहने के लिए भूमिका बाँध रहा है। कहने लगा, "आप ही बताइए चाचाजी, आखिर क्या करें इस फालतू चीज़ का ?दो पैसे भी तो कोई नहीं देता। वैसे देखिए, कितना पैसा बहाते हैं लोग। जो चीज़ें वे खरीदते हैं, क्या सब उनके काम की होती हैं ? सब ज़रूरी होती हैं ? इतने मँहगे-मँहगे शो पीस खरीदते हैं, उनसे क्या काम निकलता है उनका ? बस, लाए और घर में कहीं टिका दिया और फिर कोई आ रहा है तो उसे दिखा रहे हैं कि देखिए साहब, यह खरीदा है हमने। वैसे तो ऐसी चीज़ों की कीमत कौन आँक सकता है, अमूल्य कहिए, लेकिन देखिए लोगों को, चीज़ों की कद्र नहीं जानते। कबाड़ी-बाजारों में बेच जाते हैं। अब कबाड़ी क्या जाने इसकी असली कीमत ? दे बैठा पचास रुपये में। पचास रुपये में तो कौड़ियों के मोल समझिए। और फिर, वे कबाड़ी-बाजार से लाए हुए उस पुराने चित्र या मूर्ति या बाजे या बर्तन की तारीफ के पुल बाँधने लगते हैं। लोग देखते हैं और मुँहदेखी तारीफ करते हैं—उस चीज़ की कम, चीज़ को पचास रुपयों में कौड़ियों के मोल बताने वाले की ज़्यादा—जैसे वही सारी कलाओं का पारखी और कद्रदान हो ! लेकिन किसी को ये घोंसले दिखाओ तो कहेगा —क्या करेंगे इनका ? खूबसूरत तो हैं, इसमें शक नहीं, लेकिन एक-दो लेने से कोई फायदा नहीं—खरीदें तो सारे ही खरीदें ताकि बता सकें कि भई, देखो, हमने कितनी तरह के घोंसले इकट्ठे किए हैं, और सब के सब खरीदें तो पहले इनके लिए शो-केस बनवायें, फिर शो-केस रखने के लिए घर में जगह चाहिए। और फिर, चीज़ ऐसी नाज़ुक है कि हाथ लगते ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खराब हो जाने का डर ! बस, ऐसी ही दो-चार बातें कहेगा और चल देगा। मनोहर भाई ने बताया था कि शुक्ला साहब खरीद लेंगे, वे एक ही झक्की आदमी हैं, उनके घर में कम से कम हज़ार तरह की सीपियाँ मिल जायेंगी। सोचिए ज़रा, हज़ार तरह की सीपियाँ शुक्ला साहब ने कैसे इकट्ठी की होंगी। लेकिन उन्हें घोंसले दिखाए तो कहते हैं—यार, चीज़ थोड़ी टिकाऊ तो होनी चाहिए। तिनके ही तो हैं, आखिर कब तक रहेंगे ? और तुम बता रहे हो कि दस-पंद्रह साल तो यहीं रखे-रखे हो गए। हमारा ख्याल है, अब तो यह इस क़दर गल चुके होंगे कि हाथ लगते ही···। कहना तो उनका ठीक ही था। वाकई इनकी हालत ऐसी हो चुकी है कि हाथ लगाते ही फुस्स हो जाते हैं। ऊपर से सही-साबुत दिखायी देते हैं; लेकिन इनमें जान बिलकुल नहीं है। खुले-खुले टँगे रहे हैं, आखिर मौसम का असर तो पड़ेगा ही। बाबूजी ने ग़लती की। इन्हें दीवारों पर यों नहीं लटकाया जाना चाहिए था। लेकिन शो-केस में रखने की बात बाबूजी के दिमाग़ में आयी ही नहीं होगी—या आयी तो भी हो इतने पैसे नहीं रहे होंगे। और···"

"लेकिन उसने यह थोड़े ही सोचा होगा कि उसके मरने के बाद इन्हें बेचने की बात भी उठ सकती है ! यह तो उसको शौक था, इकलौता शौक···" मुझसे कहे बिना रहा नहीं गया। दरअसल मैं उसकी बातों से भीतर ही भीतर घुटन-सी महसूस करने लगा था और मुझे उसके दिवंगत पिता की याद आ रही थी—अपने सबसे प्यारे दोस्त रामनाथ की याद। धीरे-धीरे मुझे गुस्सा चढ़ने लगा। यह भी कोई बात हुई। अव्वल तो यह सोचना ही क्यों चाहिए कि ये घोंसले बेच दिये जायें ? तुम्हारे बाप ने इसलिए लाकर लटकाये थे कि तुम इन्हें बेचो ? ओर फिर, यह तो सोचो, इन्हें बेचने से तुम्हें क्या मिल जायेगा ? सत्ताइस घोंसले हैं, ज़्यादा से ज़्यादा कोई सत्ताइस रुपये देगा। सत्ताइस रुपयों से तुम्हारी ज़िन्दगी कट जायेगी ? एक तरफ कहते हो, ये घोंसले बाबूजी की निशानी हैं, दूसरी तरफ इन्हें फालतू चीज़ कहकर इन्हें हटा देना चाहते हो। तीसरी तरफ इनके पैसे भी उठा लेना चाहते हो। चौथी तरफ यह भी मानते हो कि ये जर्जर हो चुके हैं। मैं तो यही नहीं समझ पा रहा हूँ कि इन घोंसलों में क्या मुझे

CC-0 Agamnigam Foundation. Digitized by eGangotri. Funding: MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दृष्टिकोण क्या है !

ये सारी बातें मैं उससे कहना चाहता था, लेकिन कह नहीं पाया। पता नहीं क्यों, उस घोंसले वाले कमरे में बैठकर मुझे अजीब-सी दहशत हो रही थी। दीवारों का हल्का नीला रंग बरसों की सफाई पुताई के बिना अजब बदरंग हो गया है। पुताई शायद इसलिए नहीं करायी गयी है कि दीवारों पर टँगे घोंसले हटाने पड़ेंगे और हटाने में शायद वे टूट जायें। उसने खुद ही बताया था कि एक दिन एक घोंसला वह उतारने लगा था तो ज़रा-सा हिलते ही उसका आधा हिस्सा टूटकर नीचे गिर पड़ा था। एक दिन एक चिड़िया आकर बैठ गयी थी, उस दिन भी ऐसा ही हुआ, घोंसला टूट गया। तब से इस कमरे के रोशनदान बन्द रहते हैं और खिड़कियाँ भी कभी नहीं खुलतीं और दरवाज़े पर चिक पड़ी रहती है कि फिर कोई चिड़िया अन्दर न घुस आये—और वह स्वयं कभी भूल कर भी घोंसलों को हाथ नहीं लगाता।

उसने अपना कहना जारी रखा, "चाचाजी, मैंने तो अब यह सोचा है कि कोई खरीदार मिलेगा तो कहूँगा कि भाई साहब पैसे पहले रख दीजिए, फिर उतारिए घोंसले। टूट-फूट की जिम्मेदारी हमारी नहीं होगी।"

"ऐसा भोला कौन मिलेगा ?" मैंने कहा।

"मिल गया है।" उसने मुस्कुराते हुए बड़ी अर्थपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा, जिससे मैं लगभग बौखला उठा। और तभी मेरी समझ में आया कि उसकी अब तक की सारी बातें भूमिका मात्र थीं कि सौदा तो तय हो चुका है।

"कौन है ?" मैंने पूछा।

"अभी थोड़ी देर में आने वाला है, आप खुद ही देख लेंगे।" उसने कहा, और फिर मुस्कराया, "मैं जानता था कि कभी-न-कभी, कोई-न-कोई ज़रूर मिलेगा, चाचाजी। इसीलिए मैंने घोंसले हटाकर कमरा किराये पर नहीं दिया। अम्मा ने तो बहुत कहा कि इस बेकार के कूड़े को उतारकर सफाई करा दे और कमरा किराये पर उठा दे, मैंने इसी दिन की आशा में रोक रखा था।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उसकी बात सुनकर मैंने मन-ही-मन हिसाब लगाया, रामनाथ को मेरे

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तीन साल हो गये। तीन साल से यह कमरा किराये पर उठा होता तो—कम से कम बीस रुपये महीने भी लगाओ तो—सात सौ बीस रुपये मिले होते। चलो, और कम करो, पाँच सौ तो कहीं नहीं जाते। अब देगा कोई पाँच सौ रुपये इन जर्जर घोंसलों के ? या यह लड़का इसलिए इतना खुश है कि पाँच-सात सौ रुपये से भी ज़्यादा में···?

कमरे की बन्द हवा में मुझे फिर घुटन महसूस हुई। रामनाथ जिन्दा थे तो अक्सर उनके यहाँ जाना होता था। बैठक इसी कमरे में हुआ करती थी। खूब अच्छा लगता था। हालाँकि रामनाथ घोंसले लाने में हुए एड-वेंचर के किस्से सुना-सुनाकर बोर किया करते थे, फिर भी एक मजा रहता था। बताते थे कि आज किस तरह दफ्तर से निकलने के बाद पाँव अपने आप कब्रिस्तान या लालाजी के बगीचे की तरफ उठ गये, किस तरह बबूल के पेड़ पर घोंसला दिखाई दिया, किस तरह हाथ पाँव छीलकर, कपड़े फाड़ कर बड़ी मेहनत से घोंसला उतारा और···

एक दिन तो काफी कहा-सुनी भी हो गई थी हम दोनों में। रामनाथ ने बताया कि आज एक घोंसला उतारा तो देखा कि उसमें अंडे हैं। मन हुआ, वापस पेड़ पर टाँग दें, लेकिन घोंसला इतना सुन्दर था कि रहा नहीं गया, उसका मोह छोड़ा नहीं गया और रामनाथ अंडे पेड़ के नीचे रखकर घोंसला घर ले आये। मैंने यह सुनकर खूब गालियाँ दीं उन्हें। ऐसा भी क्या शौक कि परिंदों की दुनिया ही उजाड़ दो ! कितनी मेहनत से उन्होंने बनाया होगा और अब अंडों से बच्चों की उम्मीद कर रहे होंगे कि तुम उनकी मेहनत पर, उनकी ममता पर डाका डाल आये ! मान लो, किसी दिन तुम्हारे साथ ऐसा हो···? और रामनाथ सचमुच दुःखी हुए थे। बहुत पछताये। पता नहीं, मेरी बातों का असर था या उनको ही पश्चात्ताप था कि अगले दिन सुबह-सुबह उस घोंसले को वापस उसी पेड़ पर टाँगने गये। अंडे जहाँ रख आये थे, वहाँ नहीं थे। समझ नहीं सके कि अब क्या करें। इतने में पता नहीं कहाँ से बहुत-सी चिड़ियाँ आ गयीं और रामनाथ पर जो हमला बोला है कि बस ! और रामनाथ प्रायश्चित की धुन में न वहाँ से हिले, और न वहाँ से भागे। आखिर परिंदों को ही दया आ गयी। राम-नाथ [illegible] नहीं हुए फिर भी मैंने अपनी आँखों से देखा था कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घोंसला वहीं छोड़कर जब वे सीधे मेरे पास आये तो उनका चेहरा और गर्दन और हाथ लहूलुहान थे। बोले—शिवराम, अब मुझे कोई पछतावा नहीं है, अपने किये की सज़ा भुगत रहा हूँ।

लेकिन घोंसले का शौक फिर भी नहीं छूटा उनका। वह शौक ही क्या जो खब्त के दर्जे न पहुँचे। और रामनाथ खब्ती ही थे। सुन्दरता के प्रेमी। पर न जाने क्यों उन्हें सारी सुन्दरता घोंसलों में ही दिखायी देती थी। कहते थे—घोंसला अपने आप में कुछ नहीं है शिवराम, देखने की चीज़ तो है एक-एक तिनका चुनने की मेहनत, घर बनाने की लगन और यों ही चलताऊ ढंग से नहीं, निहायत निफ़ासत खूबसूरती से। ज़रा देखो तो, एक-एक तिनका किस तरह बिठाया गया है !

रामनाथ की बातें याद करके मैंने दीवारों पर टँगे घोंसलों की तरफ देखा, पर यह देखना मुझे अच्छा नहीं लगा। क्यों नहीं अच्छा लगा, यह तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन कोई बात थी जो मुझे बेहद बुरी लग रही थी। शायद कमरे की हवा भारी और बदबूदार थी···या शायद वहाँ का हल्का अँधेरा मुझे दबोच रहा था।···या कुछ और था जो दम घोटता-सा महसूस हो रहा था···

तभी वह घोंसलों का खरीदार आया। मोटर का हॉर्न सुनते ही रामनाथ का लड़का उठकर बाहर भागा। मैंने भी बाहर आकर देखा—चमचमाती हुई एक विदेशी कार और उसके पीछे एक टेम्पो। कार में लाल दाढ़ी वाला एक विलायती साहब बैठा था और टेम्पो में चमकदार पालिश वाले, साफ-सुथरे शीशों वाले शो-केसों के साथ दो मज़दूर। खरीदार कार से उतरा और अंग्रेज़ी में उसने रामनाथ के लड़के से कुछ बातें की। लड़का ऐसी खुशामद-सी कर रहा था कि अगर विलायती इशारा भी कर दे तो उसके कदमों में बिछ जाये। मुझ से बात करने की तो उसे फ़ुरसत ही नहीं थी। पूछा तो बोला, "बाद में आपको पूरी बात बता दूंगा चाचाजी।"

सुनकर बुरा लगा। इच्छा तो हुई कि एकदम चल दूं वहाँ से, लेकिन खड़ा देखता रहा। मज़दूर शो-केस उठाकर अन्दर लाये। विलायती ने अपने हाथों से अचक-पचक घोंसले उतारे—इतनी सफाई से कि एक भी नहीं टूटा। वहीं से वहाँ घोंसलों को शो-केस में लगी खूटियों में लटकाया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और फिर शीशे बन्द करके उठवा ले गया।

मैं चुपचाप सब कुछ अपनी आँखों के सामने होता देख रहा था, लेकिन कुछ बोल नहीं पा रहा था। रामनाथ के लड़के ने 'बाद में' कहकर मेरा मुँह बन्द कर दिया था। एक बार कमरे की खाली दीवारों को देखा तो वे बड़ी भयानक लगीं। लगा, थोड़ी देर पहले यहाँ बैठे-बैठे दम घुटने का जो एहसास हुआ था, उसका कारण कुछ-कुछ मेरी समझ में आने लगा है। स्पष्ट कुछ नहीं, पर कोई चीज़ थी ज़रूर, जिसे मैं पकड़ने की कोशिश कर रहा था।

तभी लड़के ने पास आकर कहा, "आप थोड़ी देर यहीं रहिए चाचाजी, मैं अभी आता हूँ।" और इतना कहकर वह चला गया विलायती साहब की कार में बैठकर।

उधर कार स्टार्ट हुई और इधर मुझे लगा, जैसे कमरे के खालीपन में कोई ज़ोर से हँसा है। सच कहता हूँ, इतना डर मुझे कभी नहीं लगा। फिर मुझसे वहाँ नहीं ठहरा गया।

घबराकर कमरे से निकलकर बरामदे में आया तो देखा, आँगन में पेड़ पर बहुत-सी चिड़ियाँ बैठी हैं और ज़ोर-ज़ोर से शोर मचा रही हैं। मुझे लगा, अब ये मुझपर झपटेंगीं—उसी तरह जैसे कभी रामनाथ पर झपटी थीं। और भाई, मैं तो भागा वहाँ से।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उद्धारक

कोई मजबूरी नहीं थी, फिर भी वह उनका हालचाल पूछने चला गया। बस, वैसे ही, जैसे खाली वक्त गुजारने के लिए एक सिगरेट जला ली जाती है। पीने की इच्छा नहीं होती है, अनिच्छा भी नहीं और उस समय सिगरेट अच्छी या बुरी, कैसी भी नहीं लगती है। जला लेते हैं, पीते रहते हैं, बुझा देते हैं—मालूम भी नहीं पड़ता कि सिगरेट पी थी। उन लोगों से उसके सम्बन्ध ऐसे ही हो गये हैं। शुरू में भी कोई खास बात नहीं थी—इसके सिवा कि नया-नया परिचय होने के कारण थोड़ी झेंप लगती थी। बाद में वह झेंप भी नहीं रही और उन लोगों के पास उठते-बैठते उसे ऐसा लगने लगा जैसे वह जन्म से ही उन लोगों के साथ रहता आया है और यह जान गया है कि मृत्युपर्यन्त उन्हीं लोगों के साथ रहना भी है। हालाँकि इस बात से उसे हल्की-सी कोफ्त भी होती थी कि वह उनमें इतना शामिल हो गया है, लेकिन उसे शामिल होना जरूरी लगता था; क्योंकि वह स्वयं से भी यह तथ्य छिपाये रखना चाहता था कि उसका कोई नहीं है। या शायद अपनी टुच्ची-सी नियति को दूसरों की नियतियों से जोड़कर कोई नया काम करने के सपने देखता था।

उन्होंने ताश फेंटना शुरू किया ही था कि वह पहुँचा और उनके सामने रखे हुए गिलासों को देखकर उसकी इच्छा हुई कि वापस लौट जाये। जब वे पी रहे होते हैं तो कुछ और हो जाते हैं, कुछ और तरह से बोलने लगते हैं, और उसे खासी उलझन होती है। वह तय नहीं कर पाता है कि ये लोग होश में होने पर सही होते हैं या नशे में होने पर। ऐसी-ऐसी बातें करेंगे, जैसे सारी दुनिया का बोझ इन्हीं के कन्धों पर लदा हो और ये बेचारे पूरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Fonding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ईमानदारी से उस बोझ को सही जगह पहुँचा देने की कोशिश में हों ! वह लौटने लगा, लेकिन श्यामसुन्दर ने उसे देख लिया और पुकार लिया, "आओ भई, बड़े मौके से आये हो !"

दूसरे दोनों ने गर्दन मोड़कर उसे देखा और मुस्कराये। बद्री ने कहा, "हेलो पार्टनर !" और सिनहा ने कहा, "आ···इए सुदर्शन भाई !" ऐसा लगा, जैसे सिनहा को अभी से चढ़ गयी है। उसे जब चढ़ जाती है तो वह शब्दों को लम्बा खींच-खींचकर बोलने लगता है। फिर बोला, "लाओ बद्री, सुदर्शन भाई के लिए भी एक गिला·· स लाओ।"

नहीं-नहीं, सुदर्शन ने कहना चाहा, लेकिन जानता था कि उसकी चलेगी नहीं। और उन लोगों के आग्रह पर जब वह पीने लगेगा तो कहेंगे, "सीधे-सीधे मान जाओ तो क्या हर्ज़ है ? बेकार नखरे करते हो···"

बद्री उठकर अन्दर गिलास लेने गया तो श्यामसुन्दर ने हाथ के पत्ते गड्डी में मिलाते हुए कहा, "खेल छोड़ो सिनहा, सुदर्शन भी आ गया है, इससे भी बात कर लेते हैं।"

"कर लो···" सिनहा ने भी पत्ते फेंक दिये।

"ऐसी क्या बात करनी है ?" सुदर्शन ने पूछा।

"बात यह है कि एक औरत का उद्धार करना है।" श्यामसुन्दर ने बहुत संक्षेप में सब कुछ बता देने के लिए सीधे सुदर्शन की आँखों में झाँका, "वह अपने मर्द से तंग आयी हुई है। वह साला निठल्ला है, कुछ कमाता-धमाता नहीं, लेकिन बीवी की कमाई पर ऐश करता है, नेता बना फिरता है हरामी। शहर की नेतागीरी कैसी है, यह तो तुम जानते ही हो, टके सेर कोई नहीं पूछता बाहर, लेकिन घर आते ही शेर हो जाता है, गालियाँ देता है, मारपीट करता है···यहाँ तक तो ठीक, कोई अजीब बात नहीं है, चलता है, लेकिन अब साले के दिमाग़ में यह वहम घुस गया है कि बीवी का किसी और से याराना है और उसका होने वाला बच्चा किसी और का है···"

"तो ?"

"तो क्या ! अब इसी बात को लेकर मारपीट करता है और कहता है कि अगर बच्चा पेट नहीं गिरायेगी तो वह उसे जिन्दा नहीं छोड़ेगा। कल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने घर में बन्द करके बेचारी को ऐसा मारा कि सारा जिस्म सूज गया है। सुबह मेरे पास खबर भेजी कि जैसे भी हो, मुझे इस राक्षस के चंगुल से छुड़ा लो···यह देखो···" कहते हुए श्यामसुन्दर ने कोट की ऊपरी जेब में दो उँगलियाँ डाल कर एक कागज़ खींचा और सुदर्शन की ओर बढ़ा दिया।

सुदर्शन ने हाथ बढ़ाया कि बद्री आ गया। बोला, "पढ़ो, सुदर्शन, पढ़ो। हजूरे आलम श्यामसुन्दर के पास एक अबला की फरियाद आयी है, लिखा है कि हे किशनजी महाराज, द्रोपदी की लाज लुटती है, फौरन उद्धार करने आओ।"

"तू अपनी बकवास बन्द करेगा कि नहीं ?" श्यामसुन्दर ने डाँटा।

"एकदम बन्द ! लीजिए गिलास हाजिर है।"

श्यामसुन्दर ने 'छोड़ो, क्या पढ़ोगे' कहते हुए कागज़ वापस उसी जेब में ठूंस लिया और मेज़ के नीचे रखी हुई बोतल उठाकर चौथे गिलास में शराब उँडेलने लगा। सुदर्शन को यह सब अजीब तमाशे जैसा लगा। बोला, "आखिर है कौन, इतना तो बता दो।"

"बतायेंगे बाद में, पहले आप यह बताइए कि क्या हम लोगों को किसी औरत के निजी मामले में दखल देना चाहिए ?" बद्री ने तेज़ी से कहा, "पुलिस-केस वह बनाना नहीं चाहती। डरती है कि पुलिस के पास गयी तो गयी काम से। बात भी ठीक है। लेकिन वह तो जा सकता है पुलिस में ! नेता-टाइप आदमी है, झूठी-सच्ची गवाही जुटा कर फँसा दे कि ये लोग मेरी बीवी को किडनैप कर ले गये हैं, तो ?"

"तो क्या उसके मुँह नहीं है ? वह नहीं बोलेगी ?" श्यामसुन्दर को गुस्सा आ रहा था।

"छोड़िए ! बोल सकती तो अब तक मजे में पुलिस-केस बन सकता था !"

"अच्छा, तुम चुप भी रहोगे ?" श्यामसुन्दर ने ज़ोर से कहा तो बद्री चुप हो गया। सुदर्शन की ओर ताजा भरा हुआ गिलास सरकाया और अपना गिलास उठाकर पीने लगा। श्यामसुन्दर सुदर्शन की ओर मुड़ा, "वैसे हमने तो फैसला कर लिया है कि अभी जाकर उसे ले आते हैं, पर तुम अपनी भी राय दे दो, क्या ऐसी औरत की मदद नहीं की जानी चाहिए ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ज़रूर की जानी चाहिए···" सुदर्शन ने मुँह खोला, लेकिन बद्री ने फिर बात लपक ली, "मगर आगा-पीछा सोच कर ! उसका भी उद्धार न हो और तुम भी बँधे-बँधे फिरो, इससे क्या फायदा ? वह ऐसा आदमी नहीं है कि सस्ते में छोड़ देगा ! और फिर यह क्यों नहीं सोचते कि मर्द तो मारपीट करता ही आया है, काम का हो या निठल्ला ! औरत को तो सहना ही ··"

"यू···शटअप !" श्यामसुन्दर ने ज़ोर से अपना गिलास मेज़ पर पटका। गिलास की शराब छलकी और उसका हाथ गीला हो गया। रूमाल निकालते हुए श्यामसुन्दर अपने हाथ को इस तरह झुलाये रहा जैसे हाथ जख्मी हो गया हो और उससे खून टपक रहा हो। रूमाल से हाथ पोंछते हुए बोला, "हाँ सुदर्शन, तुम बोलो, हमें उसे यहाँ ले आना चाहिए ?"

"पहले मुझे यह तो बताओ कि वह है कौन ?"

"कोई भी है, इससे तुम्हें क्या मतलब ? तुम तो यों समझो कि कोई भी एक स्त्री है और एक पुरुष उसपर अत्याचार करता है, स्त्री तुमसे मदद चाहती है और तुम मदद करने की हैसियत में भी हो, तो क्या तुम मदद नहीं करोगे ?"

"ज़रूर करूँगा, पर···" सुदर्शन बद्री की कही हुई बातें दोहराने वाला था।

"पर-वर कुछ नहीं। यों सोचो कि एक देश की जनता अपने शासक के अत्याचारों से दुःखी है और अपने देश के नौजवानों से अपील करती है कि वे उसे अन्यायी शासन से मुक्ति दिलायें, तो नौजवानों का कर्त्तव्य क्या होना चाहिए ? टु बी मोर डायरेक्ट, उन्हें क्रांति करनी चाहिए या नहीं ?"

"ज़रूर करनी चाहिए।" किसी तरह सुदर्शन बोला। उसे लगा कि यदि उसने श्यामसुन्दर की बात का समर्थन नहीं किया, तो श्यामसुन्दर अपने हाथ का गिलास उसके सिर पर फोड़ देगा। उसे यह भी लगा कि जैसे श्यामसुन्दर ने डरा-धमकाकर जबरदस्ती उससे अपनी बात का समर्थन ले लिया है, उसे ढंग से बोलने ही नहीं दिया है कि वह अपनी पूरी बात कह सके। उसने यह भी महसूस किया कि श्यामसुन्दर निश्चय तो पहले ही कर चुका है कि उस औरत को ले आना है, अब तो वह महज पुष्टि करना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चाहता है अपने निर्णय की। बद्री असहमत है ही, सिनहा सहमत हो भी गया होगा तो नशे का बहाना बनाकर उसे असहमत होते देर नहीं लगेगी। कोई जोखिम दिखाई दी तो सुदर्शन भी उन दोनों के साथ हो जायेगा। जाए अकेला श्यामसुन्दर। ले आये औरत को। करे क्रांति !

"तो जल्दी से इसे पीकर खतम करो।" श्यामसुन्दर ने अपना गिलास खाली कर दिया।

सुदर्शन, बद्री और सिनहा ने चौंककर उसकी ओर देखा। बद्री ने कहा, "आप जाइए, मैं तो नहीं जाऊँगा। आप लोग बड़े आदमी हैं, किसी चक्कर में फँस भी गये तो निकल आयेंगे, नहीं भी निकल पाये तो कोई बात नहीं — छड़े-छाँट लोग हैं, पर मुझे तो अपने बाल-बच्चों की फिक्र करनी है। मेरे लिए तो एक दिन की तनख्वाह कटने का मतलब होता है कि···"

"बद्री, तुम जाओ यहाँ से···" श्यामसुन्दर ने कहा, "जाओ ! गेट आउट !" उसकी आँखें क्रोध से धधक रहीं थीं—ऐसा क्रोध जैसे बद्री बरसों से दोस्त बनकर श्यामसुन्दर के सारे रहस्य मालूम करता रहा हो और अचानक विश्वासघाती सिद्ध हो गया हो। श्यामसुन्दर का वश चलता तो शायद बद्री को गोली मार देता।

बद्री एक झटके से उठ खड़ा हुआ और श्यामसुन्दर से भी ज़्यादा तमतमाया हुआ चेहरा लेकर चल दिया। कमरे के दरवाज़े तक पहुँचकर एक बार मुड़ा, बोला, "जा रहा हूँ श्यामसुन्दर, लेकिन इतना याद रखना कि दूसरों के मामले में सिर घुसाने का नतीजा अच्छा नहीं होगा।" और वह तेज़ी से बाहर निकल गया। श्यामसुन्दर ने गुस्से में आकर अपना खाली गिलास फेंककर मारा था लेकिन वह बद्री को लगा नहीं, दरवाज़े की चौखट से टकराकर फर्श पर गिरा और टूट गया। काँच टूटने की आवाज़ सुदर्शन के कानों में आकर इस तरह भीतर उतर गयी, जैसे ग्लास-कटर उसके भीतर के किसी शीशे को काटता चला गया हो।

थोड़ी देर चुप्पी छायी रही। श्यामसुन्दर अपना सिर पकड़कर बैठ गया फिर धीरे से बोला, जैसे सुबक रहा हो, "हर आदमी मुझे ग़लत समझता है। इतने-इतने पुराने दोस्त भी···" फिर कुछ क्षण चुप रहकर उसने कठोर स्वर में कहा, "तुम दोनों भी फैसला कर लो कि तुम्हें क्या करना है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देना है कि नहीं ?"

सिनहा ने कहा, "मैं तो तैयार हूँ। आ···प कहें तो जहन्नुम में भी जा सकता हूँ।"

"और तुम ?" श्यामसुन्दर ने सुदर्शन से पूछा।

"चलो।" सुदर्शन ने कहा और महसूस किया कि वह फँस गया है। अच्छा होता यदि वह भी बद्री के साथ चला जाता। उसने यह भी महसूस किया कि श्यामसुन्दर में दूसरों को प्रभावित करने की ग़जब की ताकत है—तभी तो वह मन से एकदम भाग जाना चाहते हुए भी उसके साथ जाने को तैयार हो गया है। शायद सिनहा भी इसीलिए। लेकिन यह तो ग़लत बात है। हमें इस तरह आत्मसमर्पण नहीं कर देना चाहिए। कुछ सोचकर बोला, "लेकिन अब तो बता दो कि पूरा मामला क्या है।"

श्यामसुन्दर ने फिर अपनी दो उँगलियाँ कोट की ऊपरी जेब में डालीं और वही कागज़ निकालकर सुदर्शन की ओर बढ़ा दिया। सुदर्शन ने काँपते हाथों से कागज़ की तहें खोलीं और उसपर पेंसिल से घसीटी हुई पंक्तियाँ पढ़ डालीं। नीचे किसी का नाम नहीं था। फिर भी सुदर्शन समझ गया। बोला, "तो यह वही है ?"

"हूँ।" श्यामसुन्दर ने कहा।

"तब तो कुछ न कुछ ज़रूर करना चाहिए। लेकिन क्या वह अपने आप नहीं आ सकती ?"

"वह मकान को बाहर से ताला लगा गया है। पड़ोस का लड़का हमें खबर देने को तो तैयार हो गया, लेकिन बाहर से ताला तोड़ने की या चाभी लाकर खोलने की हिम्मत नहीं पड़ी।"

"तो हमें चलकर पहले ताला तोड़ना होगा ?"

"खुल भी तो सकता है, चा···बियों का गुच्छा ले चलो एक।" श्यामसुन्दर ने सुझाव दिया।

"और मान लो, हम ताला तोड़ या खोल रहे हों और वह आ जाये, या पुलिस ही आ जाये ?" सुदर्शन ने शंका उठायी।

"मैंने तरकीब सोच ली है। ऐसा करेंगे कि पहले तो पत्थर मार कर [illegible] फिर अँधेरे में तुम दोनों आने-जाने वालों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर नज़र रक्खोगे और मैं ताला तोड़कर अन्दर चला जाऊँगा। कोई आता दिखे तो तुम सीटी मार देना···"

"ठीक है।" सुदर्शन तैयार हो गया। वह जगह उसकी देखी हुई थी। गंदे नाले की पुलिया से आगे चलकर इमली का पेड़ है और उस पेड़ के नीचे ही उस मकान का दरवाज़ा। सड़क का बल्ब फोड़ दिया जाये तो खूब अँधेरा हो जायेगा। मकान के दोनों ओर दो छोटी गलियाँ हैं। सफल हो गये तो हम बायीं ओर की गली में से होकर श्यामसुन्दर के मकान के पिछवाड़े आ जायेंगे—सड़क हालाँकि रात में सुनसान रहती है। लेकिन सड़क से उसे लाना ठीक नहीं रहेगा। पीछे के दरवाज़े से ही ठीक है···

श्यामसुन्दर उठा। अन्दर गया और थोड़ी देर बाद गले में मफलर डाले हुए लौटा। आते-आते उसने अपना दाहिना हाथ पैंट की जेब से बाहर निकाला तो सुदर्शन को लगा कि उसने कोई भारी चीज़ जेब में रख ली है—लम्बा चाकू या शायद रिवाल्वर। सुदर्शन और सिनहा अपने-अपने गिलास खाली कर चुके थे। और दोनों ने सिगरेटें सुलगा ली थीं। श्यामसुन्दर को आते देख वे खड़े हो गये। हिम्मत बटोरने की कोशिश में या आगामी खतरे को भूलने के लिए सुदर्शन ने कहा, "तुम लोग ताश खेल रहे थे ? हद है यार ! इतने महत्त्वपूर्ण काम को जाने से पहले तुम लोग ताश खेल रहे थे !"

"वह साला बद्री···" श्यामसुन्दर बोला, "उसे सिर्फ ताश के पत्तों पर दाँव लगाना और चाल चलना आता है।"

"दिमाग़ी अय्याश है।" सिनहा ने कहा।

"मरने दो साले को···चलो।" श्यामसुन्दर सामने वाले दरवाज़े की ओर बढ़ने लगा।

"इधर से नहीं, पीछे से।" सुदर्शन ने उसे टोका।

"क्यों ? इधर से क्या है ?" श्यामसुन्दर ने चौंकते हुए पूछा।

सुदर्शन ने आँख मारी, "इधर काँच बिखरा पड़ा है, इधर से आयीं और उनके पाँव में चुभ गया, तो ?"

श्यामसुन्दर मुस्करा दिया। सुदर्शन का कंधा थपथपा कर फर्श पर [illegible] बाहर के दरवाज़े तक गया और उसे अन्दर से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बन्द करके लौट आया। फिर पीछे के दरवाज़े से तीनों बाहर निकले। उधर गंदा नाला बहता था। उस समय नाले में अँधेरा भरा हुआ था, लेकिन बदबू हमेशा की तरह अब भी आ रही थीं।

पुलिया पार करके वे मकानों की उस कतार के सामने आ गये, जिसमें वह मकान था। शायद तीनों को ही ऐसा लग रहा था कि वे बहुत बड़ा एडवेंचर करने जा रहे हैं। रात बहुत नहीं हुई थी, यही कोई साढ़े नौ बजे थे, लेकिन ठंड और कोहरे के कारण सन्नाटा छाया हुआ था। सड़क-बत्तियों की रोशनी भी अपने में सिमटी जा रही थी। इमली का पेड़ पास आया तो श्यामसुन्दर ने सुदर्शन का हाथ दबाते हुए कहा, "लो, वहाँ का बल्ब तो पहले से ही खराब है!"

"अवर स्टार्स आ···र विद अस!" सिनहा बोला।

कुछ कदम चलने के बाद ही वे इमली के पेड़ के नीचे पहुँच गये। वहाँ अँधेरा खूब गहरा था। श्यामसुन्दर ने फुसफुसाते हुए कहा कि सिनहा और सुदर्शन आस-पास की दोनों गलियों के सामने खड़े हो जायें और सड़क के साथ-साथ गली का भी ध्यान रखें। सिनहा और सुदर्शन ने लगभग एक साथ कहा, "बेस्ट ऑफ लक!"

श्यामसुन्दर 'थैंक यू' कहता हुआ अँधेरे में गुम हो गया। सिनहा और सुदर्शन मकान के आस-पास वाली दोनों गलियों के सामने चौकसी करने खड़े हो गये। अँधेरा इतना था कि अब तीनों में से कोई भी एक-दूसरे को नहीं देख पा रहा था।

थोड़ी ही देर बाद श्यामसुन्दर की हल्की-सी सीटी सुनायी दी। सुदर्शन और सिनहा फुर्ती से उसके पास पहुँचे।

"ताला खुला हुआ है।" श्यामसुन्दर ने धीमे स्वर में कहा, लेकिन उसका स्वर भयंकर था।

"सुनो!" उसने बायीं ओर की गली के उसपार से आते हुए शोर की ओर ध्यान दिलाया। उधर झगड़ा हो रहा था। बहुत-सी आवाज़ों के बीच एक आवाज़ उस स्त्री के पति की थी, जिसे कुछ लोग पीट रहे थे। वह 'बचाओ-बचाओ' चिल्ला रहा था। दूसरी आवाज़ उस स्त्री की थी, जिसके उद्धार के लिए लोग आये थे। वह न जाने कब और कैसे सड़क

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर निकल गयी थी और चंडी की तरह बाल खोले हुए खड़ी हुई चीख रही थी।

"अब ?" सुदर्शन ने पूछा।

"चलो, मरने दो।" श्यामसुन्दर ने कहा और दोनों मित्रों के कंधों पर हाथ रखे हुए सड़क की ओर बढ़ने लगा। फिर न जाने एकाएक उसे क्या सूझा कि वह दाहिनी ओर मुड़कर अँधेरी गली में चलने लगा। उसके दोनों हाथ शिथिल और भारी होकर दोनों मित्रों के कंधों पर अब भी रखे हुए थे और वे तीनों अँधेरे में अन्दाज़े से चलते हुए उस लम्बी गली को पार कर रहे थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रोज़ की तरह

"आइए ! आइए ! देखिए, विज्ञान का चिमत्कार ! सैंस का जादू ! सोलै साल की लड़की किस तरै पिघल जाती है, कि रूप-जवानी-जोवन सब गल जाता है, कि सोलै साल की लड़की हड्डियों की ठठरी रै जाती है··· आइए ! शो शुरू होने वाला है। टिकट का दाम सिरफ बारै नये पैसे ! बारै नये · बारै नये···बारै नये···जल्दी कीजिए। देखिए विज्ञान का चिमत्कार···सैंस का जादू···"

वही लड़का चीख रहा है। उसने मुझे देख लिया है। देखकर मुस्कराया है। पहचान रहा है कम्बख्त ! जल्दी से आगे बढ़ जाना चाहता हूँ कि उसकी आवाज़ का हाथ मुझे पकड़ लेता है, "आप किदर चल दिये भाई-साब ? आप तो हमारे परमालिंट गाहक हैं ! आइए···"

मैंने घबराकर चारों ओर देखा है—आसपास कोई परिचित तो नहीं ? सुने तो क्या सोचे ! सोचेगा—अच्छा ! तुम यहाँ के परमानेंट ग्राहक हो। यानी रोज़ आते हो।

वैसे सच यही है कि मैं इस प्रदर्शनी में रोज़ ही आ मरता हूँ और इस 'विज्ञान के चिमत्कार' वाले तमाशे को भी देख ही लेता हूँ। अकसर दोपहर के समय। दोपहर को जब नीलू पढ़ाकर स्कूल से लौट आती है, और अम्मा किसी न किसी बात पर उससे लड़ लेती हैं, और हम तीनों एक-दूसरे पर खीजते हुए खाना खा लेते हैं, तब मैं कोई काम ढूँढने निकल पड़ता हूँ। पहले नौकरी करता था। वह नौकरी छूट गयी। अब सारा बोझ नीलू पर आ पड़ा है। मुझे मालूम है कि अपनी नौकरी और घर के काम में पिसती हुई नीलू दिन-पर-दिन सूखती जा रही है। लेकिन मैं कुछ कर नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पा रहा हूँ। कहीं कोई काम नहीं मिलता और मैं काम की तलाश में और शाम से पहले घर न लौटने की कोशिश में वक्त काटने के लिए इधर-उधर भटकता रहता हूँ। फालतू।

शायद यह लड़का भी समझ गया है कि मैं फालतू हूँ।

लड़के पर गुस्सा आ रहा है। बदतमीज ! इस तरह किसी का अपमान करने का तुझे क्या हक़ है ? जा, मैं अब कभी नही देखूंगा तेरा शो।—यह बात सोचकर ही लगता है, जैसे ज़ोर से कहकर लड़के को सुना दी है। आगे बढ़ आया हूँ। लड़के का चेहरा नहीं देख पा रहा हूँ, लेकिन लग रहा है कि वह इस प्रकार मेरे द्वारा तिरस्कृत होने पर क्षुब्ध हो गया होगा। हो जाये, मुझे क्या ! कदम तेज़ कर देता हूँ, कहीं फिर न पुकार बैठे, "भाई-साब, आप किदर चल दिये, आप तो हमारे परमालिंट गाहक हैं···"

ग्राहक ! क्या खरीदता हूँ मैं ? टिकट ही तो !

पाँच मिनट के उस तमाशे का टिकट। नये तख्तों से बनी खुरदरी बैंच पर बैठे, अँधेरा हुआ, पर्दा खुला···पर्दे के भीतर शीशे की एक दीवार होती है और एक बल्ब जलता रहता है, जिसकी रोशनी में हरी साड़ी पहने हुए वह 'सोलै साल की लड़की' दिखायी देती है · पान चबाती हुई। पान से रंगे होंठों से मुस्कराती हुई वह 'पिघलने वाली लड़की'···काँच की दीवार के उस पार रोशनी धुँधलाने लगती है। लड़की के शरीर पर हड्डियाँ उभरने लगती हैं, फिर हड्डियाँ ही हड्डियाँ रह जाती हैं। कंकाल खूब स्पष्ट हो जाता है। एक-दो क्षण वह उसी स्पष्टता में ठहरा रहता है और फिर वह भी धुँधलाने लगता है। रोशनी धीरे-धीरे बढ़ने लगती है और जिस तरह फिल्म के डिजाल्व होते हुए दृश्य में से दूसरा दृश्य निखरकर उभर जाता है, उसी तरह वह लड़की फिर 'सजीव' हो उठती है। वही हरी साड़ी, वे ही पान से रंगे हुए होंठ, होंठों की वही मुस्कराहट···फिर वह हाथ जोड़कर नमस्कार करती है और पर्दा गिर जाता है।

पर्दा गिर जाता है तो नालीदार टीन और बल्लियों से बना वह 'हाल' फिर से रोशन हो जाता है। तब नये तख्तों से बनी उस खुरदरी बैंच से उठ जाना होता है। उठकर बाहर चले आना होता है। और बाहर फिर वही लड़का चीखता हुआ मिलता है, 'आइए ! आइए ! विज्ञान का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चिमत्कार ! सैंस का जादू···" तब पता नहीं क्यों, मैं नीलू को इस पिघलने वाली लड़की के साथ सोचता हूँ।

सोचता हुआ आगे निकल आया हूँ, जहाँ लाउड-स्पीकर पर एक साथ बहुत-से लोगों के खिलखिलाकर हँसने की आवाज़ें आ रही हैं। वे लगातार हँसे जा रहे हैं। सब तरह की हँसी—मर्दानी, जनानी, बचकानी हँसी।

मुझे मालूम है, जिस तंबू से हँसी की ये आवाज़ें आ रही हैं, वहाँ लोग नहीं हँस रहे हैं। लोग कहीं भी इतनी देर तक हँसते नहीं रह सकते हैं। मशीन हँस रही है। मुझे मालूम है, टिकट बेचने वाले के पास ही हँसी का रिकार्ड बजाया जा रहा है।

पहले दिन इस हँसी ने मुझे बहुत प्रभावित कर लिया था ! तंबू के बाहर मैंने लिखा देखा था—हँसी के गोलगप्पे ! और इस हँसी को सुनकर गोलगप्पों के लिए उत्सुक हो गया था। यहाँ भी टिकट 'बारै नये' का ही था, लेकिन टिकट लेते समय हँसी का रिकार्ड बजता हुआ देखकर लगा था कि टिकट बेचने वाला धूर्त है और उसने मुझे ठग लिया है···कुछ-कुछ वैसा ही अनुभव हुआ था, जैसा शादी का सार्टिफिकेट लेकर नीलू के साथ कोर्ट से बाहर आते समय हुआ था। दोस्त लोग हँस रहे थे उस समय, शायद लोगों पर, जो हमारी शादी की बात सुनकर अब सिर्फ हाथ मलकर रह जाने वाले थे···फिर भी मैं हँसी के गोलगप्पों से अपने बारह पैसे वसूलने अंदर चला गया था। अंदर जाकर मुझे धक्का-सा लगा था। मैंने सोचा था, बहुत न सही, चार-छह लोग तो हँस ही रहे होंगे, लेकिन वहाँ मेरे सिवा और कोई नहीं था। और मुझे उन आईनों के बीच अकेला छोड़ दिया गया था, जिनमें से एक में भी मेरी शक्ल सही-सही नहीं दिखती थी। शक्लें वे मेरी ही थीं, लेकिन सारे आईनों में विकृत। मुझे गोलगप्पे वालों पर बहुत गुस्सा आया था। शरीर काँप गया था। पता नहीं गुस्से से या घृणा से या भय से···हाँ, भय से। उन विकृतियों में मैं अपने आपको भी 'झेल' नहीं पा रहा था। हँसी मुझे बिलकुल नहीं आयी थी और मैं बाहर भाग आया था···

अचानक ख्याल आता है, वह 'सोलै साल की पिघलने वाली लड़की' इन आईनों में दिखायी देने पर क्या ककोल से भी भयानक लगेगी ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन मुझे अपने इस ख्याल पर गुस्सा आ जाता है। मेरा शरीर आज भी काँप गया है। पता नहीं, गुस्से से या घृणा से या भय से।

सामने एक फटीचर मोटर-साइकिल फटफटा रही है। क्रिकेट के खिलाड़ियों की-सी टोपी लगाये, गले में रूमाल बाँधे, चौदह-पंद्रह की उम्र का एक लड़का मोटर-साइकिल पर सवार है। मोटर-साइकिल चल नहीं रही है, चलने का आभास दे रही है। लड़के का रूमाल और खाकी वर्दी देखकर लगता है, वह बहुत मज़बूत है। लेकिन उसका छोटा-सा दुर्बल चेहरा अपनी सुर्खी और कोमलता के बावजूद कुम्हलाया हुआ लगता है। उसके होंठ सूख रहे हैं। वह धीरे-धीरे हाँफ रहा है। उसे देखकर मुझे सतीश की याद आती है—अपने छोटे भाई की, जो पिछले साल सेना में चला गया है।

"आइए ! मौत का खेल !"

मोटर-साइकिल पर बैठा हुआ लड़का अचानक बहुत ज़ोर से चिल्ला उठा है और चौंककर पीछे हट जाने पर मुझे लगा है कि मैं उसे बहुत नज़-दीक से देख रहा था। बहुत नज़दीक से देखना किसी को उत्तेजित कर देने के लिए काफी होता है। मैंने उसे उत्तेजित कर दिया है, यह सोचकर मैं खुश हो गया हूँ। उसके पास से हट गया हूँ और सोचने लगा हूँ कि वह 'मौत के कुएँ' में मोटर-साइकिल चलाकर दूर से ही कितनों को उत्तेजित कर देता है !

दो बज गये हैं। मैं निरुद्देश्य इस प्रदर्शनी में घूम रहा हूँ। अकेला नहीं हूँ। कुछ और लोग भी हैं, लेकिन कम हैं। वे इधर-उधर कुछ देखते-खरीदते घूम रहे हैं। दिखाने और बेचने वालों में भी इस समय अधिक उत्साह नहीं है। शायद वे समझ रहे हैं कि इस समय वे ही लोग आये हैं, जो फालतू हैं। 'असली' दर्शक तो शाम को आएँगे···तब यहाँ का रंग ही कुछ और होता है। रोशनी की जगमग और चहल-पहल, हर तरह के मर्द, रंग-बिरंगी औरतें और बच्चे···एक शाम नीलू मुझे खींच लायी थी प्रद-र्शनी देखने-दिखाने, और मैं डर रहा था कि कोई परिचित-अपरिचित मुझे बार-बार यहाँ आने के लिए टोक न दे, मुझसे कुछ पूछ न ले···

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दाहिनी ओर तीन-चार लड़के छल्ला फेंक रहे हैं, विद्यार्थी हैं शायद।

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं उनके पास खड़े होकर उनका खेल देखने लगा हूँ और छल्ले वाला मुझे भी अपना 'ग्राहक' समझकर मेरे हाथ में दस छल्ले थमा गया है। नहीं चाहते हुए भी मैं पचास पैसे देकर उन लड़कों में शामिल हो गया हूँ। सामने की लम्बी टेबल पर बिछे सफेद कपड़े पर करीने से अलग-अलग कई चीज़ें रखी हुई हैं—सिगरेट का पैकेट, साबुनदानी, प्लास्टिक का गिलास, रबड़ की गुड़िया, ताशों की गड्डी, शीशा और कंघा और···सब देखकर लगता है, मेरे काम की कोई चीज़ नहीं है। हो भी, तो उसके लिए छल्ला क्यों फेंका जाये ? खरीदी नहीं जा सकती ? यह सोचकर मैं भी प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि कब उन लड़कों के छल्ले पूरे हों और मैं आगे बढ़ कर 'किस्मत आजमाना' शुरू करूँ।

"रिबन ! रिबन ! वाह बेटे, ले जाओ, अपनी 'उस' को दे देना !"

बाल बाँधने के रिबन का रोल एक लड़के के छल्ले में आ गया है। लड़का झेंप रहा है, कुँवारा है अभी। छल्ले वाले ने रिबन-रोल उठाकर उसके हाथ में पकड़ा दिया है। लड़के के लाल हुए चेहरे से लगता है, वह या तो उसे फेंक देगा या रो पड़ेगा।

लड़के ने सचमुच ही रिबन-रोल टेबल पर फेंक दिया है और बाकी के छल्ले भी फेंक कर अपने साथियों को गालियाँ देता हुआ चल दिया है। उसके साथियों की हँसी के बीच भी मैंने उसकी रुआँसी आवाज़ सुनी है, उसने कहा है, "तुम अच्छी तरह जानते हो, मेरी कोई 'वो' नहीं है।"

"चलिए, आप आइए।" छल्ले वाले ने मुझसे कहा है और मैं अंधाधुंध छल्ले फेंकने लगा हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरे छल्ले में कोई ऐसी लज्जास्पद चीज़ आ जाये और मुझे झेंपना पड़े···वह रिबन-रोल मेरे छल्ले में आ गया तो ? तो उसका मैं क्या करूँगा ? नीलू को दूँगा जाकर तो कहेगी, "किसने कहा था तुमको रिबन लाने के लिए ? बेकार ही पैसे बिगाड़े। कितने का है ?"···और तब मेरे मुँह पर एक बात आते-आते रह जायेगी, "तुम्हारे पैसे खर्च कर रहा हूँ, इसलिए नाराज़ हो रही हो ?"···नहीं मुझे यह रिबन-रोल मिल गया तो मैं उस पिघलने वाली लड़की को देखने चला जाऊँगा और हाल से बाहर आते समय इसे बेंच पर छोड़ आऊँगा। शायद उसे मिल जाये और वह खुश हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन मेरे हाथ के सब छल्ले समाप्त हो गये हैं और मुझे कोई चीज़ नहीं मिली है। मैंने कोई खास चीज़ नहीं चाही है। फिर भी कुछ भी नहीं मिलने पर उदास हो गया हूँ। यह उदासी कुछ-कुछ वैसी ही है जैसी पिघलने वाली लड़की का ढाँचा देखने के बाद छा जाती है। या वैसी, जैसी, नीलू के तनख्वाह वाले दिन अपनी बेकारी की बात सोच कर छा जाती है। या वैसी, जैसी अम्मा को हर वक्त सतीश की बात करते देख कर छा जाती है···अम्मा मन से हम दोनों के पास एक पल को भी नहीं रहना चाहती हैं, फिर भी रहे जा रही हैं···

छल्ले वाले के सामने आत्म-विद्या-कैम्प लगा हुआ है, जहाँ एक वृद्धा आत्मा-परमात्मा के रहस्य समझाया करती है।

पिघलने वाली लड़की को देखने के बाद उदास होता हूँ तो इसी कैम्प में चला जाता हूँ···लेकिन इस समय कैम्प खाली पड़ा हुआ है। वृद्धा कहीं भी दिखायी नहीं दे रही है। कैम्प की कनात की दीवारों पर लगे हुए वे सारे चित्र दोपहर की नींद में ऊँघ रहे हैं, जिनके अर्थ उस वृद्धा ने बार-बार समझाये हैं और मैं एक बार भी नहीं समझा हूँ। फिर भी जब मैं पहुँच जाता हूँ, वह मुझे समझाने लगती है। शायद उसे मेरी शक्ल याद नहीं रहती है। शायद यह बुढ़ापे के कारण है। अम्मा को भी तो कोई बात याद नहीं रहती। कितनी बार उन्हें समझाया है कि नीलू से झगड़ा मत किया करो। देख रही हो, वह कितना सहती है! अपनी तरफ से सारे संबंध उसने काट दिये हैं और अब अकेली अपने दम पर गृहस्थी चला रही है, कोई और होती तो·· लेकिन अम्मा को यह बात कभी याद नहीं रहती।

आत्म-विद्या-कैम्प खाली पड़ा है, फिर भी मैं उसमें चला जाता हूँ। बाहर की धूप से यहाँ राहत मिलती है। फरवरी की दोपहरी को सरदी की दोपहरी कहना ग़लत है। धूप में घूमते-घूमते मुझे पसीना आ गया है। प्यास भी लग रही है। कैम्प के खालीपन में इधर-उधर नज़र दौड़ाता हूँ, शायद कहीं पीने का पानी रखा हो। पानी नहीं है। चलो, ठंडक तो है··· अचानक वह वृद्धा प्वाइंटर हाथ में लिये हुए आती है। उसके साथ दो आदमी हैं, जिन्हें वह आत्मा-परमात्मा के चित्र दिखा रही है। एक आदमी लम्बा है, कुर्ता-धोती पहने हुए। लम्बी-चौड़ी देह पर चिकनी हँडिया-सा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

औंधाया हुआ गंजा सिर। दूसरा बौना है, गुट्ठल शरीर पर पैंट-कमीज। सिर पर बड़े-बड़े रूखे-बिखरे बाल। वृद्धा ने मुझे भी उन दोनों में शामिल कर लिया है। मुझे भी वही सब समझाने लगी है, जो उन दोनों को समझा रही है।

कैम्प से हम तीनों एक साथ बाहर निकले हैं। वे दोनों मेरे आगे हैं। लम्बा आदमी कह रहा है, "क्यों, ऐसा नहीं हो सकता क्या कि यह वृद्धा साधिका और वह पिघलने वाली लड़की आपस में जगह बदल लें ?"

"नहीं।" बौना आदमी उत्तर देता है, "तब कंट्रास्ट कहाँ रहेगा ? जवानी में हड्डियों का ढाँचा बन जाना एक 'शॉक' देता है, बुढ़िया का तो साल दो साल बाद वह हाल होना ही है।"

हम प्रदर्शनी से बाहर निकल आये हैं। फुट पाथ पर पतझड़ में गिरे पत्ते उड़ रहे हैं। इस बार गर्मी शायद जल्दी आ जायेगी। गर्मी में जब लू चलती है, तब दोपहर के समय यह कनाट प्लेस कितना बेहूदा लगता है !

गंजा आदमी भारी आवाज़ में कह रहा है, "कुछ भी सही, लगता है, बिलकुल चमत्कार ही है। यह जानते हुए भी कि नज़र का धोखा है, विश्वास-सा हो जाता है कि लड़की सचमुच कंकाल बन रही है···और फिर, बारह पैसे तो लड़की की सूरत देख कर ही वसूल हो जाते हैं। खूबसूरत है, यह तो तुम भी मानोगे। और फिर, आध्यात्मिक रूप से सोचो, ज़रा ?"

"तुम नास्तिक हो !" गंजे आदमी ने तिरस्कारपूर्वक उसकी ओर देखा है और अपनी आँखों पर धूप का चश्मा चढ़ा लिया है, फिर जैसे पूरा गुस्सा उतारने के लिए उसने बौने से कहा है, "इसीलिए तुम्हें कहीं शांति नहीं मिलती, इसीलिए तुम्हारा कोई भरोसा नहीं करता !" उसने कहा है और वह पार्लियामेंट स्ट्रीट की ओर मुड़ गया है। बौना आदमी चुप और बौखलाया हुआ-सा उसे जाते देख रहा है। उसे शायद सामने जाना है इसलिए वह मेरे साथ खड़ा हुआ, सड़क पार करने के लिए हरी बत्ती पर लिखे हुए 'गो' की प्रतीक्षा करने लगा है। मैं उससे कुछ निकटता-सी महसूस कर रहा हूँ और कहना चाह रहा हूँ कि मैं आपकी बात से सहमत हूँ, लेकिन कह नहीं पा रहा हूँ। बिना किसी भूमिका के कुछ कहना ··

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इसी प्रतीक्षा में वह तेज़ी से सड़क पर उतर जाता है। मैं भी कदम

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बढ़ाता हूँ, लेकिन तभी जनपथ की ओर से नीलू आती हुई दिखाई पड़ती है, दूर से। एकाएक घूमकर पीछे चल देता हूँ, जैसे कुछ याद आ गया हो। मुझे सचमुच याद आ गया है कि मैं आज यों ही काम की तलाश के बहाने भटकने नहीं निकला था, मुझे नीलू ने भेजा था कि जनपथ जाकर अम्मा के लिए रुद्राक्ष की माला ले आऊँ। पुरानी माला घर में से न जाने कहाँ गुम हो गयी थी और अम्मा कई दिनों से कह रही थीं···आज भी उन्होंने नीलू के आते ही पूछा था, "माला लायी ?" और नीलू ने तमतमाये चेहरे से एक बार उनकी ओर, और फिर मेरी ओर देख कर खड़े-खड़े ही अपने पर्स में से दो रुपये का नोट मेरी ओर फेंक दिया था, "जाओ, ले आओ माला।"

मुझे अपने ऊपर गुस्सा आ रहा है। यह क्या हो गया आज मुझे ? इतना तो भुलक्कड़ मैं कभी नहीं था। अजीब हालत है। एक भी बात का ध्यान नहीं रहता ! अभी तक ऐसा लग रहा था, जैसे रोज़ की तरह निकला हूँ, खाना खा-पीकर, और अब शाम तक घूमने-फिरने के सिवा मुझे कोई काम नहीं है, जबकि काम से निकला था, और खाना भी नहीं खाया था ··नहीं, गोल मार्केट के बस स्टैंड तक मुझे याद था···फिर बस बहुत देर तक नहीं आयी थी और मैं पैदल ही कनाट प्लेस की तरफ चल दिया था···तभी···शायद तभी मेरे पैरों ने रोज़ की तरह चलना शुरू कर दिया होगा और मेरे दिमाग़ ने भी···लेकिन अब ?···नीलू कहेगी—तुम इस तरह मुझे क्यों सताया करते हो ? पता है, कितनी देर तक तुम्हारा इंतज़ार किया ? खाना पड़ा है अभी तक···

मुझे लगता है, मैं नीलू का सामना नहीं कर पाऊँगा। वह चौराहे से मुड़कर शायद इधर ही आयेगी। रीगल से बस पकड़ेगी। हो सकता है, प्रदर्शनी के सामने वाले स्टैंड से ही बस पकड़े···सोचने का समय नहीं है··· जल्दी से प्रदर्शनी का टिकट लेकर अन्दर चला जाता हूँ और जेब में पड़े बाकी पैसों का हिसाब लगाता हूँ तो पाता हूँ कि दो रुपये के नोट से अस्सी पैसे खर्च कर चुका हूँ। हद है !···अपने ऊपर झुंझला उठता हूँ। यह नोट देखकर भी तुम्हें ध्यान नहीं आया कि तुम किसलिए आये हो ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ध्यान सचमुच ही नहीं आया था। सोचा था···या शायद सोचा भी

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं होगा, मान लिया होगा कि रोज़ की तरह आज भी चुपचाप नीलू ने मेरी जेब में यह नोट रख दिया होगा। वह बिना कहे ही मेरी जेब में चुपचाप कभी दो रुपये, कभी एक रुपया, कभी कुछ पैसे ही रख देती है। आज भी यही हुआ होगा···और मैं रोज़ की तरह उसके प्रति कृतज्ञ हुआ था। रोज़ की तरह मैंने ज़िम्मेदार बनने की बात सोची थी ··रोज़ की तरह मैंने नीलू के स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता की थी···

पिछले कुछ दिनों से···शायद जब से इस प्रदर्शनी में इस पिघलने वाली लड़की का तमाशा देखा है, मैं नीलू के बारे में अक्सर चिन्तित होकर सोचने लगा हूँ। कुछ नहीं कर सकता, इसलिए किसी से कुछ कह नहीं सकता हूँ, लेकिन इच्छा होती है मुझे झटपट कोई काम मिल जाये और मैं नीलू से नौकरी छोड़ने के लिए कह दूँ। आजकल मुझे उससे डर लगने लगा है···मुझे लगता है, उसे क्षय होता जा रहा है। रात को कितनी देर-देर तक खाँसती रहती है···लेकिन अपने मन का डर किसी से नहीं कह पाता हूँ। एक दिन जबरदस्ती डाक्टर शुक्ला के पास ले गया था कि चलो, वे उधार दवा दे देंगे। दवा मिल गयी, लेकिन डाक्टर ने कहा था, "इन्हें पूरा आराम दीजिए कुछ दिनों तक।" और डाक्टर के यहाँ से लौटते समय नीलू ने हँसकर कहा था, "दवा तो उधार मिल गयी, आराम भी कहीं से उधार मिल सकता हो तो दिला दो!" बोली इस तरह थी कि मुझे बुरा नहीं लगे, लेकिन बात का पूरा अर्थ अपनी सारी भयंकरता के साथ मुझ पर खुल गया था।

उस दिन पहली बार मैंने महसूस किया था कि मैं अपराधी हूँ। मेरा मन किसी भी मजबूरी का बहाना सुनना नहीं चाहता था, लेकिन···और तबसे मुझे महसूस होने लगा है कि मेरे दिमाग़ में कुछ खराबी आ गयी है। सोचने-समझने की सारी ताकत जैसे जवाब देती जा रही है। और नीलू है कि चुपचाप सब कुछ निभाती जा रही है···अम्मा की बातों से ज़रूर कभी-कभी झुँझला जाती है, लेकिन मुझसे कुछ नहीं कहती···रोज़ की तरह सुबह न जाने कब मेरे पास से उठ जाती है। नहाना-धोना, चाय-नाश्ता और थोड़ा-सा मेकअप करके स्कूल चली जाती है···रोज़ की तरह [illegible] है, [illegible] रहती है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और उसके साथ मैं भी जागता रहता हूँ। एक अकथनीय भय मुझे जकड़े रहता है; लेकिन पता नहीं, मुझे क्या हो गया है कि दिन में ज़्यादा से ज़्यादा देर नीलू से अलग रहना चाहता हूँ और रह पाता नहीं हूँ। वह अकथनीय भय मुझे यहाँ-वहाँ ठेलता रहता है। शायद वही भय ठेल कर मुझे यहाँ ले आता है। मुझे नहीं मालूम कि यह कौन-सी मानसिक बीमारी है कि मुझे हड्डियों के ढाँचे को देखकर डर भी लगता है और मैं उसे देखे बिना रह भी नहीं पाता हूँ।

प्रदर्शनी में आकर नीलू से बचने की कोशिश मैंने ज़रूर की है, लेकिन गेट के पीछे छिपकर देख रहा हूँ—उसे देखकर जान लेना चाहता हूँ कि वह कितनी क्रुद्ध है। लेकिन वह चौराहे की ओर से आती हुई एक बस के साथ दौड़ती हुई आती दिखायी देती है और जब तक मैं गेट के पीछे से निकल कर उसे पुकारूँ, वह पल-भर के लिए रुककर चल पड़ने वाली बस में दौड़ती-हाँफती चढ़कर चली गयी है। मुझे लगा है कि बस के पहिये मुझे कुचल गये हैं और आम की गुठली की तरह मेरा कंकाल मेरी त्वचा से उछलकर बाहर आ गिरा है···

"आपको अन्दर जाना है या बाहर आना है ?" प्रदर्शनी के गेट पर खड़े हुए आदमी ने मुझसे पूछा है और मैं जैसे चौंक-जागकर बोला हूँ, "अन्दर !" और तेज़ी से अन्दर चल दिया हूँ।

अन्दर सब कुछ पहले जैसा ही है। आत्म-विद्या-कैम्प अब फिर खाली दिखायी दे रहा है। कुछ लड़के फिर छल्ले फेंककर कुछ जीत लेने की कोशिश कर रहे हैं। मौत का खेल दिखाने वाले लड़के की मोटर-साइकिल अब भी फटफटा रही है। हँसी के गोलगप्पों का रिकार्ड अभी भी बज रहा है। और वह लड़का अभी भी चीख रहा है, "आइए ! आइए ! देखिए। विज्ञान का चिमत्कार ! सैंस का जादू ! सोलै साल की लड़की···"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सागर संगम

लतिका सेन आईने में चेहरा देखती हैं और उदास हो जाती हैं। आँखों की कोरों के पास जैसे रोज़ एक नयी लकीर खिंच आती है। अभी हल्की झाई-सी है, कल गहरी हो जायेगी फिर वही लकीर लतिका सेन के देखते-देखते एक झुर्री की शक्ल में बदल जायेगी और लतिका सेन महसूस करेंगी कि उम्र की नदी के कगार पर एक दरार और पड़ गयी है। ढह जाने से पहले के इन लक्षणों को लतिका सेन अपने एकान्त में भी देखते हुए घबराती हैं। कितना सहेज-सँवार कर रखा है अपने आपको, फिर भी···

फिर भी जाना तो होगा ही एक दिन, मन को समझा लेती हैं। मन को समझा लेती हैं और व्यस्त हो उठती हैं। अपनी व्यस्तता में अपनी उदासी को बहा देती हैं। बरसों से यही तो करती आ रही हैं।

उम्र की लकीरों को पाउडर की परत में छिपा कर लतिका सेन अपने जूड़े को एक बार फिर सहेज लेती हैं। बाल भी धीरे-धीरे चाँदी हो रहे हैं। कभी-कभी इच्छा होती है, स्याह बालों की विग ले आयें, लेकिन वे इस इच्छा को मन ही मन घोंट लेती हैं। क्या हो जायेगा ? पचास के बजाय पैंतीस की दिखने लगूंगी, तब भी क्या हो जायेगा ? पुराने खस्ता मकान पर नया डिस्टेंपर···नहीं, वैसी बनावट से लतिका सेन हमेशा दूर रही हैं।

बादामी रंग की रेशमी साड़ी की चौड़ी लाल किनारी कंधे पर से उतरती हुई उनके सीने के उभार पर आज भी फबती है। माथे पर लगी हुई बड़ी-सी लाल बिन्दी से उसका अजब मेल मिलता है। शान्ति निकेतन स्टाइल की चप्पलों और बायीं बाँह पर झूलते रहने वाले पर्स की रंग-योजना भी यही है। बादामी और लाल। लतिका सेन के पति को ये रंग

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chennai. Sponsoring Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहुत पसन्द थे। पति अब नहीं हैं, लेकिन लतिका सेन को ये रंग आज भी पसन्द हैं। इन रंगों में उनका व्यक्तित्व पूरी तरह उभर आता है—ऐसा उन्हें ही नहीं, औरों को भी लगता है। उम्र की ढलान पर आयी हुई एक स्त्री सुन्दर भी लगे, कोमल भी, गम्भीर भी—और क्या चाहिए ?

बाहर जाने लगीं, तो माया, लतिका सेन की नौकरानी, बोली, "कब तक लौटोगी दीदी ?"

"आ जाऊँगी बारह-एक तक।" फिर चलते-चलते कुछ सोचकर कहा, "खाना कुछ ज़्यादा बना लेना, शायद कोई साथ आये।"

"कोई कौन है ? विपिन दा आयेंगे न ?"

"नहीं रे···विपिन दा यहाँ हैं ही कहाँ ! वे तो चले गये।" सहज स्वर में ही बोलीं, किन्तु कहने का ढंग कुछ ऐसा हो आया, जैसे एक ठण्डी साँस आते-आते रह गयी हो।

विपिन दा अंधड़ की तरह लतिका सेन के जीवन में आये थे और चुपचाप बहते पानी की तरह चले गये। सीढ़ियाँ उतरती हुई लतिका सेन आज उनके बारे में सोचती हैं, तो लगता है, उतर नहीं रही हैं, लुढ़क रही हैं, गिर रही हैं। शायद विपिन दा के साथ इतने ऊँचे आसमान पर चढ़ी थीं कि निर्वात अन्तरिक्ष में भारहीन होकर रह गयीं और अब उस आसमान से उतर आने के बाद उनके भीतर ऐसा वैक्यूम आ गया है कि चारों ओर की हवा उन्हें दबाये-पीसे डाल रही है और वे किसी पाताल में धँसती जा रही हैं।

और वह आह-सी भर कर सीढ़ियाँ उतरने लगती हैं। सड़क पर आकर टैक्सी के लिए नज़र दौड़ाती हैं और एक को बुलाकर, उसमें बैठकर अपने दफ्तर की ओर चल देती हैं। रास्ते में आस-पास की प्रिय और परिचित चीज़ें नहीं दिखें, इसके लिए आँखें मूँद लेती हैं, लेकिन पलकें बन्द करते ही आँखों में गीलापन महसूस होता है, तो आँखें खोलकर इधर-उधर देखने लगती हैं। अप्रैल की सुबह साढ़े नौ बजे का सूरज सहा नहीं जाता तो गॉगल्स लगा लेती हैं। अपने और चीज़ों के बीच एक रंगीन पारदर्शी पर्दा टाँग लेती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"अमेरिका वाले दुबारा चाँद पर क्यों जा रहे हैं भैनजी ?" टैक्सी

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ड्राइवर आगे ही देखता हुआ पीछे बैठी हुई लतिका सेन से पूछता है, लेकिन उत्तर सुनने से पहले ही अपना विचार भी बता देता है, "ज़रूर कोई ऐसी कीमती चीज़ चाँद पर मिली होगी, जिसके लिए इतना खर्च किया जा सके। सुना है, चाँद पर अमृत होता है। उसी को लाना चाहते होंगे, क्यों भैनजी ? अगर मिल गया तो लोग अमर हो जायेंगे···"

लतिका सेन को ड्राइवर की बातों पर हँसी आती है, लेकिन आदमा मज़ेदार लगता है, इसलिए पूछती हैं, "किस से सुना है ?"

"अजी भैनजी, ऐसी बातें ऑल इंडिया रेडियो से थोड़ी आती हैं—लोग कहते हैं। लोगों का ख्याल है। अमरीका वाले ऐसे राज़ किसी को क्यों बताने लगे ! हम लोग तो हैं क्या, सुना है कि रूस, चीन की तगड़ी से तगड़ी सीआईडी लगी पड़ी है, लेकिन अमरीका वाले हवा भी नहीं लगने देंगे।"

"काफी जानकारी रखते हो।" लतिका सेन ड्राइवर की बातों में रस लेते हुए बोलीं।

"बस जी, इधर-उधर से सुन लेते हैं।" ड्राइवर विनम्र होकर बिछ-सा गया।

"अगर तुम्हें अमृत मिल जाये तो !" लतिका सेन ने मज़ाक में पूछा।

"अमृत और हमें !" ड्राइवर हँस दिया। फिर एक बार पीछे देख कर बोला, "क्या करना है भैन जी अमर होकर ? अपन तो भगवान से मौत माँगते हैं। वो भी नहीं मिलती। सब कहते हैं भैन जी, ऐसी ज़िन्दगी से तो मौत अच्छी। पढ़ें-लिखे तो हैं नहीं, पैसा पास नहीं, घर वालों का पेट भरने के लिए टैक्सी चलाना शुरू किया था—सोचा था, दो-चार साल में अपनी टैक्सी हो जायेगी, लेकिन बाईस साल हो गये दूसरों की टैक्सियाँ चलाते हुए, पैसा बचता ही नहीं साला···बचे कहाँ से ! फैमिली ही इतनी बड़ी है। घर वाले भी तो कुछ नहीं सोचते। सब को अपनी-अपनी पड़ी रहती है। चार पैसे बचाकर रखो, तो सबकी आँख उन्हीं पर लगी रहती है। बीवी को खाने-पहनने, पिक्चरें देखने और रिश्तेदारियाँ निभाने का शौक है। लड़का-लड़की बड़े हो गये हैं, सब समझने की उम्र है, मगर नहीं साहब ! पढ़ाई-लिखाई का खर्चा तो [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चाहिएँ। जेबखर्च और सैर-सपाटे के लिए भी पैसे चाहिएँ। कोई कुछ नहीं सोचता। उधर दूसरे लोग हैं कि हमारे साथ-साथ टैक्सी चलाना शुरू किया था और आज उनकी अपनी टैक्सियाँ हैं, अपने मकान हैं···"

ड्राइवर बोलता रहता है। लतिका सेन सुनती रहती हैं। अपना बचपन याद आता है। क्लर्की करनेवाले अपने पिता याद आते हैं। माँ, बड़े-छोटे भाई-बहन सब याद आते हैं। एक रात याद आती है—लतिका सेन अपने छोटे कमरे में बैठी पढ़ रही थीं। सब लोग सिनेमा देखने गये हुए थे और उनके पिता दफ्तर के बाद का वक्त ट्यूशनों में बिताकर लौटे थे, बेहद थके हुए। फिर याद नहीं क्या बात हुई थी कि बातें करते-करते वे बेटी के सामने रो पड़े थे। क्या-क्या कहा था, पूरा याद नहीं, लेकिन एक बात लतिका आज भी नहीं भूली है, कभी नहीं भूलेगी···उन्होंने कहा था, "अंग्रेज़ लोग हम क्रांतिकारियों पर गोली चलाते थे, उनकी एक गोली मुझे भी लग गयी होती तो अच्छा रहता···यह सब तो नहीं देखना पड़ता।" और उनकी बेटी लतिका 'यह सब' में स्वयं को शामिल मानकर तिलमिला उठी थी। पिता के आँसू पोंछे थे और पुस्तक बंद कर दी थी। पिता दूसरे कमरे में चले गये तो नये-पुराने अखबार उठाकर रिक्त स्थानों के विज्ञापन देखे थे और अर्जी लिखने के बजाय दूसरे दिन स्वयं ही मिलने चली गयी थी। दूसरे दिन लतिका गांगुली अपने एक पुराने सहपाठी सुधीर सेन की मदद से एक होस्टल की रिसेप्शनिस्ट होकर लौटी थी। पिता को बताया था, तो वे रुआँसे हो गये थे, लेकिन लतिका को सीने से लगाकर उन्होंने आशीर्वाद दिया था। क्या कहा था, सो अब लतिका सेन को याद नहीं, लेकिन अपने सिर पर फिरते हुए पिता के हाथ का वह स्पर्श याद है। अच्छी तरह याद है। जैसे उस स्पर्श से पिता ने कहना चाहा हो कि अब तू ही मेरे अधूरे छोड़े हुए कामों को पूरा करेगी लतिका···

अचानक टैक्सी रुकने से झटका लगता है, तो लतिका सेन अपने अतीत से उबर आती हैं। देखती हैं, दूर तक ट्रेफिक रुका हुआ है। चौराहे से कोई जुलूस गुज़र रहा है। बहते हुए जन-समूह के ऊपर उठे हुए लाल कपड़ों और गत्ते के टुकड़ों को इतनी दूर से टैक्सी में बैठे-बैठे पढ़ पाना संभव नहीं है। ड्राइवर से पूछती है, "कैसा जुलूस है?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"किसी कारखाने के मज़दूरों का लगता है।" ड्राइवर को बोलने के लिए नया विषय मिल गया, "अब यही देखो भैनजी, रोज़-रोज़ जुलूस-जलसे नारेबाज़ी ! क्या होना है इस मुल्क का ! आधी जनता हड़तालों और जुलूस-जलसों में लगी रहती है, बाकी आधी में कोई बीमार है, कोई बूढ़ा, कोई अपाहिज, कोई कामचोर, किसी का बाप मर गया है, किसी के बेटा हुआ है, कोई मुकद्दमे की तारीख में ! काम कौन करता है ?"

लतिका सेन का मन होता है, ड्राइवर को डाँट दें—कौन भर देता है तुम लोगों के दिमाग़ों में ये उल्टी बातें ? बिना सोचे-समझे बोलने लगते हो ! लेकिन चुप ही रहती हैं।

जुलूस गुज़र जाता है तो ट्रेफिक की नदी फिर बहने लगती है। ड्राइवर चुप हो जाता है। लेकिन लतिका सेन को उसकी बातें एक युग पीछे ले जाती हैं। आज़ादी से पहले के जुलूस-जलसे याद आते हैं। मन ही मन तुलना करने लगती हैं—यह जो अभी-अभी गुजर गया है, पहले के जुलूसों से किस कदर भिन्न है ? तब ऐसे जुलूस देखकर ऐसा जोश आता था कि सारे काम छोड़कर हम भी शामिल हो जायें···लतिका सेन स्वाधीनता-संग्राम के जुलूसों में शामिल हुई हैं, पिकेटिंग की है, मार खायी है···अब वैसी इच्छा क्यों नहीं होती ? क्यों जोश नहीं आता ? ऐसा क्यों होता है कि पहले से तय लोगों के सिवा कोई और किसी जुलूस में शामिल नहीं होता ? ऐसा क्यों होता है कि सारे जुलूस कहीं न कहीं जाकर बिखर जाते हैं ? क्यों सारे नारे हवा में ही उछल कर रह जाते हैं ? कुछ होता क्यों नहीं ?

"कहाँ के रहने वाले हो ?" लतिका सेन ड्राइवर से पूछती हैं।

"हिन्दुस्तानी हूँ भैनजी।"

अगला प्रश्न पूछने से पहले ही टैक्सी लतिका सेन के दफ्तर के पास आ जाती है और वे उसे रुकवाकर उतर पड़ती हैं। मीटर देखकर किराया देती हैं और सफेद पत्थर वाली इमारत की सीढ़ियाँ चढ़ जाती हैं। दफ्तर के लोगों के अभिवादनों को संकेत से स्वीकारती हुई लतिका सेन अपने केबिन में आकर रोज़ की तरह व्यस्त हो जातीं हैं, लेकिन देर तक उन्हें लगता रहता है, जैसे अपना कुछ प्रिय और परिचित-सा सोचने को रह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गया है। लगता रहता है कि हवा में उदास रंगों की लकीरें-सी खिंची हैं, या कहीं कोई उदास गंध आकर ठिठक गयी है।

काम में मन लगाने की चेष्टा करती हैं लतिका सेन, लेकिन सफल नहीं हो पातीं। मन में कोहरा-सा भर गया है और अनाम शोर उठ आया है, जिसमें कई घटनाओं के असंबद्ध दृश्य-खंड और कई तरह की बातों के टूटे-बिखरे टुकड़े उभर रहे हैं। शेष सब अस्पष्ट होता जा रहा है। कभी लगता है कि पिता की अर्थी अभी-अभी घर से बाहर निकली है और कई लोग लतिका गांगुली को घेरे हुए बैठे हैं। उसे उसकी ज़िम्मेदारी समझा रहे हैं··· कभी देखती हैं, एक अंतरिक्ष यान चंद्रमा पर उतर रहा है और टैक्सी-ड्राइवर चंद्रमा पर अमृत होने की बात कर रहा है···कभी ऐसा महसूस होता है, जैसे विपिन सारी दुनिया घूमकर लतिका सेन के सामने आ बैठे हैं और कह रहे हैं, "बीते हुए के लिए कब तक बैठी रहोगी लतिका ? मेरे साथ चलो या मुझे अपने साथ रहने दो।" और लतिका सेन स्वयं अपने माथे पर लगी हुई बिंदी की ओर इशारा करके उत्तर दे रही हैं, "यह बिंदी देख रहे हो विपिन दा ? इसलिए लगाती हूँ कि सुधीर सेन मेरे लिए आज भी जीवित हैं···"

हाँ, यह सच है कि बचपन से ही भावनाओं में बहकर जीने वाली लतिका ने वैधव्य कभी स्वीकारा ही नहीं। स्वीकारेंगी भी नहीं शायद।

केबिन में अपनी कुर्सी के सामने वाली दीवार पर लतिका सेन ने मुस्कराते हुए सुधीर सेन का पोर्ट्रेट लगा रखा है। खाली वक्त में देर-देर तक उसकी ओर देखती रहती हैं। पोर्ट्रेट से बातें करना, उसकी ओर देखकर मुस्कराना, एकाएक हँस पड़ना और हँसते-हँसते मेज़ पर सिर टिकाकर रोने लगना—यह सब लतिका सेन जाने-अनजाने करती रहती हैं, लेकिन आज उसी पोर्ट्रेट को देखकर यों लग रहा है कि सुधीर सेन का मुस्कराता हुआ चेहरा फ्रेम की खिड़की में से बहुत दूर दिखायी दे रहा है—धुँधला-धुँधला और एकदम स्थिर। जैसे दूर कहीं पारदर्शी बर्फ में जाकर जम गया हो।

पोर्ट्रेट से नज़र हटाकर सामने मेज़ पर रखे स्टैंड में लगे दिल-लकीरों वाले लूज़ पन्नों पर नज़र डालकर लतिका सेन आज के अपाइंटमेंट्स देखने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगती हैं—ग्यारह बजे सुब्रह्मण्यम को मिलने का समय दिया···साढ़े ग्यारह बजे कीर्ति को फोन करना है···साढ़े ग्यारह बजे ही मेहता ब्रदर्स के मैनेजर आने वाले हैं···बारह बजे मलय···

'बारह बजे मलय' को लतिका सेन लाल पेंसिल से रेखांकित कर देती हैं और उसके नीचे लिखे सारे नाम और समय उसी पेंसिल से काट देती हैं।

मलय बरसों बाद आ रहा है। उसके आते ही लतिका सेन दफ्तर से उठ जायेंगी। उसे लेकर घर चली जायेंगी। दोपहर का भोजन मलय के साथ और फिर खुलकर बातें। मुद्दत से ऐसा कोई अपना नहीं मिला है, जो लतिका सेन को उनके अतीत से जोड़ भी दे और वर्तमान से कटने भी नहीं दे। विपिन दा मिले थे, लेकिन···विपिन दा की बात और है।

लतिका सेन को अपनी ही कही गयी अपनी एक बात याद आती है, "विपिन दा, आपका और मेरा सम्बन्ध गुरु और शिष्या का सम्बन्ध है, उसमें कोई उलट-फेर मुझसे सहा नहीं जायेगा।" और याद आता है विपिन दा का स्याह हो आया चेहरा—जैसे विपिन दा बड़े उत्साह से ताश के पत्तों से बनाया हुआ घर लतिका सेन को दिखाने लाये हों और लतिका सेन ने उसे फूंक मार कर गिरा दिया हो। वे शायद उस कल्पित घर के अवशेष भी नहीं रहने देना चाहती थीं, इसलिए बोली थीं, "विपिन दा, अब वह उम्र जा चुकी है, जिसमें रोमांस होता है।" सुनकर विपिन दा का चेहरा तमतमा गया था। बोले थे, "ग़लत जगह से देखने पर चीज़ें ग़लत ही दिखायी देती हैं···खैर, जाने दो···मेरा क्या है ! ज़िंदगी थोड़ी-सी और बची है, वह भी भटकते-भटकते कट जायेगी। अच्छा···"और उस 'अच्छा' के तुरन्त बाद केबिन का दरवाज़ा ज़ोर से बंद हो गया था और लतिका सेन सामने लगे पोर्ट्रेट की ओर देखकर मुस्करायी थीं···

इंटरनल फोन की किर्रर-किर्रर से लतिका सेन अपने में लौट आती हैं। सहायक की आवाज़ आती है, "मिस्टर मलय आपसे मिलना चाहते हैं।"

"मलय ? वह तो बारह बजे···" सहसा मुँह से निकल गया। कहते-कहते रुक गयीं। बोलीं, "भेज दो।" और फोन रखकर कुर्सी से उठ आयीं और केबिन का दरवाज़ा खोलकर खड़ी हो गयीं। मलय को आते देखकर दूर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से बोलीं, "चकमा देने की तुम्हारी आदत गयी नहीं ?"

"मैंने क्या चकमा दिया है ? बारह बजे तक प्रतीक्षा कराने के बजाय पहले ही आ गया हूँ, इसका अहसान नहीं मानोगी ?"

चेहरे पर छलकती हुई हँसी, तेज़-तेज़ कदम रखकर चलने का ढंग, वही कुर्ता-धोती-चप्पल का पहनावा—सब कुछ पहले जैसा ही है। केवल इतना अंतर आया है कि पहले का दुर्बल शरीर अब कुछ भर गया है और आँखों पर काले फ्रेम का चश्मा चढ़ गया है। अंदर आने से पहले मलय ने झुककर पाँव छू लिये हैं। लतिका सेन विचलित हो उठी हैं, "यह क्या ! पत्नी के पैर छूते-छूते आदत पड़ गयी है क्या ?"

"ओह गॉड ! तुम्हें कैसे पता चल गया कि मुझे पत्नी के पाँव पूजने पड़ते हैं ? इस बात को तो मैंने टॉप सीक्रेट रखा था।" मलय के स्वर में पूरा नाटक है। लतिका सेन हँस पड़ती हैं। बहुत दिन बाद इस तरह खुलकर हँसी हैं। लेकिन फिर ध्यान आता है, यह दफ्तर है, और केबिन का दरवाज़ा बंद कर देती हैं और मलय से कहती हैं, "बैठो।" स्वयं अपनी कुर्सी पर नहीं, मलय के पास वाली कुर्सी खिसकाकर बैठ जाती हैं। बैठते हुए बोलती हैं, "अब बताओ, कैसे हो ? मैं तो समझी थी तुम कहीं मर-खप गये हो। बरसों से कोई खबर नहीं। आने की भी सूचना नहीं। ठहरे कहाँ हो ? कल से तुम पर इतना गुस्सा आ रहा है कि···"

"क्या बताऊँ लतिका दी, जिस दिन से निश्चय किया था कि दिल्ली जाना है, उसी दिन से तुम्हारा ध्यान रहा है। स्टेशन पर उतरते ही सीधे तुम्हारे पास दौड़े चले आने की इच्छा थी, पर साथ में जो लोग आये हैं, उन्हें एकदम छोड़कर कैसे भाग आता ? और फोन पर अपनी कोई बात कहने और तुम्हारी कोई बात सुनने का मन नहीं था। वैसा होता तो चिट्ठी ही लिखता। इसलिए कल जान-बूझकर इतना ही कहा कि आ गया हूँ, कल बारह बजे आ जाऊँगा।"

"तो बारह बजे ही आते ?" क्रोध करना चाहती हैं, लेकिन मलय पर लतिका सेन कभी क्रुद्ध नहीं हो सकेंगी। होंगी भी तो मलय हँस देगा, इसलिए उस प्रयत्न को छोड़ ही देती हैं, "खैर पहले यह बताओ, चाय पीओगे ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ज़रूर पीऊँगा, जितनी पिलाओ !"

लतिका सेन घड़ी देखती हैं। फोन उठाकर चाय के लिए कह देती हैं, और साथ ही कह देती हैं कि अब और किसी से नहीं मिलेंगी। काम-काज के तनाव से मुक्त होकर स्वयं को कुर्सी पर ढीला छोड़ देती हैं, "हाँ, तो अब सुनाओ, शुरू से।"

'शुरू से' कहते समय लतिका सेन दस-बारह वर्षों का अंतराल लाँघ कर उन दिनों में जा पहुँचती हैं, जिन दिनों मलय दार्शनिक होने लगा था और सुधीर सेन अपनी नौकरी छोड़कर राजनीति में कूद गये थे···

कैसे दिन थे वे ! लतिका सेन शाम को नौकरी से थकी हुई आतीं और पातीं कि घर में बहुत-से लोग भरे हुए हैं। बातें-बहसें हो रही हैं। चुनाव के लिए योजनाएँ बन रही हैं, किसी नई स्ट्रेटेजी पर विचार हो रहा है। मलय भी अक्सर उन लोगों में होता है और बात-बात में इस बात पर ज़ोर देता है कि राजनीति का चक्र ग़लत दिशा में घूम रहा है। और सब लोग उसकी बात पर हँसा करते। मलय को दार्शनिक कहा करते। और मलय अकेला पड़कर लतिका सेन का समर्थन चाहता। लतिका सेन समर्थन कर भी देतीं, लेकिन मन में बार-बार यही आता कि चक्र चाहे उल्टा घूमे या सीधा, सुधीर सेन को चुनाव में जीतना ज़रूर चाहिए। चुनाव के लिए सुधीर सेन जो कर्ज़ लेते जा रहे थे, उसके आँकड़े लतिका सेन के दिमाग़ में घूमते रहते।

उधर पिता की मृत्यु हो गयी थी और उनकी छोड़ी हुई गृहस्थी का भार ढोते चलने में लतिका सेन कठिनाई अनुभव करने लगी थीं। सोचती थीं, सुधीर सेन चुनाव जीत जायें, तो उनके भाई-बहनों का भी कोई ढंग का वसीला हो जाये···

लेकिन होना था कुछ और ही। चुनाव में सुधीर सेन हार गये थे और उस सदमे को सह नहीं पाने पर उनकी हृदय गति रुक गयी थी। लतिका सेन अकेली रह गयी थीं। सुधीर सेन की मृत्यु के बाद एक दिन अचानक यह मलय भी ग़ायब हो गया था···

लतिका सेन मलय का चेहरा देख रही हैं। पूछती हैं, "लेकिन तुम एकाएक कहाँ चले गये थे ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मलय हँसता है, "एक पागलपन सवार हुआ था लतिका दी ! सोचा था, राजनीति में पूरी तरह खप जाने से पहले जान तो लूँ कि वास्तव में मैं क्या करना चाहता हूँ ! मगर इन दो सवालों से पहले एक सवाल मेरे मन में और उठा—मैं कुछ करना चाहता हूँ, यह तो ठीक है, लेकिन किसके लिए करना चाहता हूँ,और जिनके लिए हम हमेशा कुछ न कुछ सोचते रहते हैं दीदी, वे लोग ··"

एक हल्का-सा विराम लग जाता है मलय की बातों में। चेहरे पर क्षोभ उमड़ आता है, "दीदी, इस देश की मिट्टी को कुछ हो गया है। पिछले बारह-तेरह बरसों से कंधे पर एक झोला लटकाये पूरे देश में भटक रहा हूँ—महानगरों से गाँवों तक। और एक ही चीज़ देख रहा हूँ सब जगह··· आदमी सब जगह क़ैद है। वह अपनी क़ैद से छूटना तो चाहता है, लेकिन उस क़ैद से छूटने के लिए कुछ करने को तैयार नहीं दिखायी पड़ता।"

लतिका सेन कुछ कहने के लिए मुँह खोलती हैं, तभी चाय आ जाती है और वे प्यालों में चाय डालने लगती हैं। फिर एकाएक गंभीरता को तोड़ते हुए कहती हैं, "बस, इतनी-सी जानकारी के लिए बारह साल भाड़ झोंकते रहे ?" मलय ठहाका लगाकर हँसता है, तो कहती हैं, "इतना तो कभी भी मुझसे ही पूछ लेते, मैं ही बता देती।" लेकिन इतना कहना भारी पड़ जाता है। अपनी व्यक्तिगत बंधन-मुक्ति की समस्या इस तरह सामने आ खड़ी होती है, जैसे मेज़ पर पड़ा हुआ तेज़ धार वाला लम्बा चाकू, जिससे डर लगता है। शायद उस डर से उबरने के लिए ही जल्दी से विषयान्तर करती हैं, "पिछले दिनों विपिन दा आये थे।"

"विपिन दा !" मलय चौंकता है, "कहाँ हैं आजकल ? मैं बहुत दिनों से उनसे मिलने की सोच रहा हूँ। तुमसे क्या बातें हुईं ?"

"सुनोगे तो विश्वास नहीं होगा।"

"हो जायेगा, तुम कहो तो।"

"मुझसे शादी का प्रस्ताव लेकर आये थे !"

"क्या···?" मलय का मुँह खुला रह जाता है, "फिर ?"

"फिर क्या, मुझे मूर्ख और पागल कहते रहे, फिर चले गये।"

"मुझे कहूँ ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"पता नहीं।"

एक खामोशी घिर आती है। ऊपर घूमते हुए पंखे की हल्की फरफराहट और चाय को सिप करने की आवाज़ें, और प्यालों की हल्की-हल्की खनक। मलय ही बोलता है, "कलकत्ते में एक बार सुना था कि विपिन दा बहुत बड़े आदमी हो गये हैं। अक्सर विदेशों में रहते हैं और वहाँ के विश्व-विद्यालयों में भारतीय इतिहास पढ़ाया करते हैं। खूब पैसा है, कलकत्ते में बिल्डिंग भी बनवा ली है। मैंने पूछा, उनके स्टडी सर्किल का क्या हुआ, तो बताने वाले हँस दिये। कुछ और बातें भी मालूम हुईं..."

मलय बोलता रहता है, लेकिन लतिका सेन पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती है। न जाने कब वे सुधीर सेन के पोर्ट्रेट की ओर देखने लगती हैं। जो चेहरा उन्हें बहुत दूर और बर्फ में जमा हुआ लगता था, अब पास आकर फ्रेम की खिड़की में से झाँकने लगा है और उसपर जमी हुई बर्फ भी पिघलने लगी है। बोलते-बोलते मलय रुक जाता है, तो लतिका सेन को झटका-सा लगता है, "चुप क्यों हो गये ?"

"यों ही " मलय आँखें झुकाये चाय के प्याले की सुनहरी किनारी पर उँगली घुमाने लगता है। फिर जैसे उसे लगता है कि उसका आना व्यर्थ हो गया है और वह भी उसी तरह विषयान्तर करता है जिस तरह थोड़ी देर पहले लतिका सेन ने किया था। कहता है, "मेरे आते ही तुमने पत्नी के पाँव छूने वाली बात क्यों कही थी लतिका दी ?"

"क्यों ? बुरी लगी क्या ?"

"नहीं, पर पत्नी है कहाँ ?"

"तो क्या तुम बारह साल तक सचमुच ही भाड़ झोंकते रहे ? एक शादी भी नहीं कर पाये ?"

"करता किससे ? अपने देश में शादी आदमी से तो होती नहीं—पैसा, पद, प्रतिष्ठा, सुरक्षा जैसी चीज़ों से होती है और जिसके पास रोज़-मर्रा की ज़रूरी चीज़ों के एक झोले के सिवा कोई संपत्ति नहीं हो, पद जिस का पदयात्री का हो, प्रतिष्ठा के नाम पर जिसे सिर्फ पागल, ग़ैर-ज़िम्मेदार, घुमक्कड़ कहा जाता हो, उससे शादी कौन करे ?"

"कमाल है ! सारा देश नाम लिये और कोई आदर्शवादी लड़की नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS & MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मिली तुम्हें ?" लतिका सेन के होंठों पर मुस्कान खिंच आती है।

मलय भी मुस्कराता है, "एक बात कहूँ। आदर्शवादी लड़कियाँ तो बहुत हैं, लेकिन लगता है, आदर्शवाद की परिभाषा बदलनी पड़ेगी·· और उससे पहले बदलनी पड़ेगी यह व्यवस्था, जो आदमी को खरीदी-बेची जाने वाली चीज़ बना देती है।"

लतिका सेन की आँखें फिर सुधीर सेन के पोर्ट्रेट की ओर उठ जाती हैं। लगता है, जैसे पोर्ट्रेट की पृष्ठभूमि में खुली-चमकीली धूप निकल आयी है और पिघलती हुई बर्फ छोटी-छोटी स्वच्छ निर्मल धाराओं में बहने लगी है। जैसे सुधीर सेन भी लतिका और मलय की बातों में शामिल हो गए हैं। जैसे बहुत पहले मलय से कही हुई बात मलय से आज फिर कह रहे हैं, "मलय, लतिका तो समुद्र है और हम सब हैं नदियाँ, हम सब अपनी लड़ाई में हार सकते हैं, यह कभी नहीं हारेगी। समुद्र कभी सूखता है ?" और लतिका सेन को लगता है, सुधीर सेन का मुस्कराता हुआ चेहरा उनके बहुत पास आ गया है और उसकी निकटता के अहसास से जैसे वे ऊपर उठती जा रही हैं।

"क्या सोचने लगीं ?" मलय पूछता है।

"सोच रही थी, तुम तो कभी इतने निराश नहीं होते थे।"

"मैं निराश हूँ ?" मलय एक बार फिर ज़ोर से हँस पड़ता है। उसकी हँसी से लतिका सेन को अपने केबिन की हर चीज़ एक बार थिरक-सी गयी लगती है। कहती हैं, "नहीं हो तो उठो, चलो घर चलें।"

मलय के साथ लतिका सेन बाहर निकल आती हैं। बाहर सड़क पर वही जुलूस गुज़र रहा है, जो सुबह टैक्सी में से दिखाई दिया था। इतनी देर में यहाँ तक पहुँचा है। लतिका सेन मलय के साथ उस जुलूस के समानान्तर चलने लगती हैं और अपने भीतर वही उमंग महसूस करती हैं, जो पहले कभी जुलूसों में शामिल होते हुए करती थीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ग़लत पते पर

शाम के धुँधलके में यदि थोड़ी दूर भी अकेले चलना पड़े तो उनका मन अजीब हो जाता है। शाम जिस तरह दिन और रात के कोने-किनारे आपस में मिलाकर धुँधले कर देती है, उसी तरह उनका मन बीते और वर्तमान को मिला लेता है। वे चारों ओर देखने लगते हैं। वैसी ही शामें··· लेकिन क्या सचमुच वैसी ही ? वातावरण पर सर्दी के दबाव का उतर आना और उस दबाव के नीचे धुएँ का जम जाना, घुट-घुटकर फैलना और आँखों में चिरमिरी पैदा करना। कंप्रेस्ड स्मोक। अपनी ज़िंदगी जैसा···

पिछले साल ऐसी सर्दियों में···उन्होंने सोचना चाहा, लेकिन सचेत होकर सिर झटक दिया। स्वयं को सँभाल लिया। बस-स्टैंड से घर की ओर चल दिये। पिछले शहर की यादों में थोड़ी देर जी लेने की इच्छा ने फिर सिर उठाया, पर उस इच्छा को उन्होंने दबा दिया। क्या फ़ायदा ? दौड़ते हुए आदमी को रास्ते में छूटी हुई चीज़ों के बारे में नहीं सोचना चाहिए। आँख लक्ष्य पर रहे। पैरों में फुर्ती बनी रहे। साँस सधी रहे। अपने सिद्धांत को उन्होंने मन-ही-मन दोहराया। आदतन। उनसे पूछा जाय, कौन-सा लक्ष्य ? तो शायद वे उत्तर न दे पायें।

बस-स्टैंड से घर दूर है। उन्होंने चाल तेज़ कर दी। लेकिन कुछ कदम चलने के बाद ही उन्हें महसूस हो गया कि वे थके हुए हैं। जल्दी अब उनसे चला नहीं जाता। लेकिन वे इसका दोष उम्र को नहीं, थकान को देते हैं। थकेंगे नहीं ? दिल्ली की ये बसें। सुबह भी खड़े-खड़े जाना पड़ा था, शाम को भी खड़े-खड़े आये—एक तरह से लटकते हुए, बहुत भीड़ रहती है··· तीन महीनों में ही वे बुरी तरह थक गये हैं। इस महीने में चालीस हो जायेंगे, ऐसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहुत रहती है, कितनी शिकायतें लिखीं—क्या हुआ उनका ? बड़े शहरों में कोई किसी की नहीं सुनता।

वे फिर पिछले शहर में लौटने लगे। वहाँ भी शाम हुई होगी। वहाँ कितना आराम था ! कॉलेज से ढाई-तीन बजे लौट आते थे। लौटकर आराम करते, कुछ पढ़ते या पेंट करते। घर बाहर का कोई काम होता तो उसे निपटाते, पर शामें हमेशा अपने लिए फ्री रखते। उनके दोस्त या विद्यार्थी आ जाते। दुनिया भर की बातें होतीं। हँसी-ठहाकों से ड्राइंगरूम गूँजता रहता। मन होता तो मित्रों के साथ घूमने चले जाते—कभी-कभी अपनी पत्नी और बच्चों के साथ भी। ताँगा एक रुपये में दौलतबाग पहुँचा देता है। ताँगे वाले पहचानते थे। अदब से नमस्ते करते। खुशी-खुशी बैठाते। और यहाँ की बसों के कंडक्टर हैं—बदतमीज़।

उनका मन कड़वा हो आया। फिर थकान महसूस हुई। हल्का-सा खेद भी—क्यों चले आये यहाँ ? लेकिन अपने इस 'क्यों' का उत्तर उन्हें स्वयं ही इतना अप्रिय लगा कि दिमाग़ झटक दिया। चले आने के सिवाय कोई विकल्प रह ही नहीं गया था। रक्षा ने उन्हें कहीं का नहीं छोड़ा···

अपनी बड़ी लड़की पर उन्हें हमेशा गुस्सा आता रहता है। उससे बात करना तो उन्होंने कभी का छोड़ दिया है—अब तो यहाँ तक सोचने लगे हैं कि या तो आत्महत्या कर लें या रक्षा का गला घोंट दें···लेकिन जानते हैं, वे कुछ भी नहीं कर पायेंगे। लेकिन करना तो कुछ होगा ही। सोचते हैं, सब कुछ छोड़कर कहीं चले जायें, पर उनके जाने से, जो हो चुका है, वह अनहुआ तो हो नहीं जायेगा। ज़्यादा-से-ज़्यादा चार-पाँच महीने···बच्चा तो होगा ही···

सिर झटककर वे अपनी चिंताओं को ठेलते हैं। आस-पास देखते हैं। क्वाटरों की पहली कतार शुरू हो गयी है। अँधेरा घिर आया है। लेकिन सड़क की बत्तियाँ अभी नहीं जलीं हैं। घरों के बाहर ऐसी ठंड में लोग कम ही निकलते हैं। लेकिन स्क्वेयर की घास पर बच्चे शोर मचाते हुए खेल रहे हैं। एक मकान से युवा दम्पत्ति बाहर निकले हैं—शायद घूमने जा रहे हैं, कितने खुश हैं ! इस तरह सटकर इनका चलना और पास से उन्हें देखे बिना गुज़र जाना···कौन समझता है दूसरे का दुःख-दर्द !

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

औरतों ने पत्थर के कोयलों की अँगीठियाँ सुलगा कर बाहर रास्ते में रख दी हैं। अँगीठियों से धुँआ उठ रहा है, लेकिन सर्दी के दबाव में ज़्यादा ऊँचा नहीं उठ पाता। नीचे ही घुट-फैल कर रह जाता है। कंप्रेस्ड स्मोक। अपनी ज़िंदगी जैसा। वे सोचते हैं। फिर घुटने लगते हैं। रक्षा का क्या किया जाये ? एबार्शन कराने को वह तैयार नहीं। उस लड़के का नाम वह बताती नहीं जिसने यह सब किया है। डाँट-डपट, मार-पीट सब बेकार। विजय ने कितना पीटा था उस दिन ! इतनी बेरहमी से तो पुलिस वाले भी नहीं पीटते होंगे किसी को ! फिर भी नहीं बोली। दवा लेने को तैयार नहीं। खाने की किसी चीज़ पर उसे शक हो जाये कि इसमें गर्भपात की दवा हो सकती है, तो छुएगी नहीं। खाना मत दो, कोई बात नहीं। भूखी रह लेगी। कब तक चलेगा ऐसा ?

यही सब सोचते कब घर पहुँच गये, उन्हें पता नहीं चला। घर के बंद दरवाज़े पर पहुँचकर वे अक्सर ठिठके-से रह जाते हैं। पहुँचने और दरवाज़ा खड़काने में थोड़ा वक्त लगता है। प्रायः रोज़ ही इच्छा होती है कि लौट जायें, कहीं चले जायें—कहीं भी। फिर कभी नहीं लौटें। कहीं किसी रेल की पटरी पर गर्दन रख दें ··· लेकिन वह उनसे होता नहीं।

दरवाज़ा खड़काया तो पत्नी की आवाज़ आयी—"कौ···न ?"

"मैं हूँ।" उन्होंने कहा। दरवाज़ा खुल गया। भीतर आये। दो कमरों के इस छोटे-से पोर्शन में उनकी गृहस्थी अँटती नहीं, फिर भी अँटाये हुए हैं। क्या करें ? बड़े मकान कम किराये पर कहाँ मिलते हैं ? अपने शहर की बात और थी। पचास रुपये में पूरा बँगला मिला हुआ था···

"आज फिर देर कर दी ?" पत्नी पूछती हैं तो वे सफाई-सी देने लगते हैं, "घंटे भर बस के इंतज़ार में खड़े रहना पड़ा आज तो।" जबकि वे सोचते हैं कि सफाई उन्हें नहीं, उस आदमी को देनी चाहिए, जो इतने ज़्यादा लोगों वाले शहर में भी घंटे भर बाद बस भेजता है।

"खाना अभी खायेंगे या ठहर कर ?" पत्नी दूसरा सवाल पूछती हैं। तक तक वे कमरे में आकर अपना बैग रख चुके होते हैं। उत्तर कुछ सूझता नहीं। बाहर जो धुँआ घुट रहा है, घर में भी घुट रहा है। वही कंप्रेस्ड स्मोक। चाहते हैं ज़रा देर दम ले लें। [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation (Chandigarh) and Digitized by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पी लें। एक सिगरेट भी। फिर कपड़े बदल कर गरम पानी से हाथ-पैर धोयें और फिर रसोई के पास बैठकर खाना खायें···हाथ-पाँव सर्दी में सुन्न हो गये हैं। लेकिन पत्नी के स्वर में सुझाव-सा है कि चाय-कॉफी के लिए न कहें। कह देते हैं, "अभी खा लेते हैं।"

"पानी गरम हुआ रखा है।" पत्नी कहती हैं तो वे जल्दी से जूते उतारने लगते हैं। उतारते-उतारते पैरों से आती हुई बदबू को झेलते हैं। आँख उठाकर देखते हैं, मुन्ना और जया दीवार के सहारे अपनी-अपनी किताबों में सिर डाले बैठे हैं।

"विजय कहाँ है ?" वे पूछते हैं।

"कहीं गया है, आता होगा।" पत्नी उत्तर देती हैं।

विजय बड़ा लड़का है। वहाँ पढ़ता था, यहाँ नहीं पढ़ता है। नौकरी करता है, कुछ दोस्त बना लिये हैं, जिनके साथ भटकता है। घर में सब उससे काँपते हैं, रक्षा को तो वह देख नहीं सकता। सामने आते ही धुन देता है। डर से वह कमरे में या रसोई में या बाथरूम में बंद हो रहती है तो गालियाँ बकता है, दरवाज़े पर ठोकरें मारता है। वश नहीं चलता तो छोटे भाई-बहन को पीट देता है। कोई उससे कुछ नहीं कह सकता।

उन्होंने एक बार कुछ कहने की कोशिश की थी। उसने झाड़ दिया था। मारने चले थे तो अपने मजबूत हाथ से उनका हाथ पकड़कर कहा था, "मुझ पर हाथ उठ सकता है आपका ! उस कुतिया पर हाथ उठाते शरम आती है ?"

"शरम कर, वह तेरी बहन है।" मां ने बेटे को डाँटा था।

"मेरी कोई बहन नहीं है, मेरी बहन होती तो अब तक डूब मरती या जल मरती।"

विजय की बात पर उन्हें गुस्सा आ गया था और वे विजय से अपना हाथ छुड़ाकर कोने में थर-थर काँपती रक्षा की ओर बढ़ गये थे। उसका हाथ पकड़कर आगे खींचा था और पागलों की तरह न जाने क्या-क्या बकते हुए पीटने लगे थे। भाई के हाथों पिट कर एक बार भी रक्षा के मुँह से आवाज़ नहीं निकली थी, उस दिन बाप के हाथों पिटी थी तो ज़ोर से डकरायी थी—जैसे किसी ने गर्म सलाखों से दाग़ दिया हो, और विजय ने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आकर कहा था, "चुप, हरामजादी ! चिल्लायी तो जबान खींच लूँगा !" और बाप को धक्का देकर बोला था, "हटिये आप, इसे तो मैं देखूँगा।" फिर एक लात रक्षा की पीठ पर जमा कर उसने पूछा था, "बताती है उसका नाम, या एक और दूँ ?"

एक लम्बी-सी साँस लेकर वे अपने कमरे से निकल आये। गरम पानी लगभग ठंडा हो चुका था, लेकिन उन्होंने कुछ कहा नहीं। उसीसे हाथ-पाँव धो आये। बाथरूम से वापस कमरे की ओर लौटते हुए देखा, रक्षा दबे पाँव रसोईघर से निकलकर दूसरे कमरे में जा रही है—अपने कमरे में। उनका मन भीग आया। इच्छा हुई, पास जाकर पुचकार लें। कहें, "कितना अन्याय हो रहा है तेरे साथ !" लेकिन रुक गये। यह बताती क्यों नहीं ?

कमरे में चारपाइयाँ बिछ चुकी थीं। एक उनकी, एक विजय की। बाकी सब लोग दूसरे कमरे में सोते हैं। अंदर से दरवाज़ा बंद करके। क्या पता, रात में विजय क्या कर डाले। डरते वे भी हैं। रात को ठीक से नींद नहीं आती, लगता है, जैसे किसी खूँखार जानवर के पिंजड़े में सो रहे हों। जानवर इस समय नहीं है—यह सोचकर उन्हें राहत मिली। दीवार की ओर देखा, मुन्ना और जया न जाने कब चुपके से दूसरे कमरे में खिसक गये थे।

"खाना यहीं ले आऊँ ?" पत्नी ने पूछा।

"ले आओ।" कहकर निढाल-से अपनी खाट पर बैठ गये। पत्नी खाना ले आयीं तो थाली घुटनों पर रखकर खाना खाने लगे। खाना खाते समय न जाने क्यों उन्हें बेशरमी-सी महसूस होती है, जैसे कान में कोई कहता है, "खा रहा है बेग़ैरत ! चुल्लू भर पानी में डूब मर।" लेकिन वे चुप-चाप खा लेते हैं। उसी तरह, जैसे और सब काम कर लेते हैं। चुपचाप सिर झुकाये हुए।

खाने के बाद बोले, "तुम खाकर सोओ। वह आयेगा तो मैं दरवाज़ा खोल दूँगा।"

पत्नी उत्तर नहीं देतीं, बस, थाली उठाकर चली जाती हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

उन्हें एकाएक ठंड लग आती है। रजाई ओढ़कर लेट जाते हैं। नींद

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की दीवार पर अपनी ही बनाई हुई बड़ी-सी पेंटिंग है। उसकी ओर देखते रहते हैं—टकटकी बाँधे। हर रात इसी तरह देखते हैं। देखते-देखते पेंटिंग का आयातकार चौखटा खिड़की बन जाता है। और उस खिड़की से अतीत में कूद जाते हैं।

कॉलेज याद आता है। कॉलेज से पहले अपना बँगले-जैसा बड़ा और आरामदेह मकान। उनके ड्राइंगरूम में पेंटिंग लगी रहती थी। घर में आने वाला हर कोई देखता था और सराहता था। अब कोई नहीं आता। अब वे किसी को अपने घर लाना नहीं चाहते। सबसे कट गये हैं। कॉलेज के उनके सहयोगी क्या सोचते होंगे ? आये थे तब एक ग़लत—काल्पनिक पता सबको दे आये थे। उन लोगों ने पत्र लिखे होंगे ? ज़रूर लिखे होंगे। पत्र डाक में इस शहर तक आये भी होंगे। पोस्टमैन उन्हें लेकर इस शहर में घूमे भी होंगे, झुंझलाये होंगे। फिर पत्र वापस कर दिये गये होंगे या डी० एल० ओ० भेज दिये गये होंगे। डी० एल० ओ०···डैड लैटर ऑफिस··· मृत पत्र कार्यालय···पत्र भी मर जाते हैं ? हाँ। वे, जिन्हें पाने वाला कोई नहीं होता···या जिन्हें कोई पाना चाहता नहीं···

रक्षा और उसके होने वाले बच्चे का ध्यान आ जाता है। उसके बच्चे का बाप आखिर कौन हो सकता है ? रक्षा का कोई सहपाठी ? या कोई अध्यापक ? या कोई और ? और, तो कौन ? कब ? कहाँ ? कैसे ? रक्षा कहाँ-कहाँ जाती थी ? किस-किस से मिलती थी ? ज़्यादा तो आज़ादी उसे थी नहीं···फिर ? फिर यह डैड लैटर ? मृत पत्र ? जीवित बच्चा ?

प्रश्नों का कोई अन्त नहीं और उत्तर सब नदारद। वे सोचते रहते हैं और जागते रहते हैं। विजय पास में सो रहा हो तो डरते भी रहते हैं। कभी-कभी पूछते हैं, "सो गये विजय ?" और विजय जाग रहा होता है और पूछ लेता है कि क्या बात है, तो क्षमा-सी माँगते हुए कहते हैं, "कुछ नहीं—यों ही पूछ लिया। सो जाओ।" फिर अपने आपसे पूछते हैं, "मैं क्यों डर रहा हूँ ? मुझे क्या हो गया है ? यह मेरा लड़का ही तो है। शेर तो नहीं है कि मुझे खा जायेगा ? तब मैं क्यों डरूँ ? ज़्यादा चीं-चपड़ करेगा तो इसे घर से निकाल दूंगा। क्या कर लेगा मेरा ? जाये, भटके मरे। मेरा क्या ? अभी तो मेरे हाथ-पाँव चलते हैं। पूरी तरह इसी पर तो आश्रित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं हूँ।"

लेकिन अगले ही क्षण झुरझुरी-सी हो आती है। लड़की या लड़के को घर से निकाल देने के बाद क्या होगा, यह वे स्वयं भी नहीं जानते। खूब सोचकर भी कुछ स्थिर नहीं कर पाते। फिर भी उन्हें लगता है कि यदि ऐसा किया तो कहीं के नहीं रहेंगे।

फिर अपने बारे में सोचने लगते हैं। किस तरह घोर गरीबी में पलकर पढ़-लिखकर ड्राइंग-पेंटिंग का डिप्लोमा लिया। लेक्चरर बने। आदर्श विद्यार्थी, आदर्श पति, आदर्श पिता, आदर्श अध्यापक बनने के लिए उन्होंने क्या नहीं किया ?और लोगों ने माना भी। प्रिंसिपल तक इज्ज़त करते थे। और विद्यार्थी···कितने ही लड़के-लड़कियों ने अपनी व्यक्तिगत समस्याएँ तक उनकी सहायता से सुलझायी हैं···कितना मान-सम्मान ! और उन्हीं के घर में यह सब हुआ कि आज वे मुँह छिपाये फिर रहे हैं। अध्यापन छोड़कर एक मामूली कमर्शियल आर्टिस्ट के रूप में नौकरी कर रहे हैं। लड़के-लड़कियों का बिगड़ना अपनी आँखों से देख रहे हैं। इन सबका ज़िम्मेदार कौन है ?

कहीं से कोई उत्तर नहीं आता। वे झुँझलाने लगते हैं। चीखना चाहते हैं, लेकिन चीख नहीं पाते। रोना चाहते हैं, रो नहीं पाते। लड़की को क्षमा कर देना चाहते हैं, लेकिन नहीं कर पाते। लड़के को रास्ते पर लाना चाहते हैं, लेकिन ला नहीं पाते। अपना अपमान भी पी जाते हैं। क्यों ? घर में किसका किससे क्या सम्बन्ध रह गया है ? वह उसे कुतिया कहता है। हरामजादी कहता है···हराम···उनकी इच्छा होती है, सिर दीवार से टकरा दें···

एक दिन यह भी करके देख चुके हैं। विजय ने रक्षा को मारा और रक्षा ने स्टोव का केरोसीन अपने ऊपर उँडेल लिया था। आग लगाने चली तो माँ ने पकड़ लिया। तेल-भीगे कपड़े खींचकर अलग कर दिये। विजय को गालियाँ दीं। उन्होंने यह सब देखकर दीवार में सिर दे मारा था। पूरे आवेग से चार-पाँच बार। माथे से खून निकल आया था। फिर विजय ने उन्हें पकड़ा था, "पागल हो गये हैं ?"

"हाँ, मैं पागल हो गया हूँ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अच्छा ठीक है, अब चुपचाप इधर लेट जाइये···मम्मी, इनके माथे पर पट्टी बाँध दो।" विजय ने जबरदस्ती उन्हें लिटा दिया था और पत्नी ने माथे पर पट्टी बाँध दी थी। चुपचाप रोती हुई पत्नी के कितने आँसू उनके चेहरे पर गिरे थे, उन्हें याद नहीं, लेकिन उन बूँदों की उष्णता उन्हें याद है—बिलकुल वैसी ही, जैसी अपने चेहरे पर बहते हुए अपने खून की। फिर वे खुद भी रोये थे। विवश। निरुपाय। अपनी स्थिति को ठेलने-बदलने में असमर्थ, पराजित।

दूसरे दिन माथे पर बँधी पट्टी के साथ दफ्तर गये तो झूठ बोलना पड़ा था, "कल रात गिर गये, पैर फिसल गया था।" लेकिन माथे की पट्टी ने उन्हें उस दिन संकट में डाल दिया। दफ्तर में शुरू से ही वे इस तरह गुमसुम रहते आये थे कि किसी से सम्पर्क न बने, किसी को कुछ बताना न पड़े। उन्हें बताना पड़ा और बताने-नहीं-बताने की कोशिश में वे लोगों की दृष्टि में संदिग्ध होते गये। उन्हें लगा, उनके माथे की पट्टी और रक्षा के उभरे हुए पेट में कुछ समानता है और कुछ सोचकर उन्होंने मामूली जख्म होने की बात कहकर पट्टी उतार दी थी। तब दर्द उतना नहीं महसूस हुआ था जितना उस जख्म के कलंक होने का अहसास।

घर आकर रक्षा से कहा था, "तुझे मेरे माथे के इस कलंक की बिलकुल परवाह नहीं ?"

रक्षा हमेशा की तरह रोने लगी थी। रोते-ही-रोते बोली, "आप लोग मुझे मर क्यों नहीं जाने देते ?"

"मर कैसे जाने दें, तू हमारी बेटी नहीं है ?" कहते-कहते वे बहुत भावुक हो आये थे। लेकिन रक्षा ने अपने उत्तर से उन्हें आर-पार चीर दिया था, "मैं किसी की बेटी नहीं हूँ, किसी की बहन नहीं हूँ।" और वह उनके पास से उठ गयी थी।

दरवाज़े पर आहट-सी होती है, शायद विजय आया है। वे कुछ देर कान लगाये सुनते रहते हैं। दरवाज़ा नहीं खड़कता तो फिर लस्त होकर पड़ जाते हैं। दूसरे कमरे से बेहद हल्की आवाज़ में की जाती हुई बातों की आवाज़ें आ रही हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मैं इतना कमज़ोर क्यों हो गया हूँ ? क्यों कोई निर्णय ठीक से नहीं

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ले पाता ? क्यों अपनी आँखों के सामने यह सब होते देखता रहता हूँ ? इस मार-पीट का आखिर कोई इलाज भी है ? यह रक्षा की बच्ची कुछ बोलती क्यों नहीं ? बता दे तो वे जाकर उस लड़के से मिलें। उसका भय—यदि उसके मन में कोई भय हो तो—दूर करें। उसके साथ रक्षा की शादी कर दें। या कम से कम उसे रक्षा के सामने ले आयें एक बार, और गरजकर पूछें, "बोलो, तुम्हें इसके होने वाले बच्चे का बाप बनना मंज़र है या नहीं ?" मर्द होगा तो हाँ कह ही देगा। नहीं तो उसके मुँह पर थूककर उसे घर से बाहर कर देंगे, लात मारकर, और रक्षा से कहेंगे, "देख लिया ? इसी के पीछे तू जान देने पर तुली है ? करा दे एबार्शन और छुट्टी कर।

लेटे-लेटे ही उन्होंने एक लम्बी साँस ली। जैसे मन-ही-मन उस असम्भव और अकाल्पनिक घटना को पीकर थक गये हों। विरक्त होकर करवट बदली। अनायास माथे पर हाथ चला गया। चोट की जगह एक खुरंट पड़ गया है। सिर दर्द उस दिन से बराबर बना रहता था। वे प्रायः दर्द को भूले रहते। लेकिन खुरंट को छुआ तो दर्द उभर आया। फिर वे एका-एक चौकन्ने हो गये। नसों में कुछ सनसनाता हुआ-सा महसूस हुआ। गुस्सा तो दिन में कई-कई बार आता था, लेकिन वह कोई और चीज़ थी। उस चीज़ को वे समझ नहीं पाये।

रजाई को फेंककर उठ खड़े हुए। बाहर आये। दूसरा कमरा अभी बन्द नहीं हुआ था। किवाड़ यों ही उढ़काये हुए थे। ठेलकर अन्दर चले गये। पत्नी घबराकर उठ बैठी। रक्षा भी। वह अप्रत्याशित ऊँचे स्वर में बोले, "इज्ज़त जाती है तो मेरी जाती है, इस लड़की की जाती है। हम भुगत लेंगे। वह कौन होता है इस तरह मारपीट करने वाला ? आज आने दो उसे, मैं देख लूँगा।"

पत्नी सिहर गयीं। पता नहीं, क्या होने वाला है ! उनको बैठने को जगह कर दी। वे बैठ गये तो उठकर चाय बनाने चल दी। छोटे बच्चे शायद सो गये थे या रजाई में मुँह ढँके चुपचाप खड़े थे। रक्षा समझ नहीं पायी कि अचानक यह पापा को क्या हो गया है।

उन्होंने रक्षा के सिर पर हाथ फेरा, उसे अपने पास खींच लिया। रुँधे [illegible] से बोले, "पता नहीं मुझे क्या हो गया था [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हो गया···आज आने दो उसे···"

रक्षा कुछ नहीं कह सकी। पिता के सीने से लगी रोती रही। मम्मी चाय ले आयीं तो उसने आँसू पोंछ लिये। तीनों चाय पीने लगे। चुपचाप सिप करने की आवाज़ के सिवा कोई आवाज़ नहीं। तीन दबी-दबी साँसों की आवाज़ के सिवा कोई आवाज़ नहीं। प्लेट से प्याली के टकराने की आवाज़ के सिवा कोई आवाज नहीं। सब-कुछ जैसे किसी अनहोनी की आशंका में ग्रस्त और प्रतीक्षारत।

दरवाज़ा खड़का तो पत्नी उछलकर उठ बैठीं। अपनी चाय नीचे रखकर उनके हाथों से भी कप-प्लेट छीन लिये। बेहद घबराये और फुसफुसाहट के स्वर में बोलीं, "उठो, चलकर उधर लेटो, तुम्हें मेरी कसम, इन बच्चों की कसम जो उससे कुछ कहा···"

दरवाज़ा फिर खड़का। साथ ही विजय की आवाज़, "सब मर गए क्या ?"

"उठो, जल्दी करो, तुम्हारे पाव पड़ूँ, उससे कुछ मत कहना।" पत्नी ने कहा और वे उठ आये। पत्नी उन्हें पकड़कर खींचती हुई-सी उनके कमरे में लायीं। लिटा दिया। रजाई ओढ़ा दी। तब तक दरवाज़ा भड़भड़ाया जाने लगा था। पत्नी ने दौड़कर खोल दिया।

"सब लोग बहरे हो गये हैं क्या !" विजय गुर्राता है।

"नहीं, ज़रा आँख लग गयी थी···।" पत्नी क्षमायाचना-सी करती हैं।

वे दम साधे लेटे हुए सुनते रहते हैं। जल में डूबे-हुए से। उनकी आँखों में पानी भर आता है। उन्हें लगता है, सागर-तल में एक पूरा शहर डूबा हुआ है और वे पानी में डूबे-ही-डूबे कोई मकान तलाश कर रहे हैं और वह मकान उन्हें नहीं मिल रहा है। थोड़ी देर और नहीं मिला तो उनका दम घुट जायेगा। साँस को और ज़्यादा नहीं साध सकेंगे। पानी पी जायेंगे। मर जायेंगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अलग और विपरीत

मकान देखकर वह खुश हो गया। ठीक वैसा ही है जैसा वह चाहता था। कमरे दो ही हैं, लेकिन बड़े-बड़े हैं। किचन भी बड़ा है और उसमें खड़े होकर खाना बनाने की सहूलियत भी है। पत्नी यही तो चाहती थी। पीछे आँगन है, सामने बरामदा है और बरामदे के आगे थोड़ी-सी कच्ची ज़मीन, जिसमें कुछ भी बोया-उगाया जा सकता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इंडिपेंडेंट सैट है। न मकान-मालिक की चखचख, न दूसरे किरायेदारों से होने वाला झगड़ा-झंझट। कभी भी आओ, कभी भी जाओ, अपने घर में कुछ भी करो। कालोनी भी अच्छी है। साफ-सुथरे शरीफ लोग रहते हैं। किराया कुछ ज़्यादा है, पर उससे क्या होता है। इतनी सुविधाएँ मिल रही हैं तो कुछ तो अतिरिक्त खरचना ही पड़ेगा।

"क्यों भई, क्या ख्याल है ? ले लें ?" उसने पत्नी से पूछा। उसकी आवाज़ में अंदेशा था कि पत्नी कहीं मना न कर दे। और उसकी आशंका सच निकली। पत्नी ने मरी-सी आवाज़ में कहा, "मकान तो अच्छा है, लेकिन पुरानी बस्ती में सुविधाएँ ज़्यादा हैं। हर चीज़ पास है—बस स्टैंड, दूध का डिपो, सब्जी वाले, आटे की चक्की···

वह जैसे इस आपत्ति के लिए तैयार था, "अब हर सुविधा तो एक साथ मिल नहीं सकती।"

पत्नी ने भी जैसे एक ट्रम्प कार्ड रख छोड़ा था, "लेकिन बेबी का भी तो सवाल है। उसे यहाँ कौन रखेगा ?"

"क्यों ? जिनके कोई रिश्तेदार पड़ोस में नहीं रहते, उनके बच्चे क्या पलते नहीं हैं ? और फिर, हम तो माँ को बुला लेने का फैसला कर चुके

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं।"

पत्नी चुप हो गयी। वह अकसर यों ही बात करते-करते चुप हो जाती है। और तब उसे बड़ी उलझन होती है। आपके पास चाहे जितने उम्दा तर्क हों, सामने वाला अगर बोलना बंद कर दे तो आपके सारे तर्क बेकार हो जाते हैं। फिर भी उसने पत्नी को समझाने की गरज से कहा, "देखो अनु, कोई नया काम करने चलते हैं तो कुछ कठिनाइयाँ तो आती ही हैं, लेकिन धीरे-धीरे राह निकल आती है। आखिर इतने लोग यहाँ रहते हैं, इनके सामने ये कठिनाइयाँ नहीं होंगी? और पुरानी बस्ती में जब तुम लोग आकर रहे होगे, तब भी तो शुरू-शुरू में कुछ कठिनाइयाँ आयी होंगी?"

उसने पत्नी की ओर देखा कि शायद कुछ बोलेगी, लेकिन वह चुपचाप चलती रही। वह झुँझलाहट की पहली लहर अपने अन्दर महसूस करने लगा। उस समय वे कालोनी के बीच बने पार्क से गुज़र रहे थे। पार्क की हरी घास दोपहर की धूप में चमक रही थी। सर्दियाँ अभी ज़ोरों से शुरू नहीं हुई थीं, मगर हवा में इतनी ठंडक ज़रूर आ गयी थी कि धूप सुहाने लगे। कुछ बच्चे पार्क में खेल रहे थे। कॉरपोरेशन के कुछ कर्मचारी पार्क के बीचोंबीच लगे फव्वारे पर नीला पेण्ट कर रहे थे। आस-पास के मकानों से रेडियो बजने, बातें करने, और हँसने की आवाज़ें आ रही थीं। रविवार था, इसलिए कालोनी सुस्ती में अलसाई-सी छुट्टी मना रही थी।

वह बेबी के बारे में सोचने लगा। बड़ी हो जायेगी तो वह भी इन बच्चों की तरह यहीं आकर खेला करेगी। तब तक वह रोज़ सुबह-शाम उसे गोद में लेकर यहाँ घुमाने लाया करेगा। खुली हवा सेहत के लिए कितनी ज़रूरी होती है—खासतौर से बच्चों की सेहत के लिए! लेकिन···

उसने फिर पत्नी की ओर देखा। वह उसी तरह चुप थी। उसके चेहरे से भी कुछ जाना नहीं जा सकता था। पत्नी के चेहरे की यह विशेषता उसे बहुत पहले से मालूम है। देखकर आप अन्दाज़ा भी नहीं लगा सकते कि वह क्या सोच रही है। झुँझलाहट की दूसरी लहर उसने महसूस की।

तभी ठंडी हवा का एक तेज़ झोंका आया और उसका सुख उसके मन को छू गया। वह जानने लगा, सर्दी आने वाली नहीं, बल्कि ये उतरती

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सर्दी के दिन हैं। मार्च-अप्रैल के-से। हवा में वैसी ही ठंडक और वैसी ही खुश्की। धूप में वैसी ही गरमाहट। वे परीक्षाओं के दिन होते थे···

अनजाने ही उसके मुँह से एक ठंडी-सी साँस निकल गयी। अंतिम परीक्षा दिये हुए अभी दो ही साल हुये थे, पर उसे लगा, जैसे वह दसियों साल पहले की बात है। वे दिन उसे दूर अँधेरे में झिलमिलाती किसी रंगीन रोशनी जैसे लगे। जैसे अँधेरी रात में रेल के सिगनल पर चमकते हुए लाल या हरे बिंदु। और उस रंगीन रोशनी के पीछे छूटी हुई एक ज़िन्दगी···

—तुम मेरा साथ कहाँ तक दोगी ? मेरे इरादे तो बहुत दूर तक जाते हैं।

—मैं तुम्हारे इरादों की पहुँच से भी आगे तक तुम्हारा साथ दूँगी।

ना, अब उस सबको याद करने से कोई फ़ायदा नहीं। उस उम्र में ऐसी बातें बड़ी सहजता से कह दी जाती हैं, उनका कोई मतलब थोड़े ही होता है ! कहाँ होगी अब वह ? कहीं भी हो, क्या फ़र्क पड़ता है।

वह अपने आप में लौट आया। पार्क पीछे छूट गया था। सामने मेन रोड दिखायी दे रही थी। दस पन्द्रह कदम दूर बस-स्टैंड। पत्नी अब भी चुप थी। उसने हाँ या ना कुछ भी सुनने के विचार से पूछा, "तो क्या फैसला किया ? मकान बदलना है या नहीं ?" फिर भी कोई उत्तर नहीं मिला तो उसे गुस्सा आ गया, "अगर नहीं बदलना है तो शिकायतें क्यों करती हो ? क्यों कहती हो मुझसे दूसरा मकान देखो ? इस तरह चुप रहना था तो आयी ही क्यों थीं मेरे साथ ? क्या जरूरत थी इतनी दूर आकर छुट्टी बरबाद करने की ?"

उसे लगा, हर प्रश्न के साथ उसके स्वर की उत्तेजना बढ़ती जा रही है। पास से गुज़रते हुए लोगों ने चौंक कर देखा तो वह धक्का-सा खाकर बोलते-बोलते रुक गया। जैसे अचानक कोई मोटी-सी सुई लगा कर सिरिंज में सारी ताकत खींच ले और अन्दर का खोखल बाहरी हवा का दबाव सह नहीं सकने के कारण पिचकने लगे। अचानक उसने अपने-आपको एकदम बेकार, वाहियात और बेहद कमज़ोर महसूस किया। और ऐसे क्षणों में हर बार उसके मन में उठने वाला प्रश्न फिर उठा—आखिर मेरा और इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

खेल का क्या रिश्ता है ?

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्नी—पत्नी का रिश्ता नहीं है, यह बात शादी के कुछ दिन बाद ही उसकी समझ में आ गयी थी। उसने जितने भी पति-पत्नी देखे थे, उन सबसे अलग था उसका मामला। उसने देखा था कि शादी होती है, पत्नी आती है, एक गृहस्थी बसायी जाती है, फिर उस गृहस्थी के सदस्यों की अलग-अलग चीज़ें एक हो जाती हैं। एक अलिखित समझौता-सा होता है कि अब सुख-दुःख, आय-व्यय में साझेदारी चलेगी। इसके सगे-संबंधी उसके हो जायेंगे और उसके सगे-संबंधी इसके। मेरा-तेरा की जगह सब कुछ 'हमारा' हो जायेगा। लेकिन उसके साथ ऐसा नहीं हुआ। हालाँकि विवाह वेदी पर पंडित ने मंत्र पढ़-पढ़ कर इसी समझौते की शर्तों पर प्रतिज्ञाएँ करायी थीं, फिर भी नहीं हुआ।

उन दिनों वह एक छोटे-से शहर में नौकरी करता था। शादी से पहले उसने अपनी आमदनी और आने वाले खर्चों का पूरा हिसाब लगा लिया था और संतुष्ट था कि वह गृहस्थी की गाड़ी खींच लेगा। लेकिन शादी के बाद उसके सामने यह बात आयी थी कि पत्नी यह शहर नहीं छोड़ेगी, क्योंकि यहाँ वह अच्छी सर्विस में है और इस मँहगाई के ज़माने में पक्की सरकारी और अच्छे वेतन वाली नौकरी छोड़ देना कोई बुद्धिमानी नहीं है। और फिर पत्नी ने कहा था, "डैडी कह ही रहे हैं कि आपको भी यहाँ कोई सरकारी नौकरी दिला देंगे। वहाँ इतने कम पैसों पर प्राइवेट स्कूल में पड़े रहने में क्या तुक है ? फिर, बड़े शहर में बढ़ने के जितने मौके होते हैं, छोटे शहर में कहाँ ! आप तो अपना सामान समेट कर आ जाइये, बाकी सब मैं देख लूँगी। वैसे तो सर्विस आपको भी मिल ही जायेगी, न भी मिले तो मेरी सर्विस तो है ही। मकान की भी कोई समस्या नहीं है। डैडी दूसरा मकान ले रहे हैं, इसमें हम लोग रहेंगे। बरसों पहले का लिया हुआ है, इसलिए किराया भी कम है। आज ऐसा मकान लेने चलें तो दो-ढाई सौ से कम में नहीं मिलेगा। इसलिए ज़्यादा सोच-विचार में मत पड़िए…"

उसने पत्नी की बात मान ली थी, हालाँकि अपना शहर छोड़ने में उसे तकलीफ हुई थी। भाई-भाभी को तो उसने समझा-बुझा दिया था, लेकिन माँ को समझाने में बहुत दिक्कत हुई थी। माँ की समझ में ही नहीं आती थी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कि यह कैसी शादी कि बहू घर में आने के बजाय बेटा घर से जा रहा है। फिर उसने घरजवाइयों के कई किस्से सुनाये थे कि कैसे उनकी इज्ज़त जाती रही है—जवाँई साल-छः महीने में जाये तो सब हाथोंहाथ लेते हैं सिर पर बैठा के रखते हैं, और वहीं रहने लगे तो उसकी कदर दो कौड़ी की हो जाती है···" माँ की समझ में यह भी नहीं आता था कि औरत कमाये और मर्द खाये, ऐसा कैसे हो सकता है। "औरत की जगह तो घर में होती है। भइया, तू तो उसे यहीं ले आ, दुःखे-सुखे जैसे रहते हैं, रह लेंगे। बड़े शहर में आमदनी ज़्यादा है तो खर्च भी ज़्यादा ही होगा। तेरे बाबूजी कहा करते थे, धन में धन संतोष धन। दो जून पेट भर जाये, तन ढँकने को कपड़ा मिल जाये, सिर छुपाने की जगह मिल जाये, बस। इसके बाद पैसे की हाय-हत्या छोड़ कर इंसान को परलोक सुधारने की सोचनी चाहिए। सो इतना तो भगवान की दया से यहाँ भी मिल जायेगा···"

और उसे माँ को समझाने के लिए बहुत-से तर्क देने पड़े थे, "अम्मा, अब वो बाबूजी वाला ज़माना नहीं रहा। औरत-मर्द के रिश्ते भी अब पहले जैसे नहीं रहे। लड़कियाँ पढ़ती-लिखती हैं तो इसलिए नहीं कि घर में बैठें। अच्छे-अच्छे घरों की औरतें सर्विस करती हैं। संतोष-वंतोष से भी अब काम नहीं चलता। बाबूजी सारी उम्र संतोष किये रहे, इसलिए भइया को और मुझे कमाने-खाने लायक बनने में इतनी तकलीफें उठानी पड़ीं। ट्यूशनें कर-कर के तो पढ़े फिर भी बन क्या पाये ? मास्टर ! संतोष में बाबूजी ने तो अपना परलोक सुधार लिया पर हम लोगों का इहलोक बिगाड़कर रख दिया ! हमारे साथ के लड़कों को देखो···"

माँ इस अंतिम तर्क से परास्त हो गई थीं। रोती रही थीं, कुछ बोलीं नहीं फिर। चलते समय उसने पाँव छुए थे तब भी आशीष के शब्द सुनायी नहीं दिये थे। भइया ने कहा था, "अगर वहाँ मामला नहीं जमे तो बहू को लेकर निस्संकोच चले आना।" और उसने 'हाँ' इस तरह कहा था जैसे कह रहा हो, "मामला जमेगा क्यों नहीं ?"

यह सिर्फ डेढ़ साल पहले की बात है, पर उसे लगने लगा है जैसे बहुत-बहुत बरस बीत गये हैं और भीगी हुई आँखों से दी गयी वह विदा किसी पुराने ज़माने की चीज हो गयी है। कभी-कभी वह कल्पना करती है कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grai

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विदा का वह क्षण फिर लौट आया है और मुड़ कर ताँगे में जा बैठने के बजाय वह ताँगे से अपना सामान उतार लाया है और माँ से कह रहा है, "लो, मैं नहीं जा रहा।" लेकिन इस कल्पना के बाद वह असह्य पीड़ा से भर उठता है। उसे लगता है, अब वह दरवाज़ा हमेशा के लिए बंद हो चुका है और अब वह कभी लौटकर नहीं जा सकेगा।

यहाँ आया था, तब तक पुरानी बस्ती वाला मकान खाली हो चुका था। पत्नी के परिवार वालों ने वहीं पड़ोस में दूसरा मकान ले लिया था। नये मकान में उन्होंने नया फर्नीचर डलवा लिया था, नये पंखे लगवा लिये थे, किचेन के लिए गैस का नया चूल्हा खरीद लिया था और गृहस्थी का सब ज़रूरी सामान बेटी के उपयोग के लिये छोड़ दिया था ! आते ही यह देखकर उस पर अपनी ससुराल वालों के बड़प्पन की छाप पड़ी थी। मन ही मन उसने सोचा था, पैसा हो तो जीवन में कितनी उदारता बरती जा सकती है।

उन लोगों की उदारता का कायल तो वह पहले ही हो चुका था जब शादी की बात चलने पर उन्होंने स्पष्ट कह दिया था कि हम अपनी लड़की के लिए पैसे वाला घर नहीं, सिर्फ योग्य लड़का चाहते हैं, पैसा तो भगवान का दिया हमारे पास भी बहुत है। उसी उदारता से उन्होंने शादी में अपनी बेटी को कपड़े और गहने दिये थे। बात पक्की होने पर माँ को बुरा लगा था कि ये लोग दहेज में कुछ नहीं देंगे, लेकिन बहू के साथ आये जेवर-कपड़े देखकर वे खुश हो गयी थीं। भइया के ब्याह में दो हज़ार नकद तो मिल गये थे पर भाभी को वही मिला था जो कर्ज़ करके भइया ने बनवा लिया था—गिनती के तीन गहने—कानों के झुमके, नाक की नथ और गले की चेन। दहेज के दो हज़ार बरात और दावत में लग गये थे और कर्ज़ चढ़ा रह गया था। उसे उतारने के लिए भाभी ने तीनों चीज़ें उतारकर भइया को पकड़ा दी थीं। रोल्ड गोल्ड के झुमके कानों में डाल लिये थे और गले में नकली मोतियों की ढाई रुपये वाली माला पहन ली थी···

लेकिन माँ की खुशी उस दिन खतम हो गयी थी जब शादी के दस दिन बाद उनकी छोटी बहू की छुट्टियाँ खतम हो गयीं थीं और उसे वापस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लौटना था। बहू अपनी चीज़ें इस तरह समेट कर अपने सूटकेसों में भर रही थी जैसे अब कभी न लौटना हो। उसके गहनों का एक सेट माँ ने अपने हाथों से बड़ी बहू को पहना दिया था और उस समय छोटी बहू कुछ नहीं बोली थी। लेकिन वह तब भी कुछ नहीं बोली जब भाभी ने सब चीज़ें उतारकर उसे थमा दी थीं। माँ को विश्वास नहीं हुआ था, "क्या उसने एक बार भी नहीं कहा कि जीजी पहने रहो ?" भाभी हँसने लगी थीं और फिर अचानक रो पड़ी थीं।

यहाँ आने के बाद उसने पत्नी से इस घटना का जिक्र करते हुए कहा था, "अगर एक सेट भाभी के पास ही रह जाता तो क्या हर्ज था।" और पत्नी ने तिनक कर कहा था, "तुम बनवा दो। फिर जितने चाहो दान करा देना !" वह 'तुम' इतना ज़ोर देकर बोली थी कि उसे लगा, पत्नी उसकी औक़ात बता रही है। वह चुप, देखता रह गया था। अंदर तक तिलमिला जाने के बावजूद उसने सोचा था कि मज़ाक में कह रही होगी।

और बाद में तो ऐसे 'मज़ाक' रोज़ होने लगे थे। डैडी ने नौकरी दिला देने के आश्वासन तो बहुत दिये थे, लेकिन 'कोई ढंग की' नौकरी उनके ध्यान में अभी आ नहीं पा रही थी। वह बेकार रहने लगा था। नये शहर में उसका मन भी नहीं लगता था। पत्नी दफ्तर जाने से पहले कुछ पैसे दे जाती थी। पर उसकी समझ में ही नहीं आता था कि उन पैसों का क्या करे। वह कहती, घूम आया करो, पिक्चर देख आया करो, लेकिन कोई कितना घूमे ? कितनी पिक्चरें देखे ? और वह जिसे पता हो कि एक छोटे शहर में उसके बड़े भाई को पंद्रह रुपये की ट्यूशन के लिए महीने भर तक रोज़ एक घंटा किसी मंदबुद्धि बच्चे को पढ़ाना पड़ता हो। पत्नी का इस समय पैसे देकर चले जाना उसे अपने साथ किया गया एक बेहूदा मज़ाक लगता। एक दिन उसने रहस्योद्घाटन-सा करते हुए कहा था, "जानती हो, तुम जो पैसे दे जाती हो, मैंने—बचा-बचा कर पूरे पचास रुपये कर लिये हैं। भइया को भेज दूँगा तो कितने खुश हो जायेंगे !" और जवाब मिला था, "लाओ रुपये मुझे दो ! जब खुद कमाने लगो तो भेजना खूब !"

"तुम ऐसी बातें क्यों करती हो ? अपना काम तो ठाट से चल ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहा है। भइया की कुछ मदद हो जायेगी···।" पत्नी चुप रह गयी थी और उसके बाद उसने ऐसी हर बात पर चुप रहना शुरू कर दिया था। वह बोलता जाता, समझाता जाता, हँसते-हँसते पत्नी के मन में सहृदयता जगाने की कोशिशें करता जाता और पत्नी चुप रहती। यह भी नहीं पता चलता था कि वह सुन भी रही है या नहीं। रात के समय तो वह बोलते-बोलते अचानक पाता कि पत्नी न जाने कब की सो चुकी है। तब उसे धक्का-सा लगता। क्या वह अपनी बात दीवारों से कहता रहा है ? स्विच बोर्ड पर लगे नन्हें से बल्ब की धुँधली रोशनी में उसे कमरे की दीवारें सिमट-सरक कर पास आती हुई लगतीं और छत नीचे को झुकती हुई। छत से लटकता पंखा, जो उन दिनों सर्दी के कारण बंद रहता था, तीन के बजाय कई-कई पंखुड़ियों वाला लगता और वे पंखुड़ियाँ फिल्म में देखे हुये जलचर अष्टपद के पैरों की तरह बढ़-फैलकर उसे अपनी लपेट में लेने को उतरती-सी दिखायी पड़तीं। वह सोयी हुई पत्नी को देखता और देखता रह जाता।

ऐसे ही किसी क्षण में उसके मन में पहली बार यह प्रश्न उठा था कि आखिर उसका और इस स्त्री का रिश्ता क्या है !

बस-स्टैंड पर खड़े-खड़े उसने पत्नी का विचार जानने की एक और कोशिश की, "कुछ बोलो तो सही, बदलना है मकान या नहीं ?"

"बस का चक्कर छोड़ो, स्कूटर कर लो, बेबी सब को परेशान कर रही होगी।" पत्नी ने कहा और खुद ही कुछ दूर खड़े स्कूटर को इशारे से बुला लिया। पत्नी की इस मुद्रा को वह पहचानता है। सीधे-सीधे 'न' कहने के बजाय वह कोई दूसरी बात करने लगती है। वह समझ गया कि अब मकान बदलने की बात करना बेकार है। चुपचाप उसके साथ स्कूटर में बैठ गया और अपनी तरफ से फुटपाथ की ओर देखने लगा।

बहुत बार की हुई प्रतिज्ञा याद आती है, "अब इस औरत के किसी मामलेमें दखल नहीं दूँगा,यह जैसा चाहे वैसा करे।" मगर न जाने कब और कैसे यह प्रतिज्ञा टूट जाती है और वह सारी बातें एक पति के रूप में करने लगता है। जबकि वह कई बार अपने को समझा चुका है कि वह इस स्त्री का पति नहीं है। उसने अपनी प्रतिज्ञा दोहरायी और फैसला किया कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब इसे हमेशा याद रखेगा, टूटने नहीं देगा।

पहली बार यह प्रतिज्ञा कब की थी ? उसने सोचा और बीते हुए दिनों का तकलीफदेह सिलसिला उसके सामने आ गया। उसने यहाँ आने के बाद महसूस किया था कि कोई चीज़ है जो उसके और पत्नी के बीच व्यवधान बनी हुई है। क्या है वह चीज़ ? उसने खूब सोचा था और उसके सामने कई चीज़ें खुलती चली गयीं थीं—रुचियों और आदतों का अंतर, पारिवारिक पृष्ठ-भूमियों का अंतर, सोच-समझ के स्तरों का अंतर···और एक सवाल फिर उसके मन में उठा था—अगर ऐसी बात थी तो इन लोगों ने अपनी लड़की की शादी उससे की ही क्यों ? क्या उन्हें उससे अच्छा लड़का नहीं मिल सकता था ? सूटेबल ?

उसने सोचा था और उसे लगा था कि वह शायद धोखे से किसी साजिश का शिकार हो गया है—हालाँकि इसका कोई स्पष्ट कारण उसकी समझ में नहीं आया था। उसकी मध्यवर्गीय कस्बा-समझ में सिर्फ इतना आया था कि किसी वजह से इस लड़की की शादी नहीं हो रही थी और उम्र ज्यादा हो जाने के कारण किसी से भी शादी कर देना ज़रूरी हो गया था। उसने पत्नी को बहुत दिनों बाद एक बार जाँचती-सी नज़रों से देखा था—ठिगने कद की, साँवली, साधारण और मोटी स्त्री—देखकर एकाएक उसे पत्नी बनाने का खयाल किसी को नहीं आ सकता। फिर वही क्यों तैयार हो गया था ?

—तुमने कहा था, मैं तुम्हारे इरादों की पहुँच से भी आगे तक तुम्हारा साथ दूँगी ?

—कहा तो था प्रकाश, लेकिन मजबूरियाँ···

हाँ, शायद यही बात थी। उस लड़की से टूटकर वह आकाश में टूटी हुई उल्का-सा हो गया था। कहीं भी गिर सकता था। वह दिखा देना चाहता था कि उससे अधिक पढ़ी-लिखी, सम्पन्न घर की लड़की उसे मिल सकती है। और सुन्दरता ? उसका कोई महत्त्व नहीं। वह आन्तरिक सौन्दर्य की तलाश में है···बाह्य सौन्दर्य ने तो उसे छला ही है···

और शादी के बाद यहाँ आ जाने पर उसे लगा भी था कि जिस आन्तरिक सौन्दर्य की तलाश में वह था, उसे मिल गया है। पत्नी ने आते ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्यार उँडेलना शुरू कर दिया था। दाल में उतराते असली घी की तरह··· हाँ, वह मेरे भाग्य और उसके अतीत पर तरस खाती थी और एकदम सारी चीज़ें उसे दे डालना चाहती थी, जिनके लिए वह तरसता रहा था। थोड़े ही दिनों में उसके पास बहुत-से कपड़े हो गये थे···छब्बीस की उम्र तक वह सूट नहीं पहन सका था अब उसके पास दो-दो कीमती सूट थे। स्लीपिंग सूट और गाउन तो उसकी कल्पना में भी कभी नहीं आये थे, पत्नी ने बनवा दिये···जूते जब तक चलने से इंकार न कर दें वह नया जूता नहीं खरीद पाता था और यहाँ जूतों की रैक में एक पूरी कतार उसके जूतों, चप्पलों और सैंडिलों की हो गयी···और खाना···उसके यहाँ असली घी सिर्फ रोटियाँ चुपड़ने के काम आता था, कभी-कभी वह भी नहीं होता था और सूखी रोटियाँ खानी पड़ती थीं. अक्सर एक दाल के साथ। यहाँ सब्जी और पराँठे भी असली घी में बनते थे और दाल में ऊपर तक घी उतराता रहता था···बचपन में वह दूध के लिए तरसता था। वहाँ सिर्फ भइया के लिये पाव भर दूध लिया जाता था, क्योंकि वे दिन-भर पढ़ा-पढ़ाकर दिमागी मेहनत करते थे। जब उसे नौकरी मिल गयी थी तो उसे भी रात को पाव भर दूध मिलने लगा था, जिसे वह बड़े चाव से स्वाद ले-लेकर पीता था··· और यहाँ सुबह नाश्ते में टोस्ट-बटर के साथ अंडा और दूध, दूध में शक्तिदायक बोर्नविटा···और उसने सोचा था, पत्नी बड़प्पन के साथ ही सही, प्यार तो करती है। माँ और भइया, भाभी के प्रति अनुदार है, लेकिन धीरे-धीरे उदार हो जायेगी !

यह आशा होने के बावजूद वह अपने और पत्नी के सम्बन्ध को पति-पत्नी का सम्बन्ध नहीं मान पाता था। रात को सोते समय उसे लगता कि वह किसी परायी औरत के साथ सो रहा है। और यह सोचकर उसकी उत्तेजना कभी अचानक बढ़ जाती, कभी अचानक सर्द हो जाती।

परायेपन की बात सोचते-सोचते एक रात अचानक अपने इरादों की याद आयी थी। वह इतना खुश हो गया था कि आती हुई नींद को झटक कर उठ बैठा था। पत्नी तो सो रही थी। स्विच-बोर्ड पर लगा हुआ नन्हा-सा बल्ब रोज़ की तरह धुँधला उजाला किये हुए था, लेकिन उसे लगा, उजाला आज काफी तेज है। कमरे की दीवारें जैसे पूरे मकान रही हैं और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कमरे के आयाम विस्तार पा गये हैं। वह उठकर पढ़ने-लिखने की मेज़ पर बैठ गया था और उसे वह लड़की याद आयी थी, जो कसमें-वादे तोड़कर चली गयी थी, फिर भी जिसने कहा था, "प्रकाश हो सकता है कि हम लोग साथ न रह पायें—हो सकता है कि मैं मर ही जाऊँ—पर तुमने जो काम उठाया है, उसे छोड़ना मत। तुम्हें अपने इरादों की ऊँचाइयों तक चढ़ना ही है।"

दूसरे दिन उसने पत्नी के सामने अपनी योजना रख दी थी, "सुनो, नौकरी तो जाने कब मिले, बेकार रहते-रहते मैं बोर हो गया हूँ, इसलिए मैंने सोचा है कि आस-पास के बच्चों को घेरकर पढ़ाया करूँ। स्कूलों में जैसी पढ़ाई होती है, मैं जानता हूँ—वहाँ सिर्फ इम्तहान पास कराये जाते हैं, इन्सान नहीं बनाये जाते। वहाँ अपने स्कूल में मैंने थोड़ी कोशिश की थी, कुछ साथी अध्यापक भी तैयार हो गये थे (उस लड़की का ज़िक्र वह टाल गया) लेकिन स्कूल वाले इस बात से चिढ़ गये थे और आरोप लगाने लगे थे कि हम किसी पार्टी के गुर्गे हैं और तब मैं यहाँ तक तैयार हो गया था कि स्कूल की नौकरी छोड़ दूँ···और अब यहाँ तो बेकार ही हूँ···"

एक पुराना मज़ाक उसे याद आया जो वह दोस्तों के साथ किया करता था—यार, कोई पैसे वाला मुझे गोद ले ले तो इतना काम कर दिखाऊँ, जितना तुमने सोचा भी नहीं हो ! और उसे लगा कि उसकी वह इच्छा पूरी हो गयी और काम करने का समय आ गया है।

एक साँस में वह पूरी योजना पत्नी को बता गया था। पत्नी चुपचाप सुनती रही थी। सुनकर बोली, "डैडी से बात कर लो।"

और डैडी ने कहा था, "आइडिया तो बुरा नहीं है, पर इसका आर्थिक पक्ष अच्छी तरह सोचना होगा। स्कूल खोलने के लिए जगह चाहिए, साज-सामान चाहिए, टीचर्स भी रखने होंगे, क्योंकि आप तो शायद इंगलिश मीडियम से पढ़ा नहीं सकते···"

"पर इंगलिश मीडियम की ज़रूरत क्या है ? मैं तो···"

पूरी बात सुने बिना वे बोले, "हिन्दी मीडियम का स्कूल खोलने में कोई तुक नहीं। हिन्दी वाले लड़कों से आपको क्या मिलेगा ? पैसा तो अच्छी तरह से वे ही लोग दे सकते हैं जो अपने बच्चों को इंगलिश मीडियम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में डालना चाहते हैं…"

बात कहीं और मुड़ गयी थी। वह उन्हें समझा नहीं पाया था कि वह पैसे के लिये पढ़ाना नहीं चाहता था। उनके लिए यह समझना असम्भव था कि पैसे का उद्देश्य रखे बिना भी कोई काम किया जा सकता है। इसलिए जो बात वह डैडी को नहीं समझा सका, उसने पत्नी को समझानी चाही थी और पत्नी उसकी बात सुनते-सुनते सो गयी थी। कमरे की दीवारें फिर एक बार तेज़ी से उसे पीस डालने के लिये दौड़कर आती दिखायी दी थीं।

धीरे-धीरे उसकी समझ में आने लगा था कि उसकी दुनिया, उसके मूल्य, उसकी मान्यताएँ, पत्नी की दुनिया, पत्नी के मूल्य, पत्नी की मान्यताओं से अलग हैं। अलग और विपरीत।

यह नहीं चल सकता। उसने सोचा था और अपनी दुनिया में लौट जाने को तैयार हो गया था। उसने तय कर लिया था कि पत्नी उसके साथ जाये या न जाये, वह चला जायेगा। लेकिन तभी उसे पता चला कि पत्नी गर्भवती है। जाते-जाते उसके पाँव ठहर गये थे। उसे खुशी हुई थी। एक आशा-सी बँधी थी कि अब सब ठीक हो जायेगा। बच्चा होगा तो माँ, भइया और भाभी आयेंगे, कुछ दिन रहेंगे और पत्नी को उन्हें समझने का मौका मिलेगा। समझेगी कि उसकी दुनिया उसके डैडी की सम्पन्न दुनिया नहीं, उसके पति की वह विपन्न दुनिया है, जिसमें पैसा नहीं है, लेकिन आपसी सम्बन्धों में कोई व्यवधान भी नहीं है। अभावों की लगातार चलने वाली सर्द हवा के बीच भी सदा आत्मीयता की एक मधुर ऊष्मा है…उसे लगा, बच्चा अपने साथ वह ऊष्मा लेकर आयेगा।

वह रुक गया था और पत्नी की सेवा में लग गया था। उन दिनों वह अपने आपको भूल-सा गया था। एक अजीब-सी खुशी से भरा रहता और कभी-कभी महसूस करता कि वह जीते जागते भविष्य की प्रतीक्षा में है, कि वह उसका जन्मदाता ही नहीं, उसका पोषक भी है।

इसी खुशी में वह पत्नी की उन बातों का बुरा नहीं मानता था, जो दरअसल उसे बुरी लगनी चाहिये थीं। पत्नी अक्सर अपने उभरे हुए पेट को देखकर कहा करती, "सब बिगाड़कर रख दिया।" वह हँस दिया [illegible] बच्चे पैदा करने की [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है।" वह फिर भी हँस देता। हँसता रहता और तमाम अच्छी-अच्छी बातें पत्नी को सुनाता रहता। कभी यों ही, कभी किताबों में से पढ़कर। उसने अभिमन्यु की कथा सुन रखी थी कि वह गर्भ में ही चक्रव्यूह भेदना सीख गया था, लेकिन उसे यह देखकर बड़ी तिलमिलाहट होती थी कि पत्नी सुनती नहीं, सोती रहती है और उसकी समझ में न आता कि क्या कर डाले।

लेकिन बच्चा होने के समय जब उसने माँ और भाभी को बुलाना चाहा तो पत्नी ने कह दिया, "क्या होगा उन्हें बुलाकर ? यहाँ मम्मी हैं तो।"

वह देखता रह गया था। क्या वह अब तक व्यर्थ ही इतनी आशाएँ बाँधे हुए था ? एक बार तो उसकी इच्छा हुई थी कि पत्नी की बात नहीं सुने; जाकर माँ और भाभी को ले आये, मगर उस इच्छा को उसने भीतर ही घोंट लिया था। फिर सहसा उसे लगा था, उसके पैर उखड़े हुए हैं। अगर उन्हें ले आया और पत्नी ने उनका अपमान कर दिया तो ? घर तो आखिर पत्नी का है। चाहे तो उससे भी कह सकती है कि इस घर में तुम्हारा लाया हुआ क्या है ? तब वह क्या जवाब देगा ? एक चीख-सी उसके मुँह से निकलने को हुई थी—हे ईश्वर ! मैं कहाँ आकर फँस गया हूँ।

वह साजिश उसकी समझ में आ गयी थी। स्पष्ट था कि उसे कुछ सुविधाएँ देकर खरीद लिया गया है। धोखे से, कि उसे पता भी न चल सका।

नहीं, यह नहीं चलेगा। वह सख्त हो आया था। उसे इस तरह क़ैद नहीं किया जा सकता। इस तरह खरीदा हुआ गुलाम बनकर वह हरगिज़, हरगिज़ नहीं रह सकता। अपने और पत्नी के रिश्ते की यह पहचान काफी तिलमिला देने वाली थी। उसे लगा, शुरू में ही उससे भूल हो गयी है। शादी से पहले ही उसे इन सब पहलुओं पर सोच लेना चाहिए था। पर अब पछताने से क्या फ़ायदा ! लौट जाने का भी कोई अर्थ नहीं है। अब तो इस चक्रव्यूह को तोड़ना ही होगा। इसके भीतर रहकर ही। लड़े बिना लौट जायेगा तो लोग उसे कायर ही नहीं, नपुंसक भी कहेंगे। वह खुद भी अपने आप को क्षमा नहीं कर पायेगा। और बेबी···उसका भविष्य ! उसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Sandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह इन लोगों के साँचे में नहीं ढलने देगा।

वह सख्त हो आया था और पूरी मुस्तैदी से मकान ढूँढने लगा था। डैडी द्वारा दिलायी जाने वाली अच्छी, पक्की सरकारी नौकरी का भरोसा छोड़ दिया था और एक स्कूल में नौकरी कर ली थी। अपनी आज़ादी की दिशा में एक कदम ! और अब वह दूसरा कदम भी उठा लेना चाहता था। पुरानी बस्ती वाले मकान को छोड़कर किसी और जगह मकान लेना। अपनी गृहस्थी नये सिरे से बसाना। इसीलिए वह ज़ोर-शोर से मकान की तलाश में लगा हुआ था।

स्कूटर डैडी के घर के आगे आकर रुका। मम्मी बेबी को खिला रही थीं। बाहर से ही उनकी आवाज़ आ रही थी, "हमाली बेबी इस्कूल जायेगी। फिल बेबी बली हो जायेगी। फिल बेबी की शादी होगी। फिल बेबी का दूल्हा आयेगा···"

उसे अपनी मुट्ठियाँ भिचती हुई महसूस हुईं। अन्दर आकर वह सोफे पर बैठ गया। पत्नी, 'हे राम, थक गयी' कहकर दूसरे सोफे पर पसर गयी। डैडी ने अखबार सामने से हटाया और मुँह से पाइप निकालकर बोले, "देख आये मकान ? कैसा है ?"

"मैं वहाँ नहीं जाऊँगी, डैडी !" उसके बोलने से पहले ही पत्नी बोली, "आप इन्हें समझाते क्यों नहीं, जब यहाँ सारी सुविधाएँ मौजूद हैं तो मकान बदलने की क्या ज़रूरत है ?"

ज़रूरत है ! मुझे पता है क्या ज़रूरत है !" वह ऊँचे स्वर में लगभग चीखते हुए बोला। पत्नी ने सहम कर उसकी ओर देखा, फिर डैडी की ओर। मम्मी ने क्रोध और तिरस्कार भरी दृष्टि से अपने दामाद की ओर देखा और बेबी को लेकर दूसरे कमरे में चली गयीं, जैसे उन्हें इस बात से कोई मतलब ही नहीं हो। लेकिन डैडी के चेहरे पर शिकन भी नहीं आयी। हमेशा की तरह धीमे-धीमे मुस्कराते हुए बोले, "ज़रूरत तो है बेटे, मगर तुम्हें किसी मकान को नहीं, घर को आबाद करना है। और घर, मेरा ख्याल है, दोनों की मर्ज़ी और रज़ामन्दी से ही आबाद हो सकता है। क्या फ़ायदा अगर तुम मकान ले लो और मीना वहाँ खुश न रह सके ?"

वही फुसलाती हुई-सी आवाज़, वे ही जाल फेंकते हुए से शब्द, वही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2023-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभिभूत करती हुई-सी मुस्कान। वह निरस्त्र-सा होने लगा, लेकिन अगले क्षण ही उसने महसूस किया कि क्रोध की लहर उसके शरीर में उठ रही है और वह लहर सारे औपचारिक शिष्टाचार के औचित्य को बहा ले जायेगी। वह ज़ोर से कोई गाली दे बैठेगा। लेकिन उसने हमेशा की तरह शान्त किन्तु दृढ़ स्वर में उत्तर दिया, "आपको सिर्फ इन्हीं की खुशी की चिन्ता है ?"

"अपनी बेटी के हित-अहित का ख्याल तो हमें रखना ही पड़ेगा।" वे मुस्कराते हुए बोले।

"तो ठीक है, आप अपनी बेटी के हित-अहित का ख्याल रखिये, मैं अपनी बेटी के हित-अहित का ख्याल रखूँगा।" उसने कहा और उस कमरे की ओर बढ़ गया जिसमें मम्मी बेबी को लेकर चली गयी थीं। एक अँधेरा उसके सामने छा रहा था, लेकिन उसे लग रहा था कि उसके कदम मजबूती से ज़मीन पर पड़ रहे हैं।

C-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नाटकीय

मंच के तीखे उजाले में खड़ा हुआ वह अपनी बात कह रहा था। बात, जो नाटक के छपे हुए शब्दों में उसे मिली थी और उसने रट ली थी। रिहर्सल के दौरान उस बात को उसने पचासों बार दोहराया था। शुरू-शुरू में वे शब्द थे और उन शब्दों को अपनाने की प्रक्रिया उसे बहुत आसान मालूम हुई थी। निगलना, अन्दर ही अन्दर उन्हें मथना, थोड़ी-सी भावनाएँ उनमें मिलाना और सारी क्रियाओं को भावनाओं से रंग कर अपने चेहरे पर और अपने पूरे जिस्म पर ओढ़ लेना। फिर इस तरह तैयार किये हुए शब्दों को एक चढ़ती-उतरती खनक देकर बाहर उछाल देना। बस।

उसका काम बस इतना ही था और उसके हिसाब से यह काफी आसान काम था। लेकिन यह जानकर उसे आश्चर्य होता कि इस तरह उसके द्वारा तैयार किये हुए शब्द दूसरों के लिए अलौकिक और अद्भुत बन जाते हैं। हाल में साँसें रुक जाती हैं। आँखें उसकी एक-एक हरकत को नोट करती हैं, कान उसके कंठ से निकली प्रत्येक ध्वनि को रस ले लेकर पीते हैं और ···प्रतिक्रियाएँ···लोग हँसते हैं, आँसू बहाते हैं, तालियाँ बजाते हैं और हॉल से बाहर निकलने पर कहते हैं, "भई वाह ! अभिनेता तो बस एक ही है। कितना सहज और स्वाभाविक अभिनय करता है !"

आज भी यही होगा। उसे मालूम था और पूरे आत्मविश्वास के साथ मंच के तीखे उजाले में खड़ा अपनी बात कह रहा था। कह रहा था, "दीदी, लोग कहते हैं कि यह दुनिया हज़ारों सालों से यों ही चलती आयी है और यों ही चलती रहेगी। मगर मैं कहता हूँ, ग़लत है। दुनिया यों ही नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चलती आ रही है, दुनिया बदलती रही है। बोलो, क्या तुम अपनी ज़िन्दगी के इन पच्चीस वर्षों में नहीं बदली हो ?"

इसके बाद अभिनेत्री अपनी बात कहेगी, "हाँ, भइया, मैं बदल गयी हूँ। मैं सचमुच बदल गयी हूँ।" और नाटक समाप्त हो जायेगा। दर्शक तालियाँ बजाकर उठ जायेंगे, प्रशंसाएँ करते हुए चले जाएँगे। मंच की बत्तियाँ गुल हो जायेंगी। पीछे ग्रीन रूम में जाकर वह अपना मेकअप धो देगा, नाटकीय पोशाक उतार देगा। रोज़मर्रा के कपड़े पहन लेगा और फिर···

और फिर···? आजकल यह ख्याल उसे बेतरह परेशान करने लगा है। कहीं भी, किसी भी क्षण यह प्रश्न उसके मन में उभर आता है और वह तिलमिलाने लगता है। अजीब बात यह होती है कि उसके अन्दर भावनाओं का घोल खौलने लगता है, उसके कुछ गर्म छींटे उसके शरीर पर भी आ पड़ते हैं, जिससे उसके चेहरे की माँसपेशियों में अजीब-सा तनाव आ जाता है, दाँत भिचने लगते हैं, कनपटी के ऊपर माथे की एक नस फड़कने लगती है, होठों में हल्की-सी विकृति आ जाती है और वह पाता है कि उसकी उँगलियों के नाखून हथेलियों में चुभ रहे हैं और उसके पाँव काँप रहे हैं। लेकिन शब्द···इन सारी क्रियाओं के पीछे से शब्द ग़ायब रहते हैं !

यह उल्टी प्रक्रिया है। वह डर जाता है। यह सब ग़लत है, अनुचित है, अस्वाभाविक है। ऐसा नहीं होना चाहिए। इन सारी चीज़ों की शुरुआत तो किन्हीं शब्दों से होनी चाहिए। वह इसी बात का आदी है··· पहले शब्द, फिर उनके अनुसार अभिनय। लेकिन···लेकिन यह चीज़···

उसकी समझ में कुछ नहीं आता और वह घबरा जाता है। सोचने लगता है, कहीं मैं पागल तो नहीं होता जा रहा हूँ ? और उसे निज़िस्की की डायरी याद आने लगती है। निज़िस्की अपने अन्तिम दिनों में पागल हो गया था, कहा करता था—मैं ईश्वर हूँ। एक देह में स्थित ईश्वर। सभी को यह अनुभूति होती है, पर कोई भी इसका उपयोग नहीं करता। उसने अपनी डायरी में लिखा था – मैं बुद्धि या चेतना से कुछ भी अनुभव नहीं करता, आई एम फीलिंग थ्रू फ्लैश···शरीर ही उसका सब कुछ था। शरीर से उसने अपने-आपको अभिव्यक्त किया था···इसीलिए वह अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्नी के मस्तिष्क की हत्या कर देने की बात सोचा करता था···

मस्तिष्क की हत्या ! उसे यह विचार बड़ा भयंकर लगता है। निज़िस्की की पत्नी कैसी रही होगी, वह नहीं जानता, लेकिन कल्पना करता है कि कमरे में बंद एक स्त्री है और उसके पति ने उसके मस्तिष्क की हत्या कर दी है···मस्तिष्क के मर जाने पर उस स्त्री ने क्या किया होगा ? चीखी होगी ? दीवारों से टकरायी होगी ? या···लेकिन मस्तिष्क के मर जाने पर कोई जीवित ही कैसे रह सकता है ?

नाटक समाप्त होने के बाद उसने जल्दी-जल्दी मेकअप धोया, कपड़े बदले और जल्दबाजी में अपने साथियों से विदा लेकर बाहर निकल आया। दरअसल उसे डर लग रहा था कि कोई उससे यह न कह दे कि आज तुम अन्तिम संवाद के समय गड़बड़ा गये थे। वैसे उसका यह डर फ़िज़ूल था। किसी को इसके अभिनय में कोई कमी नज़र नहीं आयी थी। कमी नहीं आती थी, क्योंकि वह एक मँजा हुआ और प्रसिद्ध कलाकार था। लोग उसकी कमियों को भी उसकी अदाएँ मान लेते थे। और यदि कोई आलोचना करता तो उन्हें अपने प्रिय कलाकार की आलोचना सहन नहीं होती थी। वे आलोचक से कहते—तुम उसकी ख्याति से कुढ़ते हो, इसलिए तुम्हें उसके गुण भी दोष नज़र आते हैं।

इस प्रकार बाहरी तौर पर वह एकदम सुरक्षित था, लेकिन जब से वह उल्टी प्रक्रिया शुरू हुई थी, वह मन ही मन स्वयं को बेहद असुरक्षित अनुभव करता। उसे लगता, एक न एक दिन वह अवश्य पकड़ा जायेगा और तब लोग उसके बारे में अपनी राय बदल लेंगे। और ऐसा वह हरगिज़ होने देना नहीं चाहता था। इसलिए आजकल वह रिहर्सलों के समय बहुत सावधान रहता और जिस पात्र का अभिनय उसे करना होता, उसे वास्तव में जीने का प्रयत्न करता।

टैक्सी में बैठकर घर जाते समय वह हालाँकि बेहद थकान महसूस कर रहा था, फिर भी अगले दिन होने वाले शो के लिए अभी से अपने संवाद दोहराने लगा।

घर पहुँचते-पहुँचते ग्यारह बज गये। उसने घंटी के बटन पर उँगली रखी और घर के अन्दर बजती हुई किर्रकिर्र को सुना। रात के देर से घर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लौटने पर यह आवाज एक से अधिक बार सुनना उसे अच्छा नहीं लगता था। सच पूछा जाय तो एक बार भी नहीं। वह चाहता है कि पुरानी बंगाली फिल्मों में देखे हुए वे दृश्य लौट आयें कि पति की प्रतीक्षा में देहरी पर दीपक बालकर बैठी हुई प्रतीक्षारत पत्नी अधखुले दरवाज़े से सिर टिकाकर सो गयी है, पति ने देखा है और स्वयं को अपराधी मानते हुए पत्नी को उठाकर सीने से लगा लिया है···वह रोज़ ही ऐसी अपेक्षा करता है, लेकिन रोज़ ही यही होता है कि वह घंटी बजाते-बजाते झुँझलाने लगता है, तब पत्नी आकर दरवाज़ा खोलती है और एक भी शब्द बोले बिना लौट जाती है, अन्दर जाकर लेट जाती है, सो जाती है।

आज भी एसा ही हुआ। पत्नी दरवाज़ा खोलकर लौट गयी तो वह दो पल ठहरी हुई आँखों से उसे जाते हुए देखता रहा, फिर दरवाज़ा अन्दर से बंद किया और मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि भविष्य में पत्नी से किसी प्रकार की कोई अपेक्षा नहीं करेगा। लेकिन फिर उसे लगा कि ऐसी प्रतिज्ञाएँ तो वह रोज़ ही करता है और रोज़ ही उन्हें भूलकर अपेक्षाएँ करने लगता है···यह रोज़-रोज़ का टूटना उसे पसंद नहीं···फिर भी···

अपने कमरे में आकर उसने देखा, उसका खाना टेबल पर ढका हुआ रखा है और बच्ची उसके बिस्तर पर औंधी पड़ी सो रही है। बच्ची ने पेशाब कर रखा है, जिससे बिस्तर गीला हो गया है। बच्ची के गाल पर एक बड़ा-सा मच्छर शायद अभी उड़ता-उड़ता आ बैठा था। उसने मच्छर को उड़ाया और दोनों हाथों में झपटकर मसल देना चाहा, लेकिन मच्छर उड़ गया, सिर्फ ताली बजकर रह गयी। ताली की आवाज़ से बच्ची चौंक उठी। जाग जायेगी तो रोयेगी, यह सोचकर उसने बच्ची को उठाकर कंधे पर सुला लिया और एक हाथ से गीली चादर उठाकर गद्दे को उलट दिया। पत्नी के कमरे में जाकर दूसरी चादर लाया और एक हाथ से ही जैसे-तैसे बिछा दी। बच्ची को लिटाकर थोड़ी देर थपकियाँ देता रहा, फिर कपड़े बदलने चला गया।

पत्नी सो रही थी। जाग भी रही हो तो सोने का अभिनय पूरा था। उसे देखता हुआ और मन-ही-मन कुढ़ता हुआ अपने कमरे में आकर खाना खाने बैठ गया। हमेशा की तरह उसकी इच्छा थी कि आज खाना न खाये,

C-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भूखा ही सो जाये। लेकिन खाने लगा। खायेगा नहीं तो शरीर कैसे चलेगा? शरीर ही तो उसका सब कुछ है···

खाते-खाते उसने फिर उस रूसी नर्तक निजिंस्की के बारे में सोचा, जिसकी अंग्रेज़ी में प्रकाशित डायरी वह जब से खरीदकर लाया है, कई बार पढ़ चुका है। न जाने क्यों निजिंस्की उसे बहुत अपना-सा लगता है।

एक नर्तक का बेटा था निजिंस्की। बचपन घोर दरिद्रता में बीता ···पिता के परिचय के कारण प्रख्यात नर्तकों से उसे नृत्य की शिक्षा मिली···प्रतिभाशाली इतना था कि शीघ्र ही प्राइमा बैलेरीना के साथ नाचने लगा और बीस वर्ष का होते-होते पूरे पीटर्सबर्ग में उसकी धूम मच गयी···और तब उसके जीवन में एक मोड़ आया। एक धनी व्यक्ति ने उससे मित्रता की··· निजिंस्की सुन्दर था न ! और नर्तक भी बहुत अच्छा ···और वह धनी व्यक्ति ? वह निजिंस्की की नृत्यकला से पैसा भी कमाना चाहता था और अपनी वासना की तृप्ति भी···होमोसेक्सुअल···निजिंस्की गरीब था और अपनी माँ की जिम्मेदारी थी उस पर···वह उस धनी व्यक्ति को खुश रखने के लिए उससे प्रेम का नाटक करता था। ···आई हेटेड हिम, बट प्रिटेंडेड टु लाइक हिम, बिकॉज आइ न्यू दैट माइ मदर एण्ड आइ वुड डाइ आफ स्टार्वेशन अदरवाइज़···

खाना ठंडा था और बेस्वाद, फिर भी उसे लग रहा था कि खाना उसके लिए ज़रूरी है। खायेगा नहीं तो भूखा मर जायेगा। पत्नी पूछने नहीं आयेगी कि तुमने खाया या नहीं। नहीं खाया होगा तो सुबह बचा हुआ खाना देखकर कहेगी—मुफ्त का आता है न ! रोज़-रोज़ इतना खाना बिगड़ता है। वैवाहिक जीवन के प्रारंभिक दिनों में ऐसी स्थितियाँ अक्सर पैदा हो जाती थीं, अब वह नहीं होने देता। अक्सर नहीं होने देता, फिर भी कभी-कभी तो···

हाथ धो आने के बाद उसने सिगरेट सुलगायी और सोयी हुई बच्ची को देखता हुआ कुर्सी पर बैठा रहा। सोचा, सिगरेट खत्म कर ले और बत्ती बुझाकर सो जाये। थक भी तो कितना गया है ! लेकिन तभी उसे ख्याल आया—यह भी रोज़ की तरह—कि वह सुबह साढ़े सात बजे से पत्नी से अलग रहा है। यह ख्याल उसे काफी तकलीफ देता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसे अपनी दिनचर्या पर झुंझलाहट हुई। सुबह छः बजे सोकर उठते हैं, पत्नी चाय बना देती है और वह अखबार के साथ चाय पीकर सब्ज़ी लाने चला जाता है। लौटकर बच्ची को सँभालता है और बिस्तर उठाता है। पत्नी जल्दी-जल्दी खाना बनाकर नहाती है और रोज़ देर हो जाने की शिकायत बड़बड़ाती हुई नौकरी करने चली जाती है। दो-ढाई बजे पत्नी के लौटने तक वह बच्ची को खिलाता रहता है, डिब्बे का दूध बना-बनाकर पिलाता रहता है, बच्ची की टट्टी-पेशाब साफ करता रहता है, बच्ची को नहलाता है और थपकियाँ दे-देकर और लोरियाँ गा-गाकर उसे सुलाता है। बच्ची के सो जाने पर वह अपने दैनिक कामों से निपटता है, नहाता है। सुबह का रखा हुआ खाना खा लेता है और शाम के होने वाले नाटक के संवाद मन-ही-मन दोहराता हुआ अपने रोल की रिहर्सल किया करता है।

यह सब उसे चुपचाप, बेआवाज़ करना होता है, क्योंकि बच्ची ज़रा-सी आवाज़ से जाग जाती है। और यह सब उसे बहुत अजीब भी लगता है। अपने ही घर में, घर के एक खाली कमरे में वह निःशब्द अभिनय करता है। एक दिन उसकी नज़र ड्रेसिंग टेबल के शीशे में पड़ गयी थी। उसने देखा था कि वह तरह-तरह से मुँह बना रहा है और हाथ-पाँव चला रहा है। मुँह में नाटक के शब्द हैं तो, लेकिन वह उन्हें बोल नहीं सकता। बोलेगा तो बच्ची जग जायेगी और तब उसे सँभालने के लिए उसे अपनी रिहर्सल रोक देनी होगी। यह सब उसे वाहियात और बेहूदा-सा लगा था। उसे अपने ऊपर गुस्सा आया था कि घर में कोई बूढ़ी औरत न होने और बच्ची के लिए आया रखने की हैसियत न होने पर भी उसने बच्ची क्यों पैदा कर ली! और अब पैदा कर ली है तो पालो उसे! खिलाओ उसे औरतों की तरह घर में बैठकर! ढाई बजे से पहले तुम इस जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकते! पत्नी आयेगी और मुक्त करेगी···

ढाई बजे तक का समय जैसे पहाड़ की तरह कटता है। ऐसा नहीं कि वह अपनी बच्ची को प्यार नहीं करता! करता है, लेकिन आखिर कितना प्यार करे! और क्या वह अपनी आधी जिंदगी बच्ची से प्यार करने में बिताने के लिए पैदा हुआ है? उसे बार-बार यही लगता है कि उससे गलती हो गयी है। रंगमंच से इतना ही लगाव था तो उसे शादी ही नहीं करनी

C-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थी ! कर भी ली तो यह बच्ची तो हरगिज़ नहीं···मगर···

सोचते-सोचते यहाँ आकर वह अटक जाता है। कलाकार होने का मतलब यह है कि दुनिया की बाकी सारी चीज़ों की ओर से आँखें मूँद ली जायें ?

फिर भी उसकी झुँझलाहट कम नहीं होती। वह अपने काम को जितना समय देना चाहता है, नहीं दे पाता। ढाई बजे पत्नी थकी हुई नौकरी से लौटती है। बच्ची पत्नी को सौंपकर वह जल्दी-जल्दी चाय बनाता है, पत्नी के साथ पीता है और फुर्ती के साथ बाहर निकल जाता है। नाटक का प्रत्येक संवाद भले ही उसे कंठस्थ हो, साँझ से पहले वह एकांत में अपने रोल की रिहर्सल कर लेना ज़रूरी समझ लेता है। इसलिए गांधी पार्क में चला जाता है—किसी एकान्त कुंज में। वहाँ से सीधा रंगशाला जाता है। शो समाप्त होते-होते दस और घर लौटते-लौटते ग्यारह-साढ़े ग्यारह बज जाते हैं। पत्नी के पास बैठने, उसकी बात सुनने और अपनी बात कहने का मौका ही कहाँ मिलता है !

और छुट्टियों के दिन ? इतने सारे घरेलू काम निकल आते हैं कि छुट्टी वाले दिन पत्नी और दिनों की अपेक्षा अधिक ही थकती है और जल्दी सोती है···

ले-देकर यही समय मिलता है—आधी रात के आसपास एकाध घंटा।

सिगरेट खत्म करके वह उठा। अपने कमरे की बत्ती बुझायी और पत्नी के कमरे में चला गया। बिस्तर की ओर बढ़ते-बढ़ते ठिठक गया··· अचानक एक झनझनाहट-सी अपने भीतर महसूस हुई···उसे लगा, वह ठिठककर खड़ा हुआ अपने चेहरे पर रंग पोत रहा है—न जाने क्यों ! जैसे मंच पर प्रवेश करना हो···संवाद ? हाँ, संवाद उसे याद है। वह भूल नहीं सकता। मँजा हुआ कलाकार है। आत्मविश्वास !

"सो गयीं ?" उसने पत्नी के पास लेटते हुए कहा। पत्नी नहीं बोली, उसकी ओर पीठ किये पड़ी रही। उसने हौले से थपकी दी, "सुनो, सो गयीं क्या ?" पत्नी फिर भी चुप रही तो उसने उसे अपनी ओर खींचा। प्रतिरोध ! वह समझ गया कि पत्नी जाग रही है और नाराज़ है। उसे गुस्सा आया और हमेशा की तरह उसने सोचा—इस औरत को मेरी ज़रा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी परवाह नहीं। आज नये नाटक का शो था और लोगों ने उसे पसंद किया था। इस समय अखबारों में उसकी प्रशंसात्मक समीक्षाएँ कम्पोज़ हो रही होंगी···हो सकता है, कुछ लोग अपने घर लौटकर घरवालों से उसकी प्रशंसा कर रहे हों···यह भी हो सकता है कि कुछ भावुक लड़कियाँ अपने बिस्तरों पर लेटी उसी के बारे में सोच रही हों या नींद में उसीके सपने देख रही हों···और एक यह है कि इसने पूछा भी नहीं—आज का शो कैसा रहा ? आदमी कम-से-कम इतनी अपेक्षा तो कर ही सकता है ! लेकिन हमेशा की ही तरह उसने अपनी अपेक्षाओं को और उनके कारण उत्पन्न हुए क्रोध को पी लिया।

हँसते हुए उसने कहा, "क्या बात है, आज तो कुछ ज्यादा ही गुस्सा है ? इधर तो देखो···अरे-रे···!" पत्नी ने उसका हाथ अपने ऊपर से हटाकर झटक दिया। वह और ज़ोर से हँस पड़ा, "बड़ी ताकत है तुममें तो ! सच है···लोग ठीक ही कहते हैं कि भारतवर्ष की नारियाँ बड़ी बहादुर होती हैं। देखो-देखो, एक ही झटके में मेरे हाथ में मोच आ गयी !"

"अब सोने भी दोगे या नहीं ?" पत्नी उठकर बैठ गयी, "नौकरी भी करूँ और सारे दिन काम भी करूँ। उधर लड़की सारे दिन जान खाती रहती है और रात को कोई सोने भी नहीं देता। इससे तो अच्छा है, मौत आ जाये, पीछा छूटे !"

"राम-राम ! आधी रात को कैसा अशुभ बोलती हो। आओ, लेट जाओ। गुस्सा नहीं करते।" उसने उठकर पत्नी की दोनों बाँहें पकड़ लीं और लिटाने लगा, पत्नी छिटककर खड़ी हो गयी। बोली कुछ नहीं, बस उसकी पकड़ से बचती हुई दूसरे कमरे में चली गयी। वह दोनों हाथ फैलाये बिस्तर पर बैठा रह गया। थोड़ी देर बाद दूसरे कमरे से खाट की चरमराहट सुनायी दी, फिर बच्ची के एकाएक रो पड़ने की आवाज़, और फिर पत्नी की डाँट—"चुप्प ! रोयी तो खिड़की से बाहर फेंक दूँगी। बाप-बेटी दोनों मिलकर खा जाओ हमें !"

धीरे-धीरे उसकी फैली हुई बाँहें शिथिल होकर बिस्तर पर टिक गयीं और वह पीठ के बल सीधा लेट गया। खिड़की में लगी श्लाखों से कटी हुई चाँदनी बिस्तर की सफेद चादर पर बिछी हुई थी, शायद इसीलिए कमरा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बिजली बंद होने के बावजूद अँधेरा नहीं था। वह छत से लटकते हुए बंद पंखे की ओर देखने लगा। उसे ध्यान आया कि यह अप्रैल की शुरुआत है और अब जल्दी ही पंखा चलाकर सोने के दिन आ जायेंगे। फिर उसे लगा कि खुली खिड़की से आती हुई हवा में खुश्की है और शायद बहुत महीन धूल, जो बड़े नामालूम ढंग से हर चीज़ किरकिरी कर देती है।

बच्ची डाँट खाकर, सहमकर सो गयी। दूसरे कमरे से फिर कोई आवाज़ नहीं आयी। पत्नी भी सो गयी शायद। लेकिन उसकी आँखों में नींद नहीं थी। किसी भी नाटक का पहला शो उसके लिए बहुत उत्तेजक होता है। उसके साथियों का कहना है कि शो के बाद उन्हें बड़ी गहरी नींद आती है—रिहर्सल के दिनों का सारा तनाव उस रात ढिला जाता है, मगर उसके साथ एकदम उल्टी बात है। पहले शो की रात उसे नींद नहीं आती। मन होता है, उठकर दोस्तों के पास चला जाये, फिर सब लोग मिलकर कहीं जायें और खूब शराब पियें, खूब हँसे, गायें, नाचें, शोर मचाते हुए सुनसान रात में सड़कों पर घूमें···

पहले ऐसा ही होता था। शादी से पहले शो की रात जश्न की रात होती है। अब वे रातें सिर्फ दूसरों के लिए रह गयी हैं। शुरू-शुरू में इस परिवर्तन पर दोस्तों ने उसे ताने दिये थे, लेकिन उसने कह दिया था, "यारो, अब मैं उतना आजाद नहीं हूँ, उस बेचारी को मैं रात के ही कुछ घंटे तो दे पाता हूँ, वह भी न दूँ तो उसके साथ अन्याय होगा।" और दोस्तों ने ताने देना ही नहीं, उसे निमंत्रित करना भी बंद कर दिया था।

मगर यह···यह तो उसने नहीं सोचा था।

दरअसल उसने कुछ भी नहीं सोचा था। बस, यह हुआ था कि प्लाज़ा में वह 'बैकेट' देखने गया था और इंटरवल में बाहर खड़े होकर सिगरेट पी रहा था कि कालेज से किताब-कापियों के साथ फिल्म देखने आयी हुई एक लड़की अचानक उसे घूरने लगी थी। अपनी सहेलियों को उसने कुछ इशारा-सा किया था और सहेलियों ने उसे आगे ठेल दिया था। वह हिचकिचाती—शरमाती पास आयी थी, "एक्सक्यूज़ मी, आर यू मिस्टर चन्द्रमोहन ?"

वह मुस्कराया था, "जी हाँ, फरमाइये।" और लड़की ने नोट्स की कापी खोलकर आगे बढ़ा दी थी, "आटोग्राफ प्लीज़।" उसने हस्ताक्षर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर दिये थे। बाद में सहेलियों की कापियों पर भी।

फिर एक दिन उसी लड़की ने कहा था, "आप इस सबकी चिन्ता क्यों करते हैं ? जल्दी ही मुझे कोई नौकरी मिल जायेगी···और जैसे भी होगा, हम लोग गुज़ारा कर लेंगे।"

वह निश्चित हो गया और उन्होंने शादी कर ली थी। लड़की शुरू में काफी बोल्ड दिखायी देने के बावजूद शादी के बाद काफी घरेलू साबित हुई थी और यह उसे अच्छा ही लगा था। एक दिन उसने पत्नी से कहा भी था, "तुम मुझे अच्छी मिल गयीं। मैं ऐसी ही पत्नी चाहता था, जिसके साथ सहज होकर जिया जा सके। बाहर तो हर समय नाटक करना ही पड़ता है, घर में तो कम से कम···"

बच्ची फिर चीखकर रो उठी। वह लेटा हुआ प्रतीक्षा करने लगा कि पत्नी कब उसे चुप कराती है, लेकिन देर तक पत्नी की आवाज़ नहीं आयी और बच्ची लगातार रोती रही, तो वह उठा। दूसरे कमरे में गया। पत्नी सोयी पड़ी थी, या सोने का नाटक किये पड़ी थी। उसने बच्ची को उठा लिया और दुलारता हुआ उस कमरे से निकल आया। बहुत देर आ-आ··· आ-आ···करता रहा, बच्ची को हिलाता-थपथपाता कमरे में चक्कर लगाता रहा, लेकिन बच्ची का रोना बंद नहीं हुआ। दूध की बोतल में थोड़ा दूध बाकी था, उसने पिलाने की कोशिश की, लेकिन बच्ची ने मुँह नहीं लगाया और रोना भी बंद नहीं किया।

अब उसे सचमुच क्रोध आने लगा। 'सचमुच' अर्थात् व्यक्त कर डालने की सीमा तक। कुछ देर वह ज़ब्त किये रहा, फिर पत्नी के पास जाकर उसने बच्ची को लिटा दिया और बेहद तल्ख आवाज़ में बोला, "तुम्हें मेरा कोई ख्याल नहीं है, न सही, पर इसका तो कुछ ख्याल करो !"

"मेरा भी ख्याल करने वाला है कोई ?" पत्नी झटके से उठ बैठी और बच्ची को गोद में लेकर अपना दूध पिलाने लगी। वह कुछ पल यों ही खड़ा रहा, फिर बत्ती जलाकर उसने एक सिगरेट सुलगा ली और कुर्सी पर बैठ गया। उसने देखा, पत्नी रो रही है। होंठ कसकर बंद कर रखे हैं, लेकिन गालों पर आँसू फिसल रहे हैं।

"आखिर तुम चाहती क्या हो ?" जानता था कि पत्नी इस प्रश्न का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्तर नहीं देगी, फिर भी उसने थोड़ी देर प्रतीक्षा की। फिर बोला, "जानती हो, तुमने मुझे क्या बना दिया है ? घरेलू नौकर। मेरा सारा दिन इसे खिलाने में निकल जाता है, न कुछ पढ़ पाता हूँ, न कोई फिल्म देखने जा पाता हूँ, न किसी से मिल पाता हूँ। शाम का सारा वक्त धंधे में निकल जाता है। लौटकर थका हुआ आता हूँ तो तुम नाराज़ मिलती हो। मुझसे बात तक करना तुम्हें गवारा नहीं। आखिर इस तरह कैसे चलेगा ?"

पत्नी रोती रही, बोली नहीं। बच्ची सो गयी तो उसे लिटाकर फिर अपने कमरे में चली गयी। वह भी उठा और सिगरेट ऐश-ट्रे में मसलकर उसके पीछे-पीछे चला गया। उस कमरे में न जाने क्या था कि वह फिर नाटकीय हो आया। पत्नी को बाँहों में भरकर कसते हुए बोला, "तुम्हें पता है, जब से बेबी हुई है, मैं तुम्हारे प्यार के लिए तरस गया हूँ ?"

पत्नी पिघल गयी। उसके सीने पर सिर टिकाकर सुबकते हुए बोली, "तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ ? इतनी थक जाती हूँ कि रात को अपना भी होश नहीं रहता।"

उसे लगा, पत्नी सच कह रही है, उसका कोई दोष नहीं है। लेकिन··· फिर ? इस स्थिति का क्या किया जाये ? पत्नी की नौकरी छुड़ा दे ? लेकिन फिर काम कैसे चलेगा ? नाटकों से जितना पैसा मिलता है, उतने में तो गृहस्थी चल नहीं सकती। तब ? क्या वह अपना काम छोड़ दे और घर का सारा काम खुद किया करे ? लेकिन यह तो वही बात हुई, जो सदियों से चलती आ रही है, कि एक कमाकर लाये और दूसरा बनाकर खिलाये। एक के लिए दूसरा हमेशा अपनी बलि देता रहे। अब तक पुरुष के लिये स्त्री अपनी बलि देती आयी है, अब क्योंकि स्त्री काम करने लगी है, इसलिए पुरुष का बलिदान होगा ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि दोनों अपना-अपना काम भी करें और साथ भी रह सकें, खुश भी रह सकें ?

मगर बच्ची···? उसे लगा, सारी परेशानी बच्ची के कारण ही है। बच्ची के होने से पहले वे साथ भी रह लेते थे और खुश भी। बच्ची के आ जाने से काम बेहद बढ़ गया है और हर समय के लिए दोनों में से एक का बंधन हो गया है।

परिवार में कोई और होता तो···शायद···लेकिन उसका तो प्रश्न ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं उठता। उसकी माँ तो मर चुकी है और पत्नी की माँ आ नहीं सकती। फिर ? कोई नौकर या आया रखना बूते की बात नहीं। दोनों की आमदनी मिलाकर खर्च चल जाये, यही बहुत है। उसे लगा, कोई उपाय नहीं है। लेकिन उपाय होना चाहिए। क्या उपाय होना चाहिए ?

कुछ समझ में नहीं आया तो उसने पत्नी के साथ लेटकर उसके सीने पर सिर रख लिया। पत्नी कसमसायी, लेकिन वह यों ही पड़ा रहा। जश्न का दिन था और वह अपना जश्न ऐसे ही मना लिया करता था, पर आज ऐसे भी मनाने की इच्छा नहीं हुई। यों भी वे दूसरा बच्चा नहीं चाहते थे, क्योंकि एक को ही सँभालना मुश्किल था, इसलिए उन्हें निरोध का ध्यान रखना पड़ता था और पत्नी का तो उसे पता नहीं, लेकिन वह निरोध से नफरत करता था। उसके इस्तेमाल के साथ उसे लगता कि वह एक बेहूदे नाटक के लिये अपने-आपको तैयार कर रहा है···

अचानक लेटे-लेटे उसने महसूस किया कि उसका शरीर ऐंठने लगा है, दाँत भिंचने लगे हैं, कनपटी के ऊपर माथे की नस फड़कने लगी है और उसकी उँगलियों के नाखून हथेलियों में खुभने लगे हैं···आइ एम फीलिंग थ्रू फ्लैश···उसके दिमाग में निजिंस्की की बात आयी और उसे लगा कि पागलपन का दौरा पड़ने वाला है। वह डर गया, लेकिन अपने डर के बावजूद उसने कल्पना की कि वह पत्नी के मस्तिष्क की हत्या कर रहा है। नहीं, शायद वह उसके मस्तिष्क की हत्या कर चुका है और जिस स्त्री के सीने पर सिर रखकर वह लेटा हुआ है, वह मर चुकी है।

सिहरकर उसने सिर उठा लिया और तकिये पर रखकर लेट गया। खिड़की की शलाखों से कटी हुई चाँदनी अब पत्नी के चेहरे पर पड़ रही थी और बाहर आँगन में उड़ते हुए सूखे पत्तों की खड़खड़ाहट उसे सुनायी दे रही थी।

वह कुछ बोलना चाहता था···कुछ भी···लेकिन वह सारे संवाद भूल गया था। या ऐसा था कि एकांत में होने वाले इस चुपचाप नाटक के लिए संवाद कभी लिखे ही नहीं गये थे। वह अभिनय की उल्टी प्रक्रिया का शिकार हो गया था कि उसके पास शब्द नहीं थे और उसका शरीर शब्दों के बिना ही विभिन्न मुद्राओं में एक एब्सर्ड नाटक किये जा रहा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धीरे-धीरे वह शिथिल हुआ और उसे लगा कि वह कुछ सोच रहा है। शब्दों में नहीं, शायद चित्रों में···चेहरों में···अपने माता-पिता के चेहरे उसके सामने आ-जा रहे थे। पुराने ढंग का एक संयुक्त परिवार। घर पर दादाजी का शासन और माँ पर पिताजी का। माँ किसी वजह से रूठी हुई पड़ी हैं और पिताजी उनकी चोटी पकड़कर खींच रहे हैं, लातों और घूँसों से माँ को मार रहे हैं और माँ गिड़गिड़ाती हुई क्षमा माँग रही हैं। रोती जा रही हैं और हँसती जा रही हैं—मत मारो, मैं हँसूँगी···लो देखो, हँस तो रही हूँ···

फिर बड़े भइया और भाभी के चेहरे हैं। लगातार गुमसुम···हमेशा एक-दूसरे की ओर शिकायती नज़रों से देखते हुए···भाभी रो रही हैं··· भैया घर के बाहर किसी दीवार की आड़ में किसी दूसरी औरत के साथ खड़े हँस रहे हैं···

अब गुलशन का चेहरा है···सिद्धार्थ का चेहरा···अपनी कला-साधना के लिए वह पारिवारिक बंधनों को तोड़कर चला आया है। उसकी अनपढ़ बीवी और बच्चे और माँ-बाप किसी गाँव में उम्मीद लगाये पड़े हैं कि एक दिन गुलशन लौटकर आयेगा और बहुत सारा पैसा कमाकर अपने साथ लायेगा···

और अब वह अपना ही चेहरा सामने देख रहा है···उस चेहरे पर कोई विकल्प पा जाने की आतुर अकुलाहट है···और झुंझलाहट भी कि कोई भी विकल्प उसे सही नहीं लग रहा है। तलाक ? लेकिन बच्ची ? बच्ची किसी अनाथालय में···नहीं-नहीं, वह बच्ची से प्यार करता है, वह बच्ची की ज़िन्दगी बरबाद नहीं करेगा···पत्नी की भी नहीं, क्योंकि वह पत्नी को भी प्यार करता है। नाटकीय प्रेम नहीं, सचमुच ! तब क्या वह खुद स्टेज छोड़ दे ? हरगिज़ नहीं···तब फिर ज़िन्दगी का मकसद ही क्या रह जायेगा ? और यह तो वही पुराना विकल्प होगा—एक के लिए दूसरे का बलिदान···

"सो गयीं ?" उसने सहज स्वर में पत्नी से पूछा।

"नहीं तो, क्यों ?" पत्नी का क्रोध भी शायद बह गया था।

"इस तरह यह सब कैसे चलेगा !"

"हाँ, इस तरह तो नहीं चल सकता।" पत्नी ने कहा। थोड़ी देर चुप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS MoE 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहकर बोली, "सोचो तो, हम लोग कितने बदल गये हैं···यही सब करने के लिए हमने शादी की थी ? सोचा करती थी, मैं तुम्हें चिन्ताओं से मुक्त रखूँगी ताकि तुम अपना पूरा ध्यान स्टेज पर लगा सको···और अब वही स्टेज मेरी सौत बन गयी है···"

पत्नी फिर सिसक उठी। वह भी द्रवित हो उठा। बोला, "और मैं चाहता था कि अपने अभिनय से ऐसी बात पैदा करूँगा कि दुनिया के सारे बेअसर शब्द असरदार हो जायें···दुनिया उनसे प्रभावित हो और अपने-आपको बदले···मगर···।" उसने बात अधूरी छोड़ दी। कहना चाहता था कि अब तो शब्द ही मेरा साथ छोड़ने लगे हैं, लेकिन किसी अज्ञात भय के कारण कह नहीं सका।

"तुम अपना काम करते रहो···रही बेबी, सो उसे पैदा किया है तो जैसे भी होगा उसे पालेंगे। मैं तो सिर्फ यह चाहती हूँ कि हम लोग अपनी ज़िंदगी में ऐसा कुछ कर जायें कि हमारी बेबी को यह सब न सहना पड़े जो···"

"लेकिन क्या हम कर पायेंगे ऐसा कुछ ?" वह डूबते-से स्वर में बोला, "जानती हो, मैं कितना बदल गया हूँ ? पहले मैं किसी नाटक में रोल करने के लिए नाटक पढ़ता था, पसंद करता था, और अब···पैसों की इतनी तंगी रहती है कि किसी भी नाटक में शामिल हो जाता हूँ। आइ हेट इट, बट प्रिटेंड टु लाइक इट···" कहते-कहते वह अटक गया और निजिस्की से अपनी तुलना करने लगा। उसे लगा, तुलना गलत है। निजिस्की मानता रहा होगा अपने-आपको ईश्वर, मैं नहीं मानता। मान सकता ही नहीं। और अपनी देह के चलते पत्नी के मस्तिष्क की हत्या···कभी नहीं··· मस्तिष्क की हत्या हो जाने के बाद कोई जीवित नहीं रहेगा···और फिर बच्ची भी···सारी दुनिया ही खत्म हो जायेगी।

पत्नी धीरे-धीरे कुछ सोचती हुई-सी कह रही थी, "तुम अकेले ही ऐसे नहीं हो। और भी तमाम लोग हैं दुनिया में, जिन्हें मजबूर होकर क्या-क्या नहीं करना पड़ता···बस फर्क इतना है कि कुछ लोग उम्मीद करते हैं कि दुनिया बदलेगी और कुछ उम्मीद छोड़कर बैठ जाते हैं।"

"नहीं नहीं, मैंने उम्मीद नहीं छोड़ी है, रानू !" उसने कुहनी के बल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gra

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ज़रा-सा उठते हुए कहा, "हम लोग उम्मीद छोड़ देंगे तो बेबी का क्या होगा ? मैं तो बस यह चाहता हूँ कि निराशा जब इतनी घनी है तो हम अपना हँसना-मुस्कराना नहीं छोड़ें···नहीं तो हम मर जायेंगे रानू !"

पत्नी हँसी। उसकी हँसी कृत्रिम नहीं थी, क्योंकि उसमें व्यथा का भी कोई स्वर शामिल था। बोली, "मैं तो तुम्हारी हँसी के लिए तरस गयी हूँ···याद है, तुम कहा करते थे कि तुम्हारे लिए मैं सारी दुनिया से लड़ जाऊँगा···शुरू में लड़े भी···लेकिन अब मैं ही तुम्हें भार और बंधन-सी लगने लगी हूँ···तुम जब नारी-मुक्ति वाला नाटक किया करते थे, कहते थे, रानू मैं तुम्हें औरतों की इस परंपरागत गुलामी से मुक्ति दिलाना चाहता हूँ ताकि हमारी बेबी का भविष्य न बिगड़े···और अब ?" वह खिलखिलाकर हँस पड़ी। इस बार उसकी हँसी में व्यथा नहीं व्यंग्य की खनक थी।

उसे लगा, चाँदनी सारे कमरे में भर गयी है और वह एकदम निर्वस्त्र पत्नी के पास लेटा है। लेकिन उसे शर्म नहीं आयी। हाथ बढ़ाकर उसने पत्नी को अपनी तरफ खींच लिया, कसकर भींच लिया, और एक भरपूर चुम्बन लेने के बाद बोला, "मैं पागल हो गया था, पर अब ठीक हूँ।"

इसके बाद दोनों उठे। उठकर दूसरे कमरे में आये, जहाँ बच्ची अकेली सो रही थी। दोनों बच्ची के इधर-उधर लेट गये। वह हल्के हाथ से बच्ची के रेशम जैसे बालों को सहलाने लगा। पत्नी ने प्यार से सोयी हुई बच्ची के गाल को चूम लिया और बोली, "बड़ी होती जा रही है।"

"हाँ, बड़ी तो होगी ही।" उसने कहा और बच्ची का दूसरा गाल चूम लिया। और उसे लगा कि अब वह नाटक बिल्कुल नहीं कर रहा है। उसके पास शब्द भी हैं और उनके अनुरूप व्यवहार भी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समतल

शायद गलती से हम लोग उस ट्रेन में बैठ गये थे। बम्बई की लोकल ट्रेन देखी है न ? बस, वैसी ही थी वह। और मजेदार बात यह थी कि हम सबसे आगे वाले, एकदम सामने वाले डिब्बे में बैठे थे। पता है, लोकल में इंजन नहीं होता ? सबसे आगे वाला डिब्बा यों तो उतना ही बड़ा होता है जितने और डिब्बे, लेकिन एकदम सामने एक बेहद छोटा कम्पार्टमेंट होता है, जिसमें चालक बैठता है और उसका एक सहयोगी। सो, हम चालक वाली जगह में बैठे थे और सामने लगे शीशों में से हमें पटरियाँ दिखायी दे रही थीं।

हमें पूरा अहसास था कि हम गलत गाड़ी में बैठे हैं, फिर भी हम बैठे थे और गाड़ी चल रही थी। तभी सामने से इंजन वाली एक ट्रेन तेज़ी से अपनी ओर आती हुई दिखायी दी। हमारी साँस रुक गयी। अब खैर नहीं है। बस, जीवन के कुछ पल और··· धाड़धाड़-धच्च, धक्का, टूटन, टुकड़े, किरचें, चीखें और···और फिर भी यह ख्याल आया था कि सामने से आने वाली गाड़ी ही 'हमारी' गाड़ी है, यानी सही ट्रेन, जिसमें हमें बैठना था।

लेकिन तभी नज़र सामने की पटरियों पर गयी···दो ये और दो वे। सामने से आती हुई ट्रेन पटरी-कैंची पर आकर दूसरी पटरी पर मुड़ गयी और दायीं ओर से धड़धड़ाती हुई गुज़रने लगी। जान बची। मुक्ति मिली। लेकिन फिर हमारा ध्यान उन पटरियों पर गया, जिन पर हमारी ट्रेन चल रही थी और तब हमारी समझ में आया कि लाइन उस गाड़ी ने नहीं, हमारी गाड़ी ने बदली थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और अब जिन पटरियों पर हमारी गाड़ी थी, वे बहुत खतरनाक थीं।

लाइन दूर तक बिछी हुई दिखायी देती थी, मगर बीच-बीच में उसके कुछ हिस्से गायब थे···इधर से भी, उधर से भी। ये गैप···हमने सोचा, ये गैप कैसे पार किये जायेंगे ? ये लोग ट्रेन को रोक क्यों नहीं देते ?

ये लोग···! इन शब्दों के साथ मैं शेष सबसे अलग हो गया, जैसे चालक वे ही हों और मैं उनके साथ मामूली यात्री। शायद मन में यह बात कौंधकर बुझ गयी थी कि मेरी उपस्थिति में जो दुर्घटना घट रही है, उसका उत्तरदायी मैं नहीं, ये लोग हैं और मर जाना मुझे आसान लग रहा था··· उन हज़ारों की तरह, जो पिछले डिब्बों में खचाखच भरे हुए थे। मैं उनकी मृत्यु के लिए जिम्मेदार नहीं, क्योंकि मैं भी उन्हीं की तरह, उन्हीं में से एक होकर मरूँगा।

पहले गैप में ही गाड़ी पटरी से उतर गयी और बायीं ओर मुड़ गयी। बायीं ओर एक ढलान थी। गाड़ी उस ढलान से उतरी और नीचे के समतल में धँस गयी। रुक गयी।

मुझे आश्चर्य हुआ। कोई दुर्घटना नहीं हुई थी। कोई डिब्बा उलटा नहीं था। कोई चीखा नहीं था। कोई चीज़ टूटी नहीं थी। बस, इतना हुआ था कि गाड़ी पटरी से उतरकर रेत में धँसी खड़ी थी और आसपास कोई बस्ती नहीं थी।

क्या हुआ ? क्या हुआ ?

लोग नीचे उतर आये और कौतुक-भरी आँखों से तमाशा देखने लगे।

शायद सबने जीवन में पहली बार रेत में धँसी हुई रेलगाड़ी देखी थी और शायद सबने इसके बावजूद सुरक्षित रह जाने पर ईश्वर को धन्यवाद दिया। एक बच्चे ने खुश होकर तालियाँ बजाते हुए कहा, "मम्मी-मम्मी, रेत में रेल ! मम्मी, अब ये गाड़ी पटरी पे नहीं चलेगी ?"

"नहीं, बेटे।"

मैंने उस स्त्री को अब तक देखा नहीं था। स्वर सुनकर देखने की इच्छा हुई। स्वर में एक साथ कई चीज़ें मुझे महसूस हुई थीं—भय, आशंका, बेचैनी, घबराहट, आतंक। केवल दो शब्द बोलकर, स्वर के केवल एक चढ़ाव, एक उतार, एक कंपन से इतना कुछ कह जाने वाली यह स्त्री कौन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है ? मैंने उधर देखा···

अरे, मासी माँ, तुम ?

मुझे अच्छी तरह याद है कि वे मासी माँ ही थीं, लेकिन आश्चर्य, वे मुझसे बोलीं नहीं। बच्चे की बाँह पकड़कर उन्होंने उसे अपनी ओर खींचा और उलटे पाँव चलती हुई भीड़ में गायब हो गयीं।

मेरी समझ में नहीं आया कि मुझे देखकर वे इतनी आतंकित क्यों हो गयी थीं।

मैंने यह घटना सुनायी, तो घर के लोग हँस दिये। मेरी समझ में नहीं आया कि वे क्यों हँस रहे हैं। मैं तो अभी तक उसकी स्मृति से सिहर रहा था।

"तुम्हें आजकल काफी बुरे सपने आने लगे हैं।" बड़े भैया बोले।

"सपने नहीं, इसके दिमाग में ही कुछ खुराफात है।" मँझले भैया ने अपनी राय दी।

"रात को छाती पर हाथ रखकर सो जाते होंगे। छाती पर जरा-सा भी दबाव रहे, तो बुरे-बुरे सपने आते हैं।" भाभी शायद अपना अनुभव बता रही थीं।

"नहीं-नहीं, जिस दिन ज्यादा खा जाओ, उसी दिन ऐसा होता है।" यह दीदी का विचार था। और दीदी की बातों पर सब लोगों को हँसने की आदत थी, इसलिए फिर से सब हँस पड़े। मैं भी हँसा।

"और सबसे बड़ी बात यह है कि···" मँझले भैया खूब हँस चुकने के बाद बोले, "मासी माँ तो कभी की मर चुकी हैं। और जैसा कि तुमने बताया, एक बच्चा उन्हें मम्मी कह रहा था···उनका तो एक ही बच्चा था, था क्या, है···अपने अतुल भाई साहब हैं और उनकी उम्र क्या है तुम जानते हो, बड़े भैया से भी ज्यादा !"

"हाँ, इसका क्या जवाब है तुम्हारे पास ?" बड़े भैया ने 'कारण बताओ' नोटिस दिया। और मेरे पास न कोई जवाब था, न कोई कारण।

मुझे लग रहा था कि वे सब मुझ पर अविश्वास करके ठीक ही कर रहे हैं। फिर भी मुझे गुस्सा आ रहा था। जैसे वे सब वकील हों और मेरे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'जो कुछ कहूँगा सच-सच कहूँगा' वाले बयान पर बेकार की जिरह कर रहे हों। जब ऐसा ही करना था तो जब मैं चुपचाप बैठा हुआ था, इन्होंने पूछा ही क्यों कि तुम क्या सोच रहे हो ?

"मेरे पास कोई जवाब नहीं है।" मैंने कहा और अपने घुटनों पर पड़ा अखबार मोड़कर कोने में फेंक दिया। उठ खड़ा हुआ और कमरे से निकल आया। चप्पलें पहनने लगा तो बड़े भैया ने पूछा, "कहाँ चल दिये ?"

मैंने उत्तर दिया। सीढ़ियों पर उतरते समय उन सबकी सम्मिलित हँसी सुनायी दी। फिर भाभी की आवाज़, "बुरा मान गये लालाजी !"

मुझे मालूम था कि अब कम से कम पन्द्रह मिनट तक वे मेरे ही बारे में बातें करने वाले हैं। हमेशा यही होता है। हम में से जो भी उठकर चला जाये, काफी देर तक हम उसी के बारे में बातें करते रहते हैं। और यदि पीठ पीछे की उन बातों को 'साफ-साफ मुँह पर' कही जाने वाली बातों से मिलाकर देखा जाये, तो काफी हद तक नीच साबित किये जा सकते हैं।

गुस्से की एक और लहर मुझे कँपा गयी। अब बड़े भैया फिर उसी बात को छेड़ेंगे, और गँडेरी की तरह तब तक चूसते रहेंगे, जब तक उसके फीके फोक में मिठास का अहसास भी नहीं रह जाये—"फौजियों ने किस तरह औरतों की इज़्ज़त लूटी है ! उफ ! हम बताते हैं साहब !" और फिर मज़ा ले-लेकर बलात्कारों के काल्पनिक वर्णन···भाभी के सामने, मँझले भैया के सामने, मेरे सामने, जो भी मिल जाये, उसी के सामने।

परसों मुझसे कह रहे थे, "तुम अपने कॉलेज में एक ड्रामा कराओ··· रिफ्यूजियों की मदद के लिए। ड्रामा तुम खुद लिखो। आइडिया हम देते हैं। यों है कि एक प्रेमी है, एक प्रेमिका है। दोनों देशभक्त हैं। गोदना गोदने वाली एक औरत आती है और वे दोनों उससे अपनी छातियों पर 'जय बांगला' गुदवा लेते हैं। फिर वे क्रांतिकारियों के पास जाते हैं। मुक्ति-वाहिनी में भरती होते हैं और इस दौरान आपस के डायलाग्स में सारी बैकग्राउंड बता दी जाती है। इतने में क्रांतिकारियों के उस अड्डे पर फौजी हमला होता है और सारे मर्द मारे जाते हैं। फकत लड़की बचती है। फौजी उसकी इज़्ज़त लूटते हैं···इसके लिए लाइट एंड शेड से दिये जाने वाले सारे सजेशन्स हम बता देंगे···तो, उस जबरदस्ती में लड़की मर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाती है। जब मर जाती है, तो एक फौजी मशाल लेकर आता है और लड़की की छाती को झुलसाकर उन हरूफों को मिटाता है, जो उसकी छाती पर गुदे हुए हैं…"

तब पता नहीं क्यों, मुझे ऐसा लगा था कि बड़े भैया अगर पाकिस्तानी फौज में होते तो ऐसा ही करते…ठीक ऐसा ही। और मेरा मन हुआ था, पागल हो जाऊँ और उन्हें…लेकिन मैंने कुछ कहा नहीं था। चुप रहा था और काफी देर बाद मैंने दर्द महसूस करते हुए पाया था कि मेरा निचला होंठ ऊपर वाले दाँतों के नीचे दबा हुआ है।

घर से निकल आया था, लेकिन मुझे पता नहीं था कि कहाँ जाऊँगा। बस, कहीं जाने के विचार से स्टेशन की ओर चल दिया था। छुट्टी भी कितनी बड़ी असुविधा होती है! आप ऐसा महसूस करते हैं, जैसे कोई उपग्रह अपनी कक्षा से अंतरिक्ष में भटक गया हो। विशेष रूप से बम्बई में, जहाँ ऐसी जगहें बहुत कम हैं जहाँ जाया जा सके। जगहें, यानी लोग।

बोरीवली से चर्चगेट तक पास बनवा लेने का यह फायदा है। इस रास्ते के सारे स्टेशन, सारे प्लेटफार्म, सारी गाड़ियाँ आपकी हो जाती हैं। और मेरे लिए यह काफी राहत देने वाली बात है। कम-से-कम एक जगह तो ऐसी है कि आप अपनी मरजी से जब चाहें, वहाँ जा सकते हैं। घर की चख-चख से बचने के लिए मैंने कुछ छुट्टियाँ लोकल ट्रेन में बोरीवली से चर्चगेट और चर्चगेट से बोरीवली आते-जाते बितायी हैं।

लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ, जब मैं ट्रेन में बैठा और मैंने पाया कि मैं अतुल भाई के पास जाना तय कर चुका हूँ। और मुझे चर्नी रोड उतरना है। ऐसा लगा, जैसे व्यर्थ होते-होते अचानक दिन की सार्थकता का अहसास हो जाये।

अतुल भाई के बारे में आपको कुछ बातें बता दूँ। उम्र में मुझसे दूने बड़े हैं और यों मुझे छोटा भाई मानते हैं, लेकिन बर्ताव दोस्ती का करते हैं। उनके सामने सिगरेट पीने में झिझक नहीं होती। शराब पी रहे हों और कह दें कि तुम भी थोड़ी-सी ले लो, तो संकोच नहीं होता। पुस्तकों की, फिल्मों की, राजनीति की और लड़कियों की बातें उनके साथ खुलकर की जा सकती हैं, भले ही आप उनके विचारों से सहमत हों या न हों। लेकिन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दिक्कत यह है कि वे मिलते बहुत कम हैं। दस बार उनके होस्टल जाऊँगा तो मुश्किल से तीन बार भेंट होगी। और फोन पर समय निश्चित करना उन्हें पसन्द नहीं। कहते हैं, "यह क्या बात हुई कि टाइम लेकर आप खुद भी बँध गये और मुझे भी बाँध दिया!"

जन्म से अतुल भाई बंगाली हैं। पूरा नाम अतुल कुमार चक्रवर्ती। मासी माँ इन्हें छोटी-सी उम्र में लेकर आयी थीं···बर्दवान से अजमेर··· बंगाल के अकाल के समय। तब तक मेरा जन्म भी नहीं हुआ था।

मुझे तो जब से होश आया, मासी माँ और अतुल भाईसाब को मैंने घर में ही देखा। बड़े और मँझले भैया भी उन्हें भाई साब ही कहते थे। यह और बात है कि भाई साब की इज्ज़त नहीं की जाती थी। मासी माँ के साथ भी यही बात थी। वे घर का सारा काम करती थीं ··झाड़ू-बुहारी, चौका-बरतन, खाना बनाना, कपड़े धोना···और भाई साब घर-बाहर दोनों का काम करते थे···बाज़ार से सौदा-सामान लाना, हम लोगों को स्कूल छोड़ने जाना और वहाँ से वापस लेकर आना, शाम को पार्क में घुमाने ले जाना, हर समय किसी भी काम के लिए प्रस्तुत रहना···

बड़े और मँझले भैया को मासी माँ और भाई साब के बहुत-से मज़ेदार किस्से याद हैं कि वे कैसे उन दोनों को परेशान किया करते थे। लेकिन छोटे भैया की और मेरी बात अलग है। हम दोनों को माँ के मरने के बाद मासी माँ ने ही पाला था। छोटे भैया को भले ही याद हो, मुझे अपनी माँ की याद बिल्कुल नहीं है। मैं तब बहुत छोटा था, जब वे मरी थीं। और शायद यही बात है कि माँ के बारे में सोचने पर मुझे वह तस्वीर याद नहीं आती, जिस पर होली-दीवाली लटकायी जाने वाली सूखी फूल-माला झूलती रहती है। मुझे हमेशा मासी माँ याद आती हैं। और उनकी कहानियाँ···उनकी बातें···

"मासी माँ बूढ़ी हो जायेगी और काम नहीं कर सकेगी, तब तुम क्या करोगे?" वे पूछती थीं।

और छोटे भैया जवाब देते थे, "एक सुन्दर-सा झूला बनवायेंगे, मासी माँ, उसमें गुदगुदा बिस्तर बिछायेंगे और उसमें तुम्हें लिटा देंगे और वो··· वहाँ तक एक लम्बी डोरी बाँधेंगे उसमें। बैठे-बैठे पढ़ते भी रहेंगे और डोरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खींच-खींचकर तुम्हें झुलाते भी रहेंगे।"

और मासी माँ हँस-हँसकर दोहरी हो जाती थीं। एक बाँह में मुझे और दूसरी बाँह में छोटे भैया को समेटकर अपने से सटा लेती थीं और बारी-बारी से हम दोनों को चूमती थीं···उनके गोरे और सुन्दर चेहरे पर फैली हुई वह हँसी···

अतुल भाई ने पढ़ना बहुत बाद में शुरू किया था। पहले तो यह होता था कि बड़े भैया स्कूल से आने के बाद शाम को मास्टर-मास्टर खेलते। खुद अध्यापक बनते और हम लोगों को विद्यार्थी बनाकर पढ़ाते थे।

गलती करने पर बड़े भैया बेंत मारते थे, इसलिए मँझले और छोटे और मैंने उनसे पढ़ना छोड़ दिया था। लेकिन अतुल भाई साब को मासी माँ ने वह खेल-खेल का स्कूल नहीं छोड़ने दिया। कहतीं, "इसी बहाने चार अक्षर सीखेगा···और मार का क्या है, विद्या बिना पिटे थोड़े ही आती है!" और अतुल भाई साब पिट लेते थे···खूब पिट लेते थे।

लेकिन फिर एकाएक पिताजी को लगा कि अतुल को भी स्कूल जाना चाहिए। और अतुल भाई के लिए नयी-नयी किताबें आयीं, नये कपड़े सिले, नये जूते-मोजे मिले। और जब पहले दिन स्कूल के लिए उन्हें तैयार करते समय मासी माँ ने उनके बालों को कंघी से सँवारकर बस्ता उनके गले में लटकाया, तो मैं देखता ही रह गया था···भाई साब इतने सुन्दर! लेकिन बड़े भैया को न जाने क्यों गुस्सा आ गया था और बाहर निकलते ही उन्होंने धक्का देकर अतुल भाई को नाली में गिरा दिया था। उनके सारे कपड़े खराब हो गये थे और वे रो पड़े थे···मासी माँ भी रोयी थीं··· और पिताजी ने सारी बात सुनकर बड़े भैया को पीटा था।

उस दिन से···शायद उसी दिन से घर में कुछ परिवर्तन हो गया था।

पता नहीं कब और कैसे घर में दो दल बन गये थे। एक में दीदी थीं, बड़े भैया थे और मँझले भैया थे। दूसरे में मासी माँ, अतुल भाई साब, छोटे भैया और मैं। पिताजी का कुछ पता नहीं चलता था कि वे किस दल में शामिल हैं। शायद वे दोनों दलों से ऊपर थे लेकिन घर में पलने वाले विद्रोह की जानकारी उन्हें थी।

दीदी ने एक दिन मासी माँ से खूब झगड़ा किया था···यह काफी बाद

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की बात है, जब हम बड़े होने लगे थे और दीदी शादी के लायक हो गयी थीं···मासी माँ ने दीदी को डाँटा था और दीदी ने बड़े तीखेपन से कहा था, "हो तो आखिर भिखमंगी न !"

यह तिरस्कार दीदी ने मासी माँ को नीचा दिखाने के लिए, उन्हें उनकी औकात बताने के लिए किया था। मासी माँ का मुँह खुला रह गया था और वे फटी-फटी आँखों से देखती रह गयी थीं। फिर वे जहाँ खड़ी थीं, वहीं ढहती हुई-सी बैठ गयी थीं और घुटनों में मुँह छिपाकर रोने लगी थीं।

मुझे और छोटे भैया को उसी दिन पता चला था कि मासी माँ अतुल भाई के साथ भीख माँगती हुई आयी थीं और पिताजी ने उन्हें नौकरी देकर घर में रख लिया था। फिर दीदी से ही यह मालूम हुआ था कि मासी माँ के कारण पिताजी की बहुत बदनामी हुई थी और यह भी कि माँ भी इसी दुःख में मरी थीं···

वह रात भयंकर थी। पिताजी ने घर आकर दीदी, बड़े भैया और मँझले भैया को खूब डाँटा था। और फिर अपने कमरे में बंद होकर रोये थे।

और उस रात मुझे नींद नहीं आयी थी। सब लोगों के सो जाने के बाद मैं चुपके से कमरे का दरवाज़ा खोलकर आँगन में आया था। सर्दी से काँपता हुआ मासी माँ के कमरे की ओर गया था और देखा था कि मासी माँ अपने कमरे में नहीं हैं। पिताजी के कमरे में झाँका था और देखा था कि टेबल-लैंप जल रहा है। पिताजी अपना ऊनी गाउन पहने हुए आराम कुर्सी पर सो रहे हैं और काली-सफेद धारियों वाला शाल ओढ़े मासी माँ नीचे कार्पेट पर बैठी पिताजी के घुटनों पर सिर रखे सो रही हैं···

वह शांत और स्थिर दृश्य मैंने बाहर ठंड में सुन्न होते हुए देखा था और देर तक देखता रहा था और रात की, ठंड की, परिस्थिति की भयंकरता मेरे लिए कम होते-होते खत्म हो गयी थी। और जो चीज़ मैंने जानी थी, वह थी एक अजीब-सी खुशी, एक अद्भुत सुख।

लेकिन उसके कुछ ही दिनों बाद एक रात पिताजी की तबीयत खराब हुई थी और दूसरे दिन सुबह-सुबह उनकी मृत्यु हो गयी थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पिताजी की मृत्यु के बाद घर के सारे अधिकार बड़े भैया के हाथ में आ गये थे।

तेज़ी से घर की व्यवस्था बदलने लगी थी। पहले अतुल भाई की पढ़ाई छूटी। उन दिनों वे बी० ए० में पढ़ रहे थे। फिर दीदी की शादी हुई। पिताजी अपने जीते-जी उनकी शादी बम्बई में तय कर गये थे। फिर घर के सब काम जीजाजी की सलाह से होने लगे। अजमेर वाला मकान बेचा गया, बम्बई में मकान लिया गया और सब लोग जीजाजी के संरक्षण में बम्बई आ गये। मासी माँ भी आयीं, अतुल भाई भी आये।

और यहाँ आने के बाद सब कुछ बिखर गया। ऊपर से सब कुछ सहज लगता है। दीदी हैं, जीजाजी हैं, बड़े भैया हैं, भाभी हैं, मँझले भैया हैं, मैं हूँ···यों एक परिवार है, लेकिन इसकी तीन शाखें कट चुकी हैं···मासी माँ, अतुल भैया और छोटे भैया। और मैं···मुझे पता नहीं कि मैं इस परिवार से जुड़ा हूँ या कटा हुआ।

"मासी माँ, अतुल भाई साब को नौकरी मिल गयी है, अब उनसे कहो, मकान ले लें।" बड़े भैया ने एक दिन कहा था। मासी माँ कुछ बोल नहीं पायी थीं। बस, देखती रही थीं, जैसे समझने की चेष्टा कर रही हों कि भैया कहना क्या चाहते हैं। तब भैया ने बात साफ की थी, "और कब तक शरणार्थी बनी रहोगी तुम !"

"शरणार्थी !" मासी माँ लगभग चीख उठी थीं। आँखें डबडबा गयी थीं। फिर चेहरे की हल्की-हल्की झुर्रियों पर आँसू फिसल पड़े थे। आँसू पोंछते हुए उन्होंने कहा था, "ठीक है, मैं आज ही कह दूंगी उससे।"

मैं भी था वहाँ, लेकिन बेहद गुस्से में होते हुए भी मैं कुछ बोल नहीं पाया था। छोटे भैया कोने में बैठे हुए कुछ पढ़ रहे थे। अचानक उन्हें कुछ हुआ था और उन्होंने हाथ की किताब दीवार पर दे मारी थी और अपनी जगह से उठते हुए ज़ोर से चिल्लाये थे, "मासी माँ कहीं नहीं जायेंगी !"

"ओ हो ! बड़ा गुस्सा आने लगा है आजकल तुम्हें !" बड़े भैया ने व्यंग्यपूर्वक मुस्कराते हुए कहा था।

छोटे भैया और ज़्यादा भड़क गये थे, "देखता हूँ, मेरे रहते कौन इन्हें निकालता है !"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बड़े भैया उसी तरह मुस्कराते हुए बोले, "निकाल कौन रहा है !" और बाहर चले गये थे।

छोटे भैया काफी देर तक गुस्से में बोलते रहे थे। मुझसे भी बोले थे, "तुम्हारी ज़बान कट गयी है ? बेवकूफों की तरह खड़े रहे। तुमसे कुछ बोला नहीं गया !"

और उस रात अतुल भाई के लौटने पर घर में बड़ा हंगामा हुआ था।

मासी माँ और अतुल भाई जाने को तैयार थे, मगर छोटे भैया का कहना था कि वे नहीं जायेंगे। बात काफी बढ़ गयी थी और छोटे भैया ने कहा था, "इस घर में मेरा भी हिस्सा है कुछ !"

"तुम्हारा हिस्सा तुम्हारी पढ़ाई में खत्म हो चुका। अब कोई हिस्सा-विस्सा नहीं है।"

"मैं इस घर को आग लगा दूँगा !"

"वो तो हम जानते हैं, बड़े बहादुर हो !"

"मुझे पता नहीं था, इस घर में इतने नीच लोग रहते हैं !"

"अब तो पता चल गया ? अब मत रहो नीच लोगों के साथ !"

"हाँ-हाँ, नहीं रहूँगा।"

और छोटे भैया उठकर बाहर निकल गये थे। बड़े भैया और जीजाजी ने मिलकर एक ठहाका लगाया था और हँसी थमने के बाद कहा था, "पुलिस वाला डंडा मारकर पूछेगा—कहाँ घूम रहे हो ? तब अकल आयेगी !" फिर थोड़ी देर बाद कहा था, "और तुम भी सुन लो ! इस घर में बग़ावत नहीं चल सकती, समझे ?"

मैं कुछ नहीं समझ पाया था। यह कैसी बग़ावत थी ? मैंने यह शब्द इतिहास में ही जाना था। एक शक्ति के विरुद्ध दूसरी शक्ति का विद्रोह समझ में आता था और वह भी राजनीति के संदर्भ में। घर में यह कैसी बग़ावत ? और छोटे भैया कौन-सी शक्ति हैं ? और मैं उनसे किस रूप में जुड़ा हुआ हूँ कि मुझे भी चेतावनी दी जा रही है ? और यह विद्रोह आखिर है किसलिए, जब मासी माँ और अतुल भाई को कोई शिकायत नहीं है ?

मगर उन्हें शिकायत क्यों नहीं है ? पच्चीस बरस हो चुके हैं उन्हें इस परिवार में रहते हुए। फिर भी वे इस घर को अपना नहीं समझते ? क्यों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं समझते ?

मुझे भी गुस्सा आ गया था और मैं छोटे भैया को ढूँढ़कर वापस लाने के लिए बाहर निकल गया था। तीन-चार घंटे भटकने के बाद लौट आया था। वे मुझे नहीं मिले थे। घर आकर देखा था, मासी माँ भी उन्हें खोजने चली गयी हैं और मासी माँ को खोजने अतुल भाई। मैं फिर निकल पड़ा था···इस बार उन तीनों को ढूँढ़ने के लिए। बहुत देर बाद पुलिस स्टेशन पहुँचा और देखा था कि अतुल भाई रिपोर्ट लिखवा चुके हैं···

फिर हम दोनों थके-टूटे घर लौटे थे। रास्ते में अतुल भाई ने कहा था, "जानते हो, यह सब क्यों हो रहा है ? इसलिए कि आर्थिक सम्बन्धों के अलावा अब कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।"

"मैं नहीं मानता !" मैंने ज़ोर देकर कहा था, "आप अपने आपको, मासी माँ को, मुझे और छोटे भैया को सामने रखकर सोचिये।"

अतुल भाई चुप रहे, तो मैंने फिर उनसे कहा था, "क्या आपको कोई ऐसी चीज महसूस नहीं होती, जो हमें जोड़ती है ?"

"नहीं !" अतुल भाई ने कठोर स्वर में कहा था, "बी प्रैक्टिकल, सोमू ! कंसीडर फैक्ट्स ऐज़ फैक्ट्स।" उस समय उनका स्वर भर्राया हुआ था और चेहरा रुआँसा हो रहा था। कुछ देर बाद उन्होंने गहरी हताशा में डूबते हुए कहा था, "हम लोग यों ही नष्ट हो जायेंगे, सोमू।"

पता नहीं, किसी को पता नहीं, छोटे भैया नष्ट हो गये, या उनका क्या हुआ। उस रात के बाद वे लौटकर नहीं आये। और मासी माँ···अगले दिन पता चला था कि मासी माँ लोकल ट्रेन से कट मरीं !

अतुल भाई से मिलने के लिए जाते समय लोकल ट्रेन में बैठे-बैठे मुझे रात को देखा हुआ वह विचित्र सपना फिर याद आया···

गाड़ी पटरी से नीचे उतरकर नीचे के समतल में धँस गयी थी। रुक गयी थी। कोई दुर्घटना नहीं हुई थी। कोई डिब्बा उलटा नहीं था। कोई चीखा नहीं था। कोई चीज़ टूटी नहीं थी। बस, इतना हुआ था कि गाड़ी पटरी से उतरकर नीचे रेत में धँसी खड़ी थी और आसपास कोई बस्ती नहीं थी। लोग 'क्या हुआ·· क्या हुआ' करते इधर-उधर आ-जा रहे थे और मासी माँ नन्हे से अतुल भाई को खींचकर भीड़ में खो गयी थीं···

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने इधर-उधर देखा। दूर, जहाँ रेतीला मैदान खत्म होता था, एक विशाल झील शुरू होती थी···अजमेर के आनासागर जैसी। झील के पार पुष्कर घाटी की पहाड़ियाँ थीं और पहाड़ियों पर छायी हुई हरियाली के ऊपर झुके हुए बादल बरस रहे थे। रुकी हुई ट्रेन से उतरकर लोग उधर ही जा रहे थे···कंधों पर पिकनिक बैग और चाय भरे थर्मस लटकाये और हाथों में नाश्ते की बास्केट उठाये हुए···

फिर पता नहीं कब मैं झील के किनारे पहुँच गया था और हम हरी घास पर दरी बिछाकर बैठे हुए थे···ताश खेल रहे थे···मैं, अतुल भाई, छोटे भैया और दीप्ति दी।

"दीपा दी, आप कहाँ चली गयी थीं ?" मैंने पूछा।

दीप्ति दी हँस पड़ीं ··वही उनकी निर्मल झरने-सी हँसी। बोलीं, "वो उधर···उस पेड़ के पीछे।"

"पेड़ के पीछे ? क्यों ? वहाँ तो साँप रहते हैं !" मैंने घबराते हुए कहा।

"तुम्हें पता है···" उन्होंने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों में समझाइश भरते हुए कहा, "साँपों की देखभाल करने वाला कोई नहीं है न, इसलिए···!"

"तो दीपा दी, आप···?" मैं भय से सिहर उठा था और ताश के पत्ते मेरे हाथ से छूट गये थे। फिर मैंने उन पत्तों को किसी अथाह गहराई में रुकी हुई हवा पर तैरते-उलटते नीचे जाते हुए देखा था···

फिर वह गहराई न जाने कैसे चौड़ी होती चली गई थी और मैंने देखा था, वह एक गहरी घाटी है, जिसकी तली में पड़े पत्थरों पर साँप रेंग रहे हैं···तरह-तरह के रंग-बिरंगे साँप !

फिर देखा, घाटी के शून्य की इधर-उधर की चट्टानी कगारों पर एक ओर अतुल भाई खड़े हैं और दूसरी ओर दीपा दी। अतुल भाई उन्हें पुकार रहे हैं और दीपा दी उनके पास आने के लिए साँपों की घाटी में उतरने लगी हैं। मैं उन्हें नीचे उतरने से रोकने के लिए ज़ोर से चीख उठा हूँ···

तभी आँख खुल गयी थी और मैंने पाया था कि मैं अपने बिस्तर पर पसीने में भीगा हुआ पड़ा हूँ और मँझले भैया डाँटकर पूछ रहे हैं, "क्या बात है ? चीख क्यों रहे हो ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं उन्हें बताना ही चाहता था कि मैंने दीप्ति दी को साँपों की घाटी में उतरते देखा है, लेकिन उनकी प्रतिक्रिया का ख्याल करके चुप रह गया। दीप्ति का नाम भी ले लो, तो घर के सब लोग नाराज़ हो जाते हैं।

आपको बताता हूँ, दीप्ति एक बंगाली लड़की है। मासी माँ बम्बई में आने के बाद एक दिन कुछ खरीदने गयी थीं और लौटीं तो उनके साथ वह भी थी। तब तक वह अपरिचित ही थी। मासी माँ की आदत थी कि अकेले आते-जाते या काम करते बंगाली में बड़बड़ाती जाती थीं। उस दिन भी यों ही बड़बड़ाती जा रही थीं। दीप्ति ने पास से गुज़रते हुए मासी माँ का बड़बड़ाना सुन लिया था और यों ही कौतूहलवश पूछ बैठी थीं, "माँ, तुम कहाँ से आयी हो ?" और मासी माँ खुश हो उठी थीं। पता नहीं, कितना क्या उसे बता बैठी थीं और घर लौटते समय हम सबसे मिलाने के लिए साथ लेती आयी थीं।

"यह मेरी बेटी है !" मासी माँ ने परिचय कराया था, "इसने मुझे माँ कहा !"

उस आकस्मिक सम्बन्ध की बात सुनकर हम लोग मुस्कराये थे, मगर दीप्ति को देखते रह गये थे। मैंने तो पहली बार ही जाना था कि साँवले रंग में भी इतना रूप हो सकता है। अतुल भाई ने बहुत दिनों बाद एक बार कहा था, "बादल छायी बिजली के रंग की कल्पना कर सकते हो सोमू ? दीपा मुझे वैसी ही लगती है।"

और मैं अतुल भाई से सहमत हो गया था।

"कहाँ रहती हैं आप ?" मँझले भैया ने पूछा था।

"मलाड में।" दीप्ति की आवाज़ में कुछ था, जो बरबस खींचता था।

"घर में और कौन-कौन हैं ?"

"बाबा हैं···यानी पिताजी···और दो बहनें हैं।"

"बाबा क्या करते हैं ?"

"कुछ नहीं···बूढ़े हैं···मैं नौकरी करती हूँ···टीचर हूँ।" यह दीपा दी के बोलने का ढंग है। बीच-बीच में रुककर शब्दों को इस तरह जोड़ना और अलग कर देना कि बात पूरी गहराई से आपके मन में उतर जाये।

पहले दिन थोड़ी ही देर बैठी थीं। जाने लगीं तो मासी माँ ने वादा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करा लिया था कि फिर आयेंगी। और दीपा दी जब-तब आने लगी थीं। आतीं, बैठतीं, बातें करतीं, हँसती-हँसातीं और चली जातीं।

मासी माँ की मृत्यु के बाद आयी थीं, तो दुर्घटना की बात सुनकर खूब रोयी थीं। अतुल भाई बंगाली में बोलकर उन्हें सांत्वना देते रहे थे। भाभी और दीदी ने उनके सिर पर, पीठ पर हाथ फेरकर धीरज बँधाया था और बाद में अतुल भाई उन्हें उनके घर तक छोड़ने गये थे।

लेकिन इसके थोड़े ही दिन बाद गड़बड़ शुरू हो गयी थी। मँझले भैया और अतुल भाई में तनातनी हो गयी थी। कारण थीं दीपा दी। मंझले भैया न जाने क्यों उन्हें चालू लड़की कहा करते थे और अतुल भाई हर बार उनका विरोध करते थे, "आपको किसी के बारे में ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।"

"अरे जाओ, हम सब जानते हैं!" मँझले भैया तीखा व्यंग्य अपनी आवाज़ में घोलकर कहते। एक दिन तो उन्होंने यहाँ तक कह दिया कि उसके सारे अन्दाज़ टैक्सियों वाले हैं।

'टैक्सी' का मतलब अतुल भाई समझते थे और समझकर बहुत नाराज़ हुए थे। मँझले भैया से उनकी अच्छी-खासी झड़प हो गयी थी। फिर शाम को जब मैं अतुल भाई के साथ घूमने गया था, अतुल भाई ने बहुत ही क्षुब्ध होकर मुझसे पूछा था, "हम इतने संकुचित और संदेही क्यों हो गये हैं, सोमू?"

मैं कोई उत्तर नहीं दे सका था। सिर्फ महसूस करता रहा था कि अतुल भाई बहुत दुखी हैं। कुछ देर चुपचाप चलने के बाद उन्होंने पूछा था, "मैं दीपा से शादी कर लूँ तो कैसा रहे?"

"बहुत···बहुत अच्छा रहे भाई साहब! आप कर ही लीजिए। मासी माँ भी यही चाहती थीं शायद।" मैं एकाएक बेहद खुश हो आया था। और फिर हम देर तक दीपा दी के बारे में बातें करते हुए घूमते रहे थे···

और फिर घर के सब लोगों से छिपकर मैं और अतुल भाई दीपा दी के घर जाया करते, या किसी रेस्तरां में बैठकर चाय पिया करते···वे दिन···

और एक दिन जुहू बीच की रेत पर चलते-चलते हम तीनों एक जगह बैठ गये थे तो अतुल भाई ने तीसरी बार पूछा था, "आपको क्या बात

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है ? आज तुम इतनी उदास क्यों हो ?" और दीपा दी रो पड़ी थीं। रोते-रोते ही उन्होंने बताया था कि मँझले भैया मिले थे और पूछ रहे थे कि एक रात का क्या लेती हो···

अतुल भाई की आँखों में खून उतर आया था। घर आकर वे मँझले भैया से लड़ पड़े थे। गाली-गलौज भी हो गयी थी। बड़े और मँझले भैया, भाभी, दीदी और जीजाजी सब एक तरफ थे और अतुल भाई एक तरफ। मैं उनके साथ था, लेकिन मेरी सुनता कौन था ? कुछ कहने को होता कि कोई भी डाँट देता, "तू बीच में मत बोल !"

फिर जीजाजी आगे आये थे। अतुल भाई का हाथ पकड़कर दरवाज़े के पास तक ले गये थे और बर्फ़-सी ठंडी आवाज़ में बोले थे, "मिस्टर चक्रवर्ती, यू प्लीज़ गेट आउट।" और ठीक उसी समय एक हाथ से दरवाज़ा खोलकर उन्होंने दूसरे हाथ से अतुल भाई को धक्का देकर बाहर कर दिया था। अगले क्षण दरवाज़ा बन्द हो गया था और बाहर से ज़ोर-ज़ोर से उस पर थापें पड़ती रही थीं।

दरवाज़ा खोलने को मैं आगे बढ़ा था, लेकिन मँझले भैया ने मेरा कालर पकड़कर खींचा था और चीखकर कहा था, "तू कहाँ जाता है ? तुझे तो मैं समझूँगा !"

उस रात मुझे छोटे भैया बहुत याद आये थे···मैं इस घर को आग लगा दूँगा···मुझे नहीं पता था, इस घर में इतने नीच लोग रहते हैं···मैं इस घर को आग लगा दूँगा···मुझे पता नहीं था, इस घर में इतने नीच लोग रहते हैं···

लेकिन मैं कुछ नहीं कर सका था। एकाएक मुझे लगा था, मैं बिल्कुल अकेला पड़ गया हूँ। मासी माँ गयीं, छोटे भैया गये, अतुल भाई साहब गये···चारों ओर घिरे आते आतंक में जड़ हो जाते समय मैं यह जानते हुए भी कि यह सब गलत हो रहा है, इस गलतपन को महसूस नहीं कर पा रहा था। महसूस भी कर रहा था, तो कुछ कह या कर नहीं पा रहा था।

मँझले भैया ने मेरी गरदन दबोचकर ऐसा धक्का दिया था कि मैं कमरे में औंधा जा गिरा था और जब तक उठा था, कमरे का दरवाज़ा बाहर से बन्द हो गया था। अतुल भाई अब भी बाहर खड़े दरवाज़ा पीट रहे थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरे हाथ भी उठे। चाहता था कि ज़ोर-ज़ोर से दरवाज़ा भड़भड़ाऊँ और चिल्लाऊँ, "दरवाज़ा खोलो···!" लेकिन हाथ उठते-उठते रह गये···

एक आदमी को बाहर वाले दरवाज़े से धक्का दे देनेवाली और दूसरे को अन्दर के दरवाज़े से बन्द कर देनेवाली यह कौन-सी व्यवस्था है, जो इस और उस दरवाज़े के बीच की खाली जगह में मौजूद है ?

ये सब मेरे अपने हैं, और वह जो बाहर खड़ा दरवाज़ा पीट रहा है, वह ? मेरे हाथ दरवाज़ा भड़भड़ाने के लिए नहीं उठे थे। कंठ से कोई आवाज़ नहीं निकली थी। मैं जैसे ढह-टूटकर फर्श पर बैठ गया था और रोने लगा था। थोड़ी देर और बाहर वाले दरवाज़े को पीटने की आवाज़ें आती रही थीं। फिर खामोशी छा गयी थी।

आप कहते हैं, अगर यह सब अजमेर में हुआ होता, तो बात कुछ और होती। शोर सुनकर भीड़ जमा हो जाती। लोग पूछते, "क्या बात है ? क्यों निकाला जा रहा है किसी को ?" और उस भीड़ में सही या गलत, कुछ लोग तो ऐसे निकल ही आते, जो अतुल भाई का पक्ष लेते। लेकिन ये बड़े शहर···ये सबसे पहला काम यह करते हैं कि लोगों से उनकी संवेदना छीन लेते हैं। आसपास के किसी फ्लैट का दरवाज़ा उस रात नहीं खुला था और अतुल भाई बन्द दरवाज़े पर सिर पटकने के बाद थक-टूटकर चले गये थे···

और अगले दिन वे आये थे, तो दीप्ति दी उनके साथ थीं। दीप्ति दी के पिता भी। दरवाज़ा मँझले भैया ने खोला होता, तो शायद वे उन्हें घुसने ही नहीं देते, लेकिन भाभी जब दरवाज़ा खोल चुकीं और वे लोग भीतर आ चुके, तब मँझले भैया ने अन्दर वाले कमरे से शेर की तरह उछल-कर आते हुए पूछा, "अब क्यों आये हो ?"

"अपना सामान लेने आया हूँ।" शांत स्वर में अतुल भाई ने कहा था।

"यहाँ तुम्हारा कोई सामान नहीं है।"

"क्यों···?"

"कोई सामान नहीं है यहाँ !"

"लेकिन मेरे कपड़े, मेरी किताबें, मेरा सन्दूक···"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तुम्हारे कपड़े ? तुम्हारी किताबें ? तुम्हारा सन्दूक ? वाह !" मँझले भैया व्यंग्यपूर्वक मुस्कराये थे और अतुल भाई ने दीपा दी की आँखों में देखा था, जैसे कह रहे हों, "मैंने कहा नहीं था कि वहाँ से कुछ भी मिलने वाला नहीं ?"

दीपा दी का चेहरा पहले ही तमतमा रहा था। खूब गुस्से में बोली थीं, "आप इनकी चीजें इन्हें देंगे या नहीं ?"

मँझले भैया दूसरी तरफ देखने लगे थे। तब बाबा बोले थे, दीपा दी के पिता, "चलो, दीप, ये लोग हृदयहीन हैं।"

और दीपा दी ने बंगाली में ही तेजी से कुछ कहकर पिता को चुप कर दिया था। फिर बोली थीं, "यह मत समझिए कि आप लोग इस तरह मनमानी कर लेंगे। इन्होंने और मासी माँ ने बरसों तक आपके घर नौकरी की है, इनका कुछ अधिकार बनता है इस घर पर !"

"तो ठीक है, पुलिस में जाओ···कोर्ट में जाओ···वहाँ से वसूल करो अपना अधिकार। यहाँ आकर शोर मचाने की क्या ज़रूरत है !"

"हाँ, अब वही करना होगा।" दीपा दी उठ खड़ी हुई थीं, "यह मत समझिये कि कहीं कोई कानून नहीं रह गया है !"

"कानून !" मँझले भैया जोर से हँसे थे और अतुल भाई, दीपा दी और बाबा चले गये थे। मेरी समझ में नहीं आया था कि मैं सारे प्रसंग में एक भी शब्द क्यों नहीं बोल पाया।

मेरी समझ में नहीं आता कि यह कौन-सा संस्कार मेरे भीतर बैठा है, जो आँखों के सामने घटित होते अन्याय पर भी कुछ बोलने नहीं देता ? यह कैसा भय है ! शायद आपकी ही बात सच है कि गुलामी और नपुंसकता हमारे खून में मिल गयी है। पर···मैं वहाँ चुप रह जाने के बावजूद बाद में घर से निकला था और सीधा दीपा दी के घर पहुँचा था···रास्तेभर दाँत पीसता हुआ और मुट्ठियाँ भींचता हुआ !

दीपा दी के एक कमरे वाले घर में सब लोग चिंता में डूबे हुए बैठे मिले थे। मैंने देखा, दीपा दी की आँखें लाल हैं···शायद खूब रो चुकी थीं। मेरे हाथ में सूटकेस देखकर अतुल भाई चौंके थे, "उन्होंने लाने दिया ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हाँ।"

"कुछ बोले नहीं ?"

"बोले थे···कहा था, ले जा रहे हो, तो सुनते जाओ, तुम भी लौटकर मत आना।"

दीपा दी चौंक गयी थीं। उनकी बड़ी-बड़ी आँखों में भय घिर आया था।

मैंने कहा, "लेकिन मैं लौटकर जाऊँगा। देखें, मेरा क्या कर लेते हैं वे !" और फिर तो मैं बोलता ही चला गया था। पता नहीं, क्या बोला था, पर बोलते-बोलते इतना ज़रूर लगा था, जैसे छोटे भैया लौट आये हैं मेरे अंदर···अपने पूरे आक्रोश के साथ···

आप सोच रहे होंगे कि फिर मैं घर लौटकर गया, अन्याय और हृदयहीनता से लड़ा और मैंने विजय पायी। नहीं, ऐसा बिल्कुल नहीं हुआ। मेरा ख्याल था लौटूंगा तो दरवाज़ा नहीं खुलेगा, लेकिन दरवाज़ा खुल गया था। नाराज होने की बजाय सब लोग मुझे देखकर हँसे थे। जीजाजी ने कहा, "दे आये आप उनका अधिकार ?" और फिर सब लोगों ने मिलकर एक ठहाका लगाया।

मैं होश खो बैठा था और ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगा था। सब लोग शांतिपूर्वक सुनते रहे थे और बड़े भैया ने बाद में तालियाँ बजाते हुए कहा था, "अच्छा भाषण कर लेते हो। अपना यह गुण अब तक क्यों छिपा रखा था ?" फिर भाभी से बोले थे, "अरे भाई कुछ खाने-पीने को लाओ। नेताजी बेचारे थक गये हैं !"

और मैंने महसूस किया था कि मैं एकाएक निहत्था हो गया हूँ, जैसे मैं जलती हुई मशाल हाथ में लेकर लड़ने चला था और अचानक पिघली हुई बर्फ के ठंडे दलदल में धँस गया था। और मैंने पहली बार समझा था कि आग बर्फ से लड़ने का हथियार नहीं है। उससे लड़ने, उसे काटने के लिए तो कोई तेज़ इस्पाती नोक वाला हथियार होना चाहिए।

अब आप ऊब रहे हैं न ? सोच रहे हैं, यह कहानी कब खत्म होगी। जानना चाहते हैं कि घर से निकलकर मैं लोकल ट्रेन में बैठा और मुझे अतुल भाई के पास जाना था, सो मैं पहुँचा या नहीं। और पहुँचा तो वे मिले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

या नहीं। और मिले, तो क्या-क्या बातें उनसे हुईं। आप शायद जल्दी-से-जल्दी यह जानना चाहते हैं कि अतुल भाई की जिंदगी कैसे कट रही है और दीप्ति से उनकी शादी हुई या नहीं।

शायद आप यह भी सोच रहे हैं कि मैं बहुत बोलता हूँ और मूल बात से हटकर इधर-उधर की बातों में उलझ जाता हूँ। आपके पास शायद फालतू बातों के लिए वक्त भी नहीं है। इसलिए मैं अब आपको ज्यादा देर नहीं रोकूँगा। अतुल भाई के पास मैं गया, या नहीं गया, इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। शेष कथा संक्षेप में यह है कि अतुल भाई अपनी नौकरी करते हैं और एक गेस्टहाउस में एक बिस्तर भर जगह का अस्सी रुपये किराया देते हैं। रोज़ अखबार पढ़ते हैं और कमरे में रहनेवाले पार्टनरों के साथ बाँगला देश पर बातें-बहसें करते हैं। वहाँ से आये हुए विस्थापितों की दुर्दशा पर उत्तेजित होते हैं और···

और दीप्ति दी···वे अब भी अतुल भाई से मिलती हैं, प्यार करती हैं, दोनों घूमने जाते हैं, एक-दूसरे की आमदनी और खर्चों का हिसाब लगाते हैं और बाद में तय कर पाते हैं कि जब तक दोनों में से कोई एक, या दोनों मिलकर इस लायक न हो जायें कि दो कमरों वाला मकान ले सकें, शादी नहीं करनी चाहिए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मदद

उस समय आसमान का रंग अजीब डरावना-सा हो उठा था। मटमैले-पीले-नारंगी बादलों के ऊपर काली परत छा गयी थी और शाम का सारा मज़ा जाता रहा था। कई दिनों तक लगातार चलने वाली ज़ोरदार बारिश के बाद आज ही तो ऐसा लगा था कि बाहर घूमा जा सकता है, और दो घंटे भी नहीं हुए कि यह···

"लौट चलें ?" मैंने उससे पूछा। यूं ही। हालाँकि लौटना मैं चाहता बिल्कुल नहीं था। वह भी नहीं चाहती, यह मैं महसूस कर चुका था। उसने पहले ही कहा था, "बारिश आ भी जाये तो कोई बात नहीं ! आज सारी व्यवस्था हो जानी चाहिए।" और उसकी व्यवस्था कर पाना इतनी जल्दी, मुझे मुश्किल लग रहा था। घूमना ही हो जायेगा—यह सोचकर मैं उसके साथ निकला था।

"नहीं, अब तो तब तक नहीं लौटना है जब तक···" उसने वाक्य हवा में लटकता अधूरा छोड़ दिया। आँखों में एक निश्चय-सा था। स्पष्ट नहीं, क्योंकि वह इस शहर के बारे में ज्यादा जानती नहीं थी और व्यवस्था हो ही जायेगी, इसकी आशा भी उसे मुझसे ज़्यादा नहीं थी।

बस, वह प्रयत्न कर लेना चाहती थी, जो बारिश के कारण कई दिनों से नहीं हो पा रहा था। कितने दिन हो गये उसे आये, मैं ध्यान नहीं रख पाया था। दिन और तारीख सब जैसे महत्त्वहीन होकर विस्मृत हो गये थे।

"बस तो आती दिखायी नहीं देती, पौन घंटा हो गया।" मैंने अपने अभियान में मिलनेवाली निराशा की भूमिका-सी बाँधते हुए कहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तो ?" उसने पलकें झपकाते हुए इस तरह पूछा जैसे बड़ी उलझन में पड़ गयी हो और मुझ पर अविश्वास भी कर रही हो। उसका चेहरा, जिसे सामान्य स्थिति में सुन्दर कहा जा सकता है, बदरंग हो गया था। होंठों और आँखों पर कुछ सूजन-सी, भारीपन-सा, जैसे बहुत रोयी हो और उदास। फिर भी इस प्रतीक्षा में कि जैसे भी हो उसे उसको त्रासकर स्थिति से उबार लिया जायेगा।

"इंतज़ार करते हैं, और क्या !" मैंने कहा और जेब में हाथ डाला कि सिगरेट निकाल लूँ लेकिन सिगरेट के पैकेट के साथ जेब में पड़ी माचिस से उँगलियाँ छूते ही याद आया कि माचिस गीली है, जलेगी नहीं। पहले भी कई बार कोशिश कर चुका हूँ। हाथ जेब से बाहर निकालकर खाली हथेली को देखने लगा जिस पर रेखायें थीं लेकिन अब उनके अर्थ व्यंग्यपूर्ण हो गये थे। हज़ारों में एक के हाथ में इतनी लम्बी और इतनी स्पष्ट भाग्यरेखा होती है। यह बार-बार दोहराया हुआ अपना वाक्य झलककर मन में गायब हो गया। सामने वाले फुटपाथ पर बने बस स्टैंड की छतरी के नीचे लोग आ गये थे। शायद उन्हें विश्वास हो गया था कि बारिश हुए बिना नहीं रहेगी।

"इधर तो पानी से बचने के लिए भी कुछ नहीं है।" उसने कहा।

"लेकिन उधर तो बिल्कुल उलटी दिशा में बसें जातीं हैं। हम वहाँ खड़े नहीं हो सकते।"

"उधर भी तो बहुत देर से कोई बस नहीं आयी !"

"बारिश है। क्या पता, सड़कों पर पानी हो और बसें खराब हो गयी हों !"

उसने एक लम्बी साँस ली। शायद वह सोच रही थी कि वही अभागी है। उसी के दुर्भाग्य के कारण यह सब हो रहा है। चेहरे पर ऐसा ही कुछ लिख-मिट रहा था। सामने छतरी के नीचे खड़े लोग हम दोनों की ओर घूरने लगे थे।

मैंने उन लोगों की नज़र से अपनी ओर देखा। बस-विराम की लाल तख्ती के नीचे खड़े दो व्यक्ति···एक पुरुष एक स्त्री···पुरुष की हालत खस्ता है, मुश्किल से सौ-सवा सौ पाता होगा, कपड़े भी ढंग के नहीं पहन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सकता, सूती···ऐसी बारिश के मौसम में भीग जायें तो सूखें ही नहीं··· और पुरानी काट के पतलून की मोरियाँ कितनी चौड़ी हैं···चेहरे से परेशान लगता है, जैसे इसे भूख या प्यास लगी हो, या यह बहुत देर से पेशाब रोके खड़ा हो···स्त्री इसकी पत्नी होगी ? उम्र में बड़ी दिखायी देती है। पत्नी नहीं हो सकती, बड़ी बहन होगी या इसके बड़े भाई की पत्नी···उसके पास कपड़े तो अच्छे हैं, सुन्दर भी है···लेकिन घबरायी हुई है, परेशान है, शायद इन लोगों के साथ कोई दुर्घटना हो गयी है।

सामने वाले लोगों की ओर से सोचते हुए मैंने महसूस किया कि वे हमारी तरफ बड़ी अर्थपूर्ण दृष्टि से देख रहे हैं, जैसे कुछ ताड़ गये हों। लगा, यों चुपचाप खड़े रहना ठीक नहीं। संदेह उत्पन्न हो सकता है। तब परेशानी होगी। इसलिए मैंने बात करना शुरू किया :

"तुमसे कहा क्या था ?"

"यही कि मैं सत्यपाल के घर मिलूँगा। पता भी दिया था।"

"सत्यपाल घर कबसे नहीं गया ?"

"आठ-दस महीने हो गये शायद। सुना है, उसे जेल में बंद कर दिया गया था। छूट तो गया लेकिन उसके लिए खतरा अब भी है। ठाकुर कह रहे थे, वे उसे जिन्दा नहीं रहने देंगे।"

"तब ऐसे आदमी के पास जो खुद खतरे में हो, उन्हें आने की ज़रूरत क्या थी ?"

"यह तो वे ही जानें—मैंने तो मना किया था। उन्होंने ही कहा था कि···"

"छोड़ो, खैर, देखा जायेगा।" मैंने उसकी बात काट दी कि कहीं वह पूरा किस्सा फिर से न सुनाने लगे। उस किस्से को वह रुक-रुककर पूरे विवरणों के साथ सुनाती है। मैं जानता हूँ कि क्यों। वह समझती है कि तफसील से सब कुछ अच्छी तरह समझ लेने पर ही मैं उसकी सहायता कर पाऊँगा। लेकिन मुझे उसके विस्तृत विवरणों से ऊब होती है। एक तरह का डर भी लगता है···

बात यह है कि हम लोग जिस शहर के हैं, वहाँ की धरती में फूट के बीज कुछ ज्यादा ही हैं। हमारे शहर का नाम अक्सर अखबारों में नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छपता, और छपता है तो चोरी-डकैती, हत्या-फौजदारी के प्रसंगों में। शहर में ज़्यादातर लोग आसपास के गाँवों से आकर बसे हैं और वह छोटा शहर है, इसलिए लोग गाँव से नाता नहीं तोड़ पाये हैं। उनकी ज़मीनें वहाँ हैं, पुरखों के बनाये हुए मकान वहाँ हैं। आना-जाना लगा रहता है। अब हुआ यह है कि गाँव शहरी रंग में रँगता जा रहा है और शहर गँवार हो गया है। स्टेशन-अस्पताल, स्कूल-कॉलेज और चुंगी-कचहरी, मिल-कारखानों की बदौलत लोग ज्यादा उद्दंड हो गये हैं। और हमारे गाँव के ठाकुर, जो शहर की काली कोठी में रहते हैं, इस चीज़ को बर्दाश्त नहीं कर पाते। वे एम० एल० ए० हैं और उनका बड़ा लड़का क्षेत्रपाल सिंह शहर का थानेदार। जो करें सो थोड़ा। साफ कहते हैं, "बाहुबल हो और बुद्धि साथ दे तो ज़मींदारी कोई नहीं छीन सकता। लगा ले सरकार ज़ोर, हम तो राज करते आये हैं और करते रहेंगे।"

सत्यपाल ठाकुर का छोटा लड़का है, आदि विद्रोही। उसका ख्याल है कि ठाकुर को अब यह ज़ोर-ज़ुल्म बन्द कर देना चाहिए। इस बात पर सत्यपाल की अपने पिता और बड़ भाई से ठनी हुई है। कैसे हुआ यह सब, यह तो पता नहीं, लेकिन सुना है कि सत्यपाल को यह विद्रोह ठाकुर ने खुद सिखाया है। लोग कहते हैं, यह भी ठाकुर की एक चाल है। वे खुद और उनका बड़ा लड़का कानून से चलने वाले को सँभालते हैं और यह छोटा लड़का खुद ग़ैरकानूनी होकर ठाकुर का कानून नहीं मानने वालों को थामता है। सच्चाई क्या है, यह तो पता नहीं, लेकिन इतना मालूम है कि सत्यपाल घर से भागकर दिल्ली आ गया है और दो-तीन बरसों से यहीं है। क्या करता है, किसी को नहीं मालूम, लेकिन रहता बड़े ठाठ से है। डिफेंस कालोनी में बड़ा बढ़िया मकान ले रखा है, जिसमें एक नौकर के साथ अकेला रहता है। यह भी सुना है कि अपने पिता के विरोधियों को वह अपने यहाँ शरण देता है और उनके लिए लड़ता है। इसीलिए जब हमारे शहर में किसी का ठाकुर से बिगाड़ हो जाता है तो वह सीधा दिल्ली भागता आता है—सत्यपाल के पास।

"मान लो, सत्यपाल आज भी नहीं मिला तो ?" मैंने आशंकित होकर पूछा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तो उसके नौकर से कहकर मुझे वहीं टिका देना, आखिर वे वहीं तो आयेंगे !" वह बोली।

"खाली घर में अकेले नौकर के साथ···" मैं हिचकिचाया।

"उसकी चिन्ता मत करो, नौकर की इतनी हिम्मत नहीं हो सकती।" उसके स्वर में आशंका को दबाती हुई-सी आत्मरक्षा के विश्वास की खनक थी। संकोच हुआ, लेकिन बुरा-सा लगा। उसके इस निर्णय से जैसे सत्य-पाल का नौकर ऊँचा उठकर मेरे करीब आ गया। मेरे अभिमान को चोट-सी लगी ! यह भी लगा कि इतने दिन इस औरत को मैंने अपने घर में बेकार ही ठहराया। नौकर के पास ही रहना था तो शुरू से रहती। लेकिन चुप रहा। वही बोली, "तुम्हें मेरी वजह से इतनी तकलीफ़ हुई···"

वाक्य फिर उसने अधूरा छोड़ दिया। यह उसकी आदत है। जिससे बात कर रही होती है, उसका ध्यान बराबर अपनी ओर लगाये रखने का अनायास लगता हुआ सायास प्रयत्न। मुझे यह बुरा नहीं लगता। अधूरे वाक्य को स्वयं समझने की कोशिश में कम से कम इतना तो है कि अपना ध्यान बना रहता है—अपने महत्त्व का।

"तकलीफ़···तुम्हें जितनी हुई है, उतनी तो···" मैंने भी उसकी नकल-सी उतारते हुए कहा, लेकिन कहा नहीं गया। पूरी तरह सहज होकर नहीं कहा गया। डर लगा कि कहीं यह बस-विराम पर खड़े-खड़े ही रोना न शुरू कर दे। लगा, मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिए था। लेकिन वह कुछ बोली नहीं, रोयी भी नहीं। बस, एक बार बड़ी-बड़ी आँखों से मेरी ओर देखा और सामने छतरी के नीचे खड़े हुए लोगों की ओर देखने लगी।

उसने जो आपबीती मुझे सुनायी थी, वह मेरी आँखों में कुछ बीभत्स चित्र बनाकर उलट-पुलट हो गयी। क्षेत्रपाल सिंह थानेदार के साथ उसके पति समर बहादुर की चलती है, यह तो मुझे मालूम था, लेकिन मामला इतना बढ़ जायेगा, मुझे कल्पना भी नहीं थी। समर बहादुर और मैं एक ही शहर के एक ही मुहल्ले में पलकर बड़े हुए हैं, एक ही साथ पढ़े हैं, इस-लिए वह इतिहास मुझे मालूम है। क्षेत्रपाल समर से दोस्ती मानता था और जिन दिनों वह थानेदार नहीं था, समर के साथ घूमता-फिरता था। मैं उनके साथ नहीं होता था, क्योंकि मुझे शराब से और सिनेमा से और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लड़कियों से वास्ता रखने की मनाही थी। वे रख सकते थे, क्योंकि वे बड़े आदमी थे। मैं जब दिल्ली आया तब समर बहादुर शहर के एक स्कूल में अध्यापक हो गये थे। बाद में सुना कि क्षेत्रपाल सिंह थानेदार होकर अपने ही शहर में आ गये हैं। एक बार होली पर गया तो पाया कि समर की शादी हो चुकी है और क्षेत्रपाल से दुश्मनी। क्यों, यह ठीक-ठीक मालूम नहीं हो सका। शायद चुनाव के दिनों दोनों में किसी बात पर मतभेद हो गया था···वही क्षेत्रपाल एक दिन अपने दोस्त समर बहादुर को सरे बाज़ार छोकरों से पिटवा देगा और दोस्त की पत्नी को थाने में बुलाकर एक चमार से बलात्कार करायेगा। और फिर भी ये दोनों ज़िन्दा रह जायेंगे यह मैं सोच भी नहीं सकता था। अभी तक मुझे विश्वास ही नहीं होता···

"बस आ रही है।" उसने कहा और मैंने देखा कि वही बस है जिसकी हमें प्रतीक्षा थी। उसके रुकते ही मैंने पहले उसे चढ़ाया और फिर स्वयं चढ़ गया। भीड़ थी, लेकिन हम खड़े हो सकते थे। डंडा पकड़कर खड़े होते ही बस ने हमें झटका दिया और चल पड़ी। मैंने इधर-उधर देखा, कोई सीट खाली हो तो उसे बैठा दूँ लेकिन सीट खाली नहीं थी। बस का लौह-चादरी फर्श गीला और गंदा हो रहा था और भीगे कपड़ों और बदबू-दार साँसों की मिली-जुली गंध अंदर घुट रही थी। खिड़कियाँ सब बंद। शायद उधर बारिश हो रही थी जिधर से बस आयी थी।

थोड़ी देर पहले जो कुछ सोच रहा था, उसे भूलने में इस माहौल ने मदद नहीं की। उलटे ऐसे लगा जैसे थाने के अंदर किसी कोठरी में वह सब मेरे सामने हो रहा है···कैसे ? कैसे हुआ होगा वह सब? ···यह समर की रिपोर्ट लेकर पहुँची होगी और इसे अंदर बुला लिया होगा···दरवाज़े बंद करा दिये होंगे···कपड़े उतारे या फाड़े गये होंगे···हाथ बाँधे या पकड़े गये होंगे···चमार से कहा गया होगा···कैसे ? कैसे हुआ होगा वह सब ? और फिर सुना है, उस चमार को मार दिया गया। क्यों ? उसने तो आदेश का पालन ही किया था न ? फिर इसे नहीं मारा, समर को नहीं मारा। क्यों नहीं मारा ? ये लोग स्वयं भी नहीं मरे ? क्यों नहीं मरे ?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

समर सत्यपाल से अब क्या लेने आया है ? और यह समर और सत्यपाल

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से क्या लेने आयी है ?

"आगे बढ़ो भाई ! आगे बढ़ते रहो !" कंडक्टर बार-बार कहता है और लोग इंच-इंच खिसककर फिर जहाँ के तहाँ खड़े हो जाते हैं।

दाहिनी ओर एक सीट पर बैठे हुए दो आदमी बहस में उलझे हुए हैं। एक मोटा कह रहा है, "ख़ून बहाये बग़ैर काम नहीं चलेगा जनाब ! इंसानियत और मर्दानगी ख़ून देखकर भड़कती है। जिन मुल्क़ों में जंग होती है, मर्द मुल्क़ होते हैं। हिंदुस्तान ने सदियों से कोई बड़ी जंग नहीं देखी इसलिए नामर्द हो रहा है।"

"ऐसे ही मर्द थे तो चीन या पाकिस्तान से लड़ने जाते !" दूसरा दुबला कहता है।

"अरे सब बातों के शेर हैं भाई मेरे !" पास खड़ा हुआ एक बाबूनुमा कहता है।

"इनसे तो अच्छे नक्सलवादी हैं, कुछ करते तो हैं बेचारे !" एक और बाबूनुमा।

"अजी छोड़िए, सबको अपनी-अपनी पड़ी है। वे ही कौन-से दूध के धुले हैं ! चीन का पैसा खाते हैं, उसी के गुण गाते हैं।"

"फिर भी साहब नक्सलवादी अच्छे हैं, कम से कम कुछ कर गुज़रने का जोश तो है उनमें !"

"तो आर० ऐस० ऐस० वाले ही क्या बुरे हैं ? जोश उनमें नहीं है ?"

"वे अमरीका के पिट्ठू हैं। पूँजीपतियों के पाले हुए गुंडे।"

तड़ाक् ! कहने वाले के गाल पर एक चाँटा पड़ता है और पता नहीं कब गुत्थमगुत्था शुरू हो जाती है। शोर अचानक बढ़ जाता है। मार-पीट होने लगती है। मैं अपने साथ की स्त्री को धकेलकर पीछे, बस के दरवाज़े की ओर खिसकने लगता हूँ। सब चीखने लगते हैं, बच्चे ज़ोर-ज़ोर से। कंडक्टर भीड़ को चीरता हुआ आता है लेकिन उसे धकेल दिया जाता है। कंडक्टर सीटी बजाता है। ड्राइवर मुड़कर देखता है और त्यौरियाँ चढ़ाकर फिर पलट जाता है। झगड़े के कारण वह बस नहीं रोक सकता, रोकेगा तो थाने के पास। थाना दूर है और झगड़े के शोर से भरी बस राजधानी की खुली-चौड़ी सड़क पर दौड़ रही है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थोड़ी देर बाद किसी औरत के चीखने की आवाज़ आती है। किसी ने बस के भीतर के अँधेरे और शोर का फायदा उठाकर उसकी छाती पर हाथ डाल दिया था। वह चीख रही है और उधर मारामारी चल रही है।

अगले बस-विराम पर बस रुकती है। मैं समर की पत्नी के साथ उतर पड़ता हूँ। बाद में कुछ लोग और उतारे जाते हैं। एक लड़के की नाक से खून निकल-निकल कर उसकी सफेद कमीज़ पर गिर रहा है। मैं खून देखता हूँ और न मुझमें इंसानियत भड़कती है, न मर्दानगी। मुझे सिर्फ सिगरेट की तलब लगती है और मैं पाता हूँ कि मेरी माचिस अभी तक गीली है। लड़ने वालों को उतारकर बस फिर चलने लगती है तो हम फिर चढ़ लेते हैं और मैं पाता हूँ कि बीती घटना की प्रतिक्रिया में सिर्फ कुछ शोर बच गया है, जिसे अपने में भरे हुए, बस संसद्-भवन के पास से दौड़ी जा रही है।

इच्छा होती है, कुछ करूँ, लेकिन क्या, यह समझ में नहीं आता। अक्सर ऐसा ही होता है। उस दिन यह आयी, तब भी ऐसा ही हुआ था···

रात हो गयी थी और मैं सोने से पहले का वक्त काटने के लिए कुछ पढ़ रहा था कि इसने दस्तक दी। अकेली थी। साथ में एक अटैची भर सामान। आते ही बोली, "रातभर रहने दो, सुबह चली जाऊँगी।"

अजीब लगा। बुला-बिठाकर बिस्तार से पूछा कि क्या हुआ है और इसने रो-रोकर सारी कहानी सुनायी थी। और बताया था कि वह सत्य-पाल के घर जाकर लौटी है, वहाँ कोई नहीं है। सारा किस्सा सुनकर मेरी इच्छा हुई थी, कुछ करूँ, लेकिन क्या, यह समझ में नहीं आया था।

उस दिन से प्रायः रोज़ ही बारिश में भीगता हुआ मैं डिफेंस कालोनी जाता रहा हूँ—इसे घर छोड़कर—और वापस लौटकर बताता रहा हूँ कि वहाँ नौकर के सिवा कोई नहीं है। और उसी दिन से अपने अन्दर एक लड़ाई-सी पा रहा हूँ उसे लेकर। उसके अपमान की कहानी मुझमें दो विपरीत प्रतिक्रियाएँ पैदा करती रही है—उत्कट सहानुभूति की और तीखी नफरत की। क्षेत्रपाल को गोली से उड़ा देने का ख्याल एक से अधिक बार मन में आया है, लेकिन इस औरत और इसके पति पर क्रोध उससे भी अधिक बार आया है। मैंने हमेशा महसूस किया है कि इन लोगों का इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तरह सत्यपाल की शरण में भागना क्षेत्रपाल की उस तृप्ति से भी क्रूर है, जो उसे अपने सामने चमार से इस पर बलात्कार कराते हुए मिली होगी—और फिर चमार को मार डालने में ! ये लोग भागे क्यों ? लड़ नहीं सकते थे ? आत्महत्या नहीं कर सकते थे ?

और उस दिन से समर और सत्यपाल की खोज करते हुए बराबर मुझे एक बात बड़े तीखेपन से महसूस होती रही है कि मैं खामख्वाह इस चक्कर में पड़ गया हूँ, जब कि इस सबसे मुझे कुछ लेना-देना नहीं है। अकेला रहता हूँ, वैसे तो बड़ा शहर है, कोई कुछ नहीं कहेगा, लेकिन समर ने ही कुछ कह दिया तो ? इतने दिनों से एक अकेले आदमी के पास एक ऐसी औरत जो···

न जाने क्यों, कई बार मैंने स्वयं को उस चमार की हैसियत में महसूस किया है, जिसे मरने का भय देकर क्षेत्रपाल ने बलात्कार के लिए राजी किया होगा। और फिर उस हैसियत में मैंने स्वयं को बेवजह मरते हुए पाया है।

यह मामला इतना जटिल है कि मैं बता नहीं सकता। ठीक से कुछ सोच नहीं सकता। पुलिस और प्रजातंत्र के बारे में सोच भी लूँ तो क्या कर सकता हूँ ? अत्याचार और अपमान के कारणों का पता लगा भी लूँ तो कर क्या सकता हूँ ? यह सोचती है कि सत्यपाल कुछ कर सकता है, लेकिन मुझे तो सत्यपाल पर भी भरोसा नहीं। उसके नौकर को देखकर मुझे खूँखार जानवर को देखने से हुई दहशत होती है। और यह उसी के पास जाकर रहने और प्रतीक्षा करने को तैयार है। कहती है, "मैंने तो उसे देखा है, मुझे तो वह नौकर भला आदमी लगता है।"

"तो ठीक है, उसी के पास चलो।" मैं उसे यह कहकर ले आया हूँ।

बस से उतरकर हम सत्यपाल के घर की ओर बढ़ते हैं लेकिन ठिठक जाते हैं। वहाँ पुलिस का घेरा है और दूर खड़ी भीड़ तमाशा देख रही है। नौकर के हाथों में हथकड़ियाँ हैं और सत्यपाल का कहीं पता नहीं है। समर बहादुर भी नहीं है।

मैं उधर बढ़ने को होता हूँ, लेकिन वह रोक देती है, "लौट चलो, उधर गये तो बेकार और फँसेंगे।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समझता हुआ-सा मैं सड़क पार करके उसके साथ दूसरे बस-विराम पर आ खड़ा होता हूँ। जिसकी आशंका थी, वह बारिश, थोड़ी ही देर बाद ज़ोर से होने लगती है। यहाँ छतरी नहीं है। हम भीग रहे हैं। मेरा मन सिगरेट पीने को है लेकिन जेब में पड़ी माचिस अब तो बिल्कुल ही भीग गयी है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दूसरी पवित्रा

बच्चू बाबू बहुत नाराज़ हैं। उनका कहना है कि हम सब नमकहराम हो गये हैं। कि वह न होते तो बड़े दादा हम लोगों को घोट-पीसकर खा गये होते और कि अब हम लोग उसी थाली में छेद कर रहे हैं, जिसमें खाया करते हैं। ज़ाहिर है कि थाली बच्चू बाबू अपनी मानते हैं और बताते हैं। खैर, थाली किसकी है, यह फैसला तो बाद में होगा, पहले तो इस बात का फैसला होना है कि दोस्त कौन है और दुश्मन कौन है।

बच्चू बाबू और बड़े दादा में पुरानी दुश्मनी है; पुश्तैनी ! पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती आ रही है और इसका अन्त कहाँ होगा, कोई नहीं जानता। हम लोग तो यही सुनते आये हैं कि बड़े दादा के पुरखे इस गाँव के राजा थे और बच्चू बाबू के पुरखों ने उन्हें किसी लड़ाई में हराकर इस गाँव को अपनी रियासत बना लिया था। बात पुरानी है, इसलिए उस इतिहास को अब कोई याद नहीं करता। राजे-नवाब कभी के खत्म हो गये। अंग्रेज़ बहादुर भी चले गये। लेकिन इस गाँव में अब भी दो हुकूमतें चलती हैं। एक बच्चू बाबू की और दूसरी बड़े दादा की ! पूरा गाँव दो दलों में बँटा हुआ है और ऐसा लगता है, जैसे ये दो दल आदिकाल से इस गाँव में रहते और आपस में लड़ते आये हैं।

अभी पिछले साल तक सब ऐसा ही चल रहा था ! हम लोग बच्चू बाबू की पार्टी में थे, इसलिए जब भी झगड़ा होता, लाठियाँ ले-लेकर बड़े दादा की पार्टी वालों से लड़ने जाया करते थे। खूब सिर फूटते थे। साल में चार-छः मौतें इस तरह हो जायें तो हमें अजीब नहीं लगता। लड़ाई हमारे खून में समा गयी है। और जब से गाँव में [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मरना-मारना और भी सहज हो गया है। हाँ, बंदूकों के आने से हम लोग खुश नहीं हैं। न इस पार्टी के, न उस पार्टी के। छिद्दा पहलवान ठीक कहते हैं—अब मरने-मारने में वह मज़ा नहीं रहा। पहले तो किसी बात पर तू-तू मैं-मैं हुई कि किसी भी पार्टी का बुजुर्ग कह उठता था—"दै सारे में लट्ठ ! तेरौ का बाप लगतुए ?" और एक लाठी उठी नहीं कि सारे गाँव की लाठियाँ निकल आती थीं। और अब ? कुछ पता ही नहीं चलता कि अब अँधेरे-उजाले चलते कौन किसी इक्के-दुक्के को गोली मार देगा !

मरने वाले मर जाते हैं, मारने वाले छिप जाते हैं। और मुसीबत आती है पूरे गाँव पर। थाने से पुलिस आती है, तहकीकात करती है, घर-घर की तलाशी लेती है। बहन-बेटियों की इज्जत हमेशा खतरे में। ऊपर से पुलिस को खिलाओ-पिलाओ और फिर मुकदमेबाजी में रुपया फूँको ! इतने पर भी बस हो जाये तो ठीक, लेकिन सबसे ऊपर पंचायत। पंचायत ने कानून बना दिया है कि जिस घर का कमाऊ आदमी मारा जाये, उस घर के लोगों की ज़िम्मेदारी सब अपने ऊपर लें। सब चन्दा दें ! अब अपनी निबड़ती नहीं, पर चन्दा ज़रूर देना पड़ेगा। कोई कुछ कह दे···जैसे नत्थी-लाल ने कह दिया था···तो पंच कहते हैं—पंचायत भी तुम्हारी, पार्टी भी तुम्हारी, अपनी पार्टी के लोगों की फिक्र तुम नहीं करोगे तो कौन करेगा ? परली पार्टी को देखो, दद्दू का इशारा भर हो जाये, नाज-पानी और पैसे टके की बात क्या, लोग जान भी निकालकर रख दें !

खैर, यह भी ठीक था, लेकिन चन्दे का चक्कर जो चला तो ऐसा चला कि एक तो हगी-मूती हर बात पर चन्दा होने लगा और दूसरे दोनों पार्टियों में चन्दे की होड़ होने लगी। बड़े दादा ने अपनी पंचायत के लिए बैठका बनवाया तो बच्चू बाबू की मूँछ नीची होने लगी। अपनी पंचायत के लिए भी नया बैठका बनना चाहिए। दो भाई चन्दा ! बड़े दादा की पंचायत ने एमेले साहब को बुलाया तो बच्चू बाबू की पंचायत भी एमेले साहब को बुलायेगी। अपनी पंचायत की नाक नीची न हो जाये, इसलिए बड़े दादा की दावत से बड़ी दावत होगी। करो भाई चन्दा ! देखते-देखते सरकार के मुँह भी खून लग गया। कोई भी बीडीओ-फीडीओ चला आता है और चन्दा माँगने लगता है। पूरब में बाढ़ आती है, पश्चिम में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सूखा पड़ा है, चन्दा दो। और सामरथ से देते हैं तो पख निकाल देता है कि बड़े दादा ने तो इतना-इतना दिया, आप लोग उतना भी नहीं देंगे ? और बच्चू बाबू की मूँछ फिर नीची होने लगती है। तब और ज्यादा दो। बच्चू बाबू तो अपनी लाज बचाते हैं, मारे जाते हैं हम लोग।

अब यही लो, बँगला देश के लिए चन्दा देने पर चख-चख मची हुई है। सुनते हैं, बड़े दादा ने अपनी पार्टी से पूरा एक हज़ार एक रुपया दिया है। हम लोगों की तरफ से चार सौ भी पूरे नहीं हुए। होते भी कहाँ से ! बड़े दादा की पार्टी में तो पैसे वाले लोग हैं, दे सकते हैं, हम कहाँ से दें ? उन लोगों के पास ज़मीनें हैं, दुकानें हैं, उनके लड़के शहर में अच्छी-अच्छी नौकरियों पर लगे हुए हैं। हमारी पार्टी में क्या धरा है ! चार-छः लोगों के पास ही कायदे की ज़मीनें हैं। बाकी तो सब मजूरी करके खाते हैं—चाहे बच्चू बाबू के फार्म पर जायें चाहे शहर में जाकर। ले-देकर दो लड़के ढंग से पढ़ पाये हैं—नेकराम का बुद्धा और बाँके पंडित का केशो। लेकिन वे भी ससुरे मामूली मास्टरी ही कर रहे हैं···

और बच्चू बाबू हमसे नाखुश हैं। केशो ने उन्हें और भड़का दिया है।

हुआ यह कि कल शाम पंचायत फिर बैठी। बच्चू बाबू ने भाषण दिया। बोले कि हिन्दुस्तान की आज़ादी खतरे में है। पाकिस्तान से लड़ाई चल रही है, मुसल्ले हिन्दुओं को मार रहे हैं और बंगला देश में बंगाली औरतों की इज्ज़त लूट रहे हैं। ऐसे में लड़ाई का खर्चा देना और बंगाल से भागकर आये शरणार्थियों की मदद करना हमारा फर्ज़ बनता है। इसलिए दिल खोलकर चन्दा दो।

बुद्धा और केशो भी वहीं बैठे थे। पहले तो सुनते रहे, सुनते रहे, लेकिन बच्चू बाबू ने जब यह कहा कि जो कंजूसी करे सो गद्दार, तो केशो को गुस्सा आ गया। उठकर खड़ा हो गया और बोला, "गद्दारी की बात मत करो बच्चू बाबू। जिसकी जितनी समवाई थी, उसने उतना दिया ही है। ज़्यादा दे नहीं सकते, यह उनकी मजबूरी है, मजबूरी को गद्दारी कैसे कहते हो तुम !"

बुद्धा भी जोश में आ गया, "हाँ, बच्चू बाबू, यह तो गलत बात है तुम्हारी। इसमें गद्दारी की क्या बात है !"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हम लोगों की हिम्मत वैसे बच्चू बाबू के सामने बोलने की होती नहीं, लेकिन दोनों पढ़े-लिखे लड़कों को बोलते देख हमने भी कहा कि बच्चू बाबू को ऐसा नहीं कहना चाहिए था। पूरी पंचायत को अपने खिलाफ होते देखा तो बच्चू बाबू भी नरम पड़ गये, लेकिन फिर वही मुर्गे की एक टाँग ! कहने लगे, "चलो गद्दारी मत कहो, पर अपनी पार्टी की इज़्ज़त का सवाल तो है। बड़े दादा ने एक हज़ार एक दिया है।"

"तो तुम अपनी गाँठ से दो हज़ार दे दो।" बुद्धा ने कह दिया। अब तो क्या पूछो, बच्चू बाबू के मिर्चें लग गयीं। अंट-संट बकने लगे, "अच्छा ! हमारी बिल्ली हमसे ही म्याऊँ ! कल तक तुम हमारे वज़ीफे से पढ़ते थे। आज मास्टर हो गये तो हमें जवाब देने लगे ! तुम्हारी सात पुश्तें हमारे खेतों पर काम करके पलती आयी हैं। अपनी औकात तो देखो। तुम्हारा बाप हमारे यहाँ पानी भरता मर गया। तुम्हारी माँ आज भी हमारे घर से टुकड़े ले जाती है···और पंडित तुम ! तुम भी हमें आँखें दिखा रहे हो ! भिखमंगे भी आसमान पर चढ़कर बोलने लगे !"

उनका इतना कहना था कि केशो गला फाड़कर चिल्लाया, "खामो··· श !" सुनकर सब सन्न हो गये। बच्चू बाबू का मुँह खुला रह गया। बोल नहीं निकला मुँह से। टुकुर-टुकुर ताकते रहे। अब देखो मज़ा, एक तरफ बच्चू बाबू खड़े काँप रहे हैं और दूसरी तरफ केशो। बीच में हम लोग बैठे हैं एकदम सन्नाटे में। आखिर केशो ने कहा, "बहुत हो गया बच्चू बाबू ! आप अपने घर जाइये, जितना चन्दा आपको अकेले देना हो, दे आइये ! हमें जितना देना था, दे दिया। जाइये आप !"

जाने क्या हो गया बच्चू बाबू को। आज्ञाकारी लड़के की तरह तख्त से नीचे उतरे, जूते पहने और चल दिये। लेकिन जाते-जाते फिर पलटे और दहाड़कर बोले, "देख लेंगे, हम एक-एक को देख लेंगे। एक-एक को गोली से न उड़वा दिया तो नाम बच्चू नहीं।" यह कहते-कहते वह तेज़ी से मुड़कर जाने लगे तो एक तरफ से ज़मीन को छूती हुई चलने वाली उनकी धोती जूते के नीचे आ गयी, झटके से उन्होंने ऊपर खींची तो चर्र हो गयी। हमें तो कुछ होश ही नहीं था, पर लौंडे हँस पड़े।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

बच्चू बाबू चले गये तो पंचायत उठने लगी। कुछ लोग उन्हें लौटा लाने

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के लिए गये तो लौटे ही नहीं। लेकिन जो रह गये थे, उनमें बच्चू बाबू के खानदान के भी लोग थे। उनका छोटा भाई शेरा भी। वैसे शेरा नशे में था और बैठक में दीवार का सहारा लिये ऊँघ रहा था। बच्चू बाबू कभी-कभी बिगड़कर ज़ोरों से चीखने लगते थे। यह कोई नयी बात नहीं थी, लेकिन वह इस तरह अपमानित होकर जायेंगे, ऐसी उम्मीद शेरा को नहीं थी। पूरी बात समझने में उसे देर तो लगी, लेकिन समझ में आते ही वह उठा और वहीं से छलाँग लगाकर बुद्धा पर टूट पड़ा। बुद्धा वैसे ही मरियल है, अचानक हमला हुआ तो एकदम चित जा पड़ा। शेरा उसकी छाती पर चढ़ बैठा और दे घूँसा, दे थप्पड़ !

तब हम लोगों को होश आया। उठकर दोनों को छुड़ाया। इतने में देखा कि कुछ लोग केशो को एक कोने में घेरकर मार रहे हैं। उसे भी जैसे-तैसे छुड़ाया। छुड़ा तो लिया, लेकिन देखते ही देखते अपनी पार्टी में भी दो पार्टियाँ बन गयीं। एक बच्चू बाबू की, और दूसरी हम लोगों की। लेकिन जोड़ बराबर का नहीं था। खाते-पीते घरों के मलंगई करने वाले लोग बच्चू बाबू की तरफ हो गये, गरीब हमारी तरफ रहे। पहलवान पहलवान उधर मरगिल्ले-मरगिल्ले इधर। लेकिन ऐसे में यह सब कौन देखता है। जमकर मार-पीट हो गयी। चोटें तो इधर भी आयीं, पर शेरा और कल्ले की नाक से खून हमने भी निकाल दिया। फिर भी जीत बच्चू बाबू के लोगों की ही रही। उन्होंने हमें बैठक से निकाल दिया और छिद्दा पहलवान ने ऐलान कर दिया कि बागियों को पंचायत के बैठके में नहीं घुसने दिया जायेगा।

बागी ! और गद्दार ! और हम लोग ! जो हमेशा बच्चू बाबू के लिए खून और पसीना बहाते रहे हैं ! सच पूछो, आग-सी लग गयी।

शायद उस आग के उजाले में ही यह बात साफ हुई कि बच्चू बाबू अब तक कितना अत्याचार करते रहे हैं—कितनी बेईमानी ! कितनी बड़ी धोखाधड़ी !

चन्दा दिया हमने और पंचायती बैठके में दरबार लगता है बच्चू बाबू का। पेट काटकर पैसा हम देते हैं और शान बढ़ती है बच्चू बाबू की।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS,MoE 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एमेले और अफसर माल खाते हैं हमारा, और दोस्ती करते हैं बच्चू बाबू से। तभी न बच्चू बाबू ने सरकारी ट्यूबवैल अपने फार्म पर लगवा लिया और ट्यूबवैल से बिजली लेकर कारखाना खड़ा कर लिया। धान कूटने और रुई धुनने की मशीनें चल रही हैं, ईख पेरने का कोल्हू चल रहा है, आटे की चक्की चल रही है। तिल-सरसों पेरने की मशीन आने वाली है। ट्रैक्टर भी तो बीडीओ को माल खिला-खिलाकर लिया है। चन्दे का फायदा किसे हुआ ?

उस आग के उजाले में एक चीज़ और चुभी आँखों में। बड़े दादा की पार्टी से लड़ने के लिए बच्चू बाबू जो लठैत पालते हैं, उनका खर्च भी हमारे ही सिर पड़ता है। पहले के ज़मींदार होते थे, अपने लठैत पालते थे, अपना खर्चा करते थे। अब के ज़मींदार—चाहे बच्चू बाबू हों, चाहे बड़े दादा—घुड़की देते हैं कि लठैत हम अपने लिए नहीं, तुम लोगों की जान बचाने के लिए पालते हैं। हमारा क्या है, हमारी जान पर बनी तो शहर में कोठी बनवाकर रहने लगेंगे। तुम्हीं लोग मरोगे, अगर अपनी हिफाज़त करना चाहते हो तो चन्दा दो। हर घर से दो रुपया महीना। और उस पैसे का होता क्या है ? दारू खिंचती है और बच्चू बाबू के यहाँ बकरा कटता है। पूरे गोल में खुशबू फैलती है। पर खाते-पीते हैं बच्चू बाबू के घरवाले और उनके पालतू लठैत। चाहे हमारे बच्चे भूखे सो जायें। और लठैतों का काम क्या ? रोज़ दंड पेलना और मस्ती मारना—साल-छः महीने में कहीं एक बार बनैठी घुमा देना।

और बन्दूक···बच्चू बाबू के पास अपनी खानदानी इकनलिया थी, पर नहीं साहब, अपनी पार्टी की हिफाज़त के लिए एक दुनाली बन्दूक चाहिए। फिर करो चन्दा। और अब वह बन्दूक किसके पास है ? बच्चू बाबू अब अगर उससे हम बागियों और गद्दारों को ही भून डालें तो ?

ये सब बातें उसी रात केशो और बुद्धा ने कही थीं। बैठक से हम लोगों को भगा दिया गया तो हम लोगों ने बुद्धा के घर बैठकर अपनी अलग पंचायत की थी। सबसे पहले यही बात उठी थी कि बच्चू बाबू से बैर बाँधने का नतीजा क्या होगा ? और बन्दूक वाली बात सोचकर हम लोग काँप गये थे। हाथ-पाँव से लड़ने की बात हो तो चलो, तुम दो मारोगे तो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by JKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हम एक तो मारेंगे ही। पर उस काले मुँह वाली से कौन लड़े ? कैसे लड़े ? सही है कि बन्दूक हमारे चन्दे से आयी है, लेकिन है तो बच्चू बाबू के हाथ में। उनसे छीनी कैसे जा सकती है ? गोली नहीं मार देंगे ?

बुजुर्गों ने कहा, "आपस में लड़ने से कोई फायदा नहीं। वैसे भी बच्चू बाबू से लड़कर तुम लोग जीत नहीं सकते। तुमको मारने के लिए उसके पास फकत बन्दूक ही नहीं है, एक बड़ी तोप भी है, और वह तोप यह है कि तुम में से तीन-चार को छोड़कर सब लोग बच्चू बाबू के आसरे पर पल रहे हैं। कोई उनके फार्म में काम करता है, कोई उनके घर में, कोई उनके कारखाने में। उन्होंने तुम लोगों को हटा दिया तो क्या करोगे ? सबको तो शहर में काम मिल नहीं जायेगा। और सब केशो-बुद्धा की तरह पढ़े-लिखे भी नहीं हैं, फिर क्या होगा ? भूखों नहीं मर जाओगे ! इसलिए हमारी सलाह मानो, केशो-बुद्धा को बच्चू बाबू के पास भेजो। ये उनसे माफी माँग आयें। और तुम लोग, जैसे भी हो, उनकी एक हज़ार वाली टेक रख लो। कम से कम यह पैसा तो बच्चू बाबू के पेट में नहीं, बंगालियों की मदद के लिए जा रहा है।"

सच कहें, हमें तो यह सलाह जँच गयी, लेकिन बुद्धा और केशो अड़ गये। कहने लगे, "चाहे जो हो जाये, बच्चू बाबू की जबरदस्ती अब नहीं चलने दी जायेगी। मुसीबत में पड़े बंगालियों की मदद करना हमारा फर्ज है, माना, लेकिन मदद तो आदमी अपने मन से करता है। अपने सामर्थ्य के हिसाब से करता है। उसमें ज़ोर जबरदस्ती क्यों ? हमसे पूछो। हम चाहें या न चाहें, हर महीने हमारी एक दिन की तनखा कट जाती है। सरकार भी वही जबरदस्ती कर रही है जो बच्चू बाबू करना चाहते हैं। चिट्ठी पर पाँच पैसे का टिकट लगाओ। कोई न लगाये तो चिट्ठी छुड़ाने के लिए पाँच पैसे का जुर्माना और दें ! यह भी खूब रही ! और उसी सरकार के अफसर बच्चू बाबू पर ज़ोर डाल रहे हैं कि बड़े दादा ने एक हजार एक दिया है तो वह भी हम लोगों से एक हज़ार एक जुटा कर दें।"

"लेकिन नहीं दोगे तो करोगे क्या ? तोप के आगे तुम खड़े हो जाओगे ?"

बड़े-बूढ़ों को लड़कों की यह बहसबाज़ी अच्छी नहीं लगी। उनका यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहना था कि हर हुकूमत में ऐसा ही होता आया है। इसलिए जो कुछ होता है, देखते-सुनते-सहते चलो। बुद्धा यह सुनकर उखड़ गया, बोला, "हाँ-हाँ, मैं खड़ा हो जाऊँगा तोप के आगे ! और तुम लोग भी सुन लो, इस तोप के आगे एक न एक दिन तुम सबको भी खड़ा होना पड़ेगा। बंगला देश में और क्या हुआ है ?"

"जुल्म हुआ है और क्या ! बेचारे बेकसूर बंगाली मारे गये हैं और उनके बाल-बच्चे अनाथ हो गये हैं। बहुत-से भाग-भाग के हमारी शरण में आये हैं। इनसानियत के नाते उनकी मदद करना हमारा फर्ज नहीं बनता ? रही जोर-जबर्दस्ती चन्दा देने की बात, सो अपनी पार्टी के लोगों की मिसाल सामने है। बड़े दादा के हाथों मरने वाले लोगों के बाल-बच्चों की मदद हमने न की होती तो क्या होता ? वे सब अनाथ होकर भीख माँगते फिरते और हम सबकी नाक कटती। यह भी सुन लो कि बच्चू बाबू जबर्दस्ती चन्दा न उगाहते तो कोई माई का लाल धेला भी देने वाला नहीं था।"

रामनरेश की यह बात हम लोगों को ठीक लगी। रामनरेश मास्टर तो नहीं हैं, पर पढ़े-लिखे आदमी हैं। पंडिताई करते हैं और केशो के चाचा हैं। हमें लगा कि अब मामला शान्त हो जायेगा। रामनरेश का लिहाज करके केशो और बुद्धा चुप रहेंगे, पर केशो ही पहले बोला, "हमारा मुँह न खुलवाओ चाचा ! मरने वालों के बच्चों की जो मदद हमने की है, हमें मालूम है। याद करो मुरारी के मरने के बाद क्या हुआ था। उसकी पवित्रा अकेली रह गयी थी और पंचायत ने फैसला किया था कि हम लोग मिल-जुलकर उसका ब्याह कर देंगे। लेकिन हुआ क्या ?"

केशो गुस्से में फुँक रहा था और बोलते वक्त उसकी आवाज़ भर्रा रही थी। लेकिन पवित्रा की बात सुनकर हम सबकी गर्दनें झुक गयीं··· रामनरेश भी देखते रह गये। कोई जवाब नहीं सूझा।

हुआ यह था कि मुरारी के मरने के बाद मुरारी की बेटी अकेली रह गयी थी। जवान लड़की थी और मुरारी उसी साल उसकी शादी करने की सोच रहे थे। लेकिन तभी बड़े दादा की पार्टी वालों से हम लोगों की फौजदारी हो गयी और उसमें मुरारी मारे गये। पंचायत ने चंदा-वंदा करके उसकी शादी कर देने का फैसला किया था। बच्चू बाबू खुद अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ओर से हज़ार दो हज़ार खर्च करने को तैयार हो गये। पर दूसरे दिन पवित्रा को अपने घर बुला लिया कि हमारी बेटी है, बेटी की तरह रहेगी। ब्याह भी हमारे ही घर से होगा। हम लोगों ने सोचा, ठीक है इसमें बुराई क्या है। अकेली वह रहती भी कैसे ! और बच्चू बाबू ने पवित्रा को पालने के नाम पर मुरारी की ज़मीन, जानवर और मकान सब कुछ अपने कब्ज़े में कर लिया···

यहाँ तक तो ठीक, लेकिन आगे जो कुछ हुआ, वह ठीक नहीं हुआ। पता चला कि पवित्रा बड़े बाबा की पार्टी वाले महेंदर से प्यार करती थी और वे दोनों चुपचाप गाँव से भाग जाना चाहते थे। बच्चू बाबू को मालूम हो गया और उन्होंने एक दिन सवेरे-सवेरे नहर की तरफ जाते हुए महेंदर को गोली मार दी। हम लोगों को चुपचाप बता भी दिया कि वह दुश्मन के आदमी के साथ अपने गोल की बेटी को नहीं जाने देना चाहते थे। हम लोगों ने बस इतना ही कहा कि बच्चू बाबू, अब जल्दी से कोई लड़का देखकर पवित्रा की शादी कर दो···

लेकिन कुछ ही दिन बाद देखा कि पवित्रा पागल हो गयी है और गाँव की गलियों में भागती फिर रही है। कोई उसे रोककर कुछ पूछता है तो धोती ऊपर उठा देती है और कहती है, "बच्चू बाबू को निकालो, बच्चू बाबू इसमें घुस गये हैं···"

और फिर एक दिन पवित्रा की लाश महादेव वाले कुएँ में मिली थी। यहाँ का सबसे मातबर कुआँ था—बहुत ही ठंडा और मीठा पानी निकला था, पवित्रा उसे अपवित्र कर गयी। मंदिर का कुआँ था इसलिए बड़े दादा के लोग भी उसका पानी पीते थे और हम लोग भी। तब से किसी के काम का नहीं रहा। अब तो रात-बिरात लोगों ने उधर से जाना भी छोड़ दिया है। सुनते हैं, महादेव के पीपल पर पवित्रा प्रेतनी बनकर रहती है···

केशो की बात सुनकर थोड़ी देर सन्नाटा छाया रहा, जैसे सबके सामने पवित्रा धोती उठाकर खड़ी हो गयी हो और सबके सिर शर्म से नीचे झुक गये हों। फिर रामनरेश ने हिम्मत बाँधकर कहा, "पवित्रा वाली बात बीच में मत लाओ। बड़े दादा के लोगों से हमारा रोटी-बेटी का संबंध नहीं हो सकता। वे हमारे दुश्मन हैं। बंगला देश की मदद करना और बात है, वहाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मानवता का सवाल है···"

"लेकिन पवित्रा की बात में मानवता का सवाल क्यों नहीं है ? जब यह सवाल मैंने तुम्हारे सामने उठाया था, तब क्यों आँखें मूंद ली थीं ?"

"तो क्या बच्चू बाबू को शूट कर देते ?"

"शूट कर देते या क्या करते, यह मैं नहीं जानता, मैं तो यह पूछता हूँ कि उस वक्त आप लोग चुप क्यों रह गये थे ? चुप ही नहीं रह गये थे, उलटे आप लोगों ने मुझे ही डराया-धमकाया था कि ऐसे में जबकि रोज़ बड़े दादा से फौजदारी का खतरा बना हुआ है, अपनी पार्टी में फूट डालना ठीक नहीं। और चाचा, तुमने भी कहा था कि बच्चू बाबू जो कुछ करते हैं, सोच-समझकर ठीक ही करते हैं। तब उनका दोष दिखायी नहीं दिया था। अब दिखायी दे रहा है !"

"दोष तो तब भी दीख रहा था, पर करते क्या ? बोलते तो दूसरे दिन अपनी भी लाश महादेव के कुएँ में नज़र आती। और यही अब होना है। इसलिए हम तो यही कहते हैं कि बच्चू बाबू की बात मान लो। जितना चंदा माँगें, दे दो। बच्चू बाबू की मूंछ ऊँची हो या नीची, सवाल तो इस वक्त इंसानियत का है, सताये हुए बंगालियों की सहायता करने का है···"

"फिर वही बात ! इंसानियत तुम्हारे दिल में है कि बच्चू बाबू के खौफ में ? एक जगह उनके डर के मारे तुम्हारी इंसानियत सो जाती है, दूसरी जगह डर के मारे एकदम जाग उठती है !"

केशो की इस बात पर रामनरेश ताव खाकर उठ गये। उनके पीछे-पीछे आधे से ज्यादा लोग उठकर चले गये। केशो और बुद्धा गालियाँ देने लगे, "सब ससुरे जनखे हो गये हैं···चूड़ियाँ पहन-पहनकर बैठो अपने घरों में···"

हम तो भैया, रुके रहे थे। सोचा कि केशो-बुद्धा कोई फैसला कर लें तो जायें। लेकिन कोई फैसला हो नहीं पाया। बात यहीं आकर अटक गयी कि हम अकेले पाँच-छः जने क्या कर लेंगे ? केशो तो बेचारा इस आपसी फूट पर रोने लग गया। जैसे-तैसे उसे समझा-बुझाकर हम लोग अपने-अपने घर गये।

हमें क्या पता था कि सवेरे तक केशो मर जायेगा···

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नींद आने का तो खैर सवाल ही नहीं था, घर आकर बस लेट गये थे। इतने में चीख-पुकार मच गयी। बाहर निकले तो देखा, केशो के बालक बाहर खड़े अपने घर का बंद दरवाज़ा पीट रहे हैं, "अरे हमारे पिताजी को मत मारो···हरे हमारी अम्मा को मत मारो···"

भड़भड़ाकर दरवाज़ा खोलने के लिए आवाज़ें दीं तो भीतर से लठैतों की गालियाँ सुनने को मिलीं। थोड़ी देर बाद टीकमसिंह और बन्ने पहलवान बाहर निकले और लाठी घुमाते हुए हम लोगों की भीड़ में से निकल गये। एक हाथ हमारी कनपटी पर भी पड़ा, सो हमें तो चक्कर आ गया। कौन उठाकर लाया, यह भी पता नहीं। होश आया तो बड़े दादा वाली पंचायत के बैठके में पड़े थे। तभी पता चल सका कि बच्चू बाबू के लठैतों ने केशो के घर में कूदकर बच्चों को बाहर निकाल दिया था और केशो को खाट से बाँधकर उसके सामने ही उसकी बहू को···

और जाते-जाते वे केशो का गला मसक गये। हमारे साथ वालों ने अन्दर जाकर केशो को खोला, पर वह तो मर चुका था। बहू बेहोश थी पर ज़िन्दा थी। लोगों का खून खौल गया। सब अपने-अपने घरों से लाठी-बल्लम-गंडासा, जो भी हाथ पड़ा, निकाल लाये। बच्चू बाबू की तरफ गये, पर उन्होंने तो पहले से सब इंतज़ाम कर रखा था। उनके आदमी भी लाठी-बल्लम से लैस और बच्चू बाबू के हाथ में बन्दूक। बच्चू बाबू कोई बात सुनने को तैयार ही नहीं। बुद्धा ने कुछ कहा होगा कि उन्होंने अपने लठैतों को इशारा कर दिया। हमारी तरफ के लोग गुस्से में उफन रहे थे, भिड़ गये। लड़ाई ज़ोर पकड़ गयी तो बच्चू बाबू ने गोली चला दी। अब गोली के सामने किसी की क्या चलती? भगदड़ मच गयी और हमारे आदमी अपने बाल-बच्चों को लेकर भागे···और तो कहाँ जाते, बड़े दादा की शरण में चले आये। तभी कोई हमें भी उठा लाया होगा।

इसके बाद बड़े दादा खुद बन्दूक लेकर अपने लठैतों के साथ बच्चू बाबू से लड़ने आये। सुनते हैं, ऐसी लड़ाई गाँव में पहले कभी नहीं हुई। दोनों तरफ के कोई बीस आदमी मारे गये हैं। फिर पुलिस आधे से ज्यादा गाँव को पकड़ ले गयी है। और अब देख ही रहे हो, पुलिस का कितना जबर्दस्त पहरा लगा है। देखते-देखते क्या हालत हो गयी गाँव की! हर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घर में कोई न कोई मरा है, या जख्मी हुआ है, या पकड़ा गया है। सारा गाँव मातम मना रहा है। हम लोग अपने-अपने घरों में लौट तो आये हैं, लेकिन यह लौटना कोई लौटना है ? चारों तरफ भाँय-भाँय हो रही है, जैसे गाँव में भूत बसते हों।

हाँ, एक बात तो रह ही गयी। लोग कहते हैं, केशो की बहू पर पवित्रा की आत्मा चढ़ आयी थी।

बड़े दादा वाली पंचायत के बैठके में जब हमें होश आया तो हमने देखा कि एक कोने में कुछ औरतें केशो की बहू को पकड़े बैठी हैं और केशो की बहू छूटकर भागने के लिए हाथ-पाँव पटक रही है। एक तरफ बालकों की पाँत बैठी है और उन्हें भात बाँटा जा रहा है। उनमें केशो के बालक भी थे। भूख के मारे बेचारे लपर-लपर भात खा रहे थे और बीच-बीच में सहमी-सहमी आँखों से माँ की तरफ देखते जाते थे। औरतें केशो की बहू को समझा रही थीं—समझा क्या रही थीं, कैं-कैं मचा रखी थी। हमारी तो समझ में ही नहीं आया कि यह सब हो क्या रहा है।

दूसरे दिन समझे कि वह क्यों छटपटा रही थी। रात को डर के मारे हम बड़े दादा के गोल में ही पड़े रहे थे। आधी रात को हल्ला मचा कि केशो की बहू भाग गयी। कई जने टार्च और लालटेनें ले-लेकर ढूंढ़ने गये। नहर तक जाकर देख आये। कहीं पता नहीं चला। बुद्धा को गहरी चोट आयी थी और वह बेहोश पड़ा था। सवेरे उसे होश आया और हम लोगों ने उसे केशो की बहू के भाग जाने की बात बतायी तो छूटते ही बोला, "महादेव वाले कुएँ में देखा ?"

न जाने कैसे बुद्धा ने एकदम सही अन्दाज़ा लगा लिया था। केशो की बहू की लाश उसी कुएँ में मिली, जिसमें एक दिन पवित्रा की लाश मिली थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेष इतिहास

मुहल्ले में अजीब-सी सनसनी थी। लोग साथ होते तो सुबह वाली घटना पर चर्चा करते और अपनी-अपनी समझ से उसे व्याख्यायित करते। घटना अब तक अच्छी-खासी पहेली बन गयी थी। जितने लोग, उतनी बातें ! जितनी तरह के लोग, उतनी तरह की बातें। इसलिए घटना, जो पहेली बन चुकी थी, काफी उलझ भी गयी थी। लोग अकेले होते तो मन ही मन डरते। कहीं किसी दिन अपने साथ ऐसा हो गया तो क्या होगा ? डरते-डरते वे उस उलझी हुई पहेली को अपने ढंग से हल करने लगते। लेकिन ऐसी पहेलियाँ कहीं सुलझती हैं ?

हुआ यह था कि सुबह जब लोग अपने-अपने घरों में चाय पी रहे थे, या अखबार देख रहे थे, या नहा रहे थे, या भजन कर रहे थे, पुलिस के दो सिपाही मुहल्ले में आये थे। इसी गली में। रामा अपने घर के बाहर खड़ा हुआ ठेले पर उबले हुए सिंघाड़े सजा रहा था। पुलिस को देखकर चौंका। घर ही आ गये क्या सुसरे चालान करने ? लेकिन बड़ी तत्परता से उसने दोनों सिपाहियों से 'हवलदार साब जै हिन्द' कहा। लेकिन सिपाही 'तुझे फिर देखेंगे बेटा' की नज़र से देखते हुए आगे बढ़ गये। रुके मास्टर विश्वजीत के घर के सामने। रामा के देखते-देखते उन्होंने मास्टर को पुकारा, बाहर बुलाया और कुछ कहा-सुनी के बाद गिरफ्तार कर लिया। हथकड़ी डाल-कर ले गये।

पुलिस वालों से कुछ भी कहने-पूछने का मतलब जानने वाले रामा ने यही उचित समझा कि आसपास के घरों में जाकर इस बात की सूचना दे दी जाये। और यह कर्त्तव्य उसने फुर्ती से पूरा कर भी दिया। लोगों में जिज्ञासा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जगी, लेकिन पता नहीं क्यों, जब तक पुलिस मास्टर विश्वजीत के हाथों में हथकड़ी डालती रही, किसी घर का दरवाज़ा नहीं खुला। पुलिस मास्टर को लेकर चली गयी तो धड़ाधड़ सब दरवाज़े खुल गये और लोग बाहर निकल आये। उन्होंने रामा के ठेले को घेर लिया और रामा से पूछने लगे। क्या-क्यों-क्या-क्यों ?

रामा कुछ देर तो बताता रहा, फिर गुस्सा आ गया। सामने खड़ी भीड़ को धकियाते हुए उसने कहा, "हटो-हटो, सब सिंघाड़े सुसरे ठंडे हो गये।" क्या पता, उसकी बात में व्यंग्य था या नहीं, लेकिन सुनकर चुंगी के बड़े बाबू बिगड़ गये, "तुझे अपने सिंघाड़े की पड़ी है, यहाँ एक आदमी की जान का सवाल है।" रामा भी बिगड़ गया, "रहने दो, रहने दो, बुलाने गया था तब क्या तुम्हारे पैरों में मेंहदी लग रही थी ?" और वह भीड़ में से अपना ठेला निकाल ले गया।

प्रत्यक्षदर्शी चला गया। लोगों ने बड़े बाबू को घेर लिया। फिर वही क्या-क्यों-क्या-क्यों। लेकिन बड़े बाबू रामा पर कुपित थे। भाषण झाड़ने लगे, "देखा, साले का दिमाग चढ़ गया है। ठीक से पूछ रहे हैं कि भई क्या हुआ, बताता ही नहीं। इस मुहल्ले को अब कोई नहीं बचा सकता। दिन-दहाड़े पुलिस एक आदमी को पकड़ ले गयी और उसे अपने सिंघाड़े बेचने की पड़ी है ! मुहल्लेवालों में एका नहीं होगा तो यही होगा। आज मास्टर को पकड़ा गया है, कल को दूसरे भी पकड़े जा सकते हैं !"

"लेकिन यह तो बताइए, मास्टर पकड़ा क्यों गया है ?"

"हमें क्या मालूम ! आपको पड़ी है तो थाने जाकर पूछ आइए।" बड़े बाबू ने गुस्से में कहा और भीड़ को ठेलते हुए अपने घर में घुस गये। दरवाज़ा बन्द कर लिया। भड़ाक् ! शेष लोगों ने आपस में पूछताछ करके घटना जान ली और ऊपर से आश्चर्य प्रकट करते हुए तथा भीतर से आतंकित होते हुए अपने-अपने घरों में चले गये। मास्टर विश्वजीत का दरवाज़ा बन्द था, क्योंकि वह अकेला रहता था और पुलिस के साथ जाते समय ताला लगाकर चाबी अपने साथ लेता गया था। फिर मुहल्ले के लोग अपने-अपने दफ्तरों, दूकानों, कारखानों को चले गये। सबने अपने-अपने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'आँखों देखा हाल' सुनाया। इधर औरतों ने जल्दी-जल्दी घर का काम खत्म किया और पड़ोसिनों के साथ बैठकर गिरफ्तारी के बारे में गप्पें लड़ायीं।

थाने कोई नहीं गया।

शाम को लोग लौटे तो उनके पास मास्टर विश्वजीत के बारे में कई जानकारियाँ थीं। नयी और दूसरों को सुनाने लायक। अपने-अपने घरों में चाय पीकर सब्ज़ी लाने के लिए थैला या टोकरी लटकाये कई लोग गली में मिले और सूचनाओं का आदान-प्रदान हुआ।

"आपको पता है, उसे पुलिस क्यों पकड़ ले गयी ? उसने लड़कों के इम्तहान की कापियों में हेरफेर किया था। गरीब लड़कों के पैसे खाये थे और सारे बोदे लड़के पास कर दिये थे।"

"अच्छा ! पर हमने तो सुना है कि चक्कर दूसरा ही था। उसी के स्कूल वालों के मुँह से सुना है कि उसका कन्या पाठशाला की किसी मास्टरनी से इश्क-विश्क चल रहा था। मास्टरनी के बाप से शायद उसका कुछ झगड़ा-वगड़ा भी होगया था।"

"देखिए साहब, क्या जमाना आ गया है ! ऐसे हैं हमारे अध्यापक ! ये बनायेंगे हमारे-आपके बच्चों का भविष्य ! सरकार ऐसे लोगों को गोली से क्यों नहीं उड़ा देती ?"

"मास्टर के लिए कह रहे हो ? शर्म आनी चाहिए तुम्हें। पता नहीं है उस बेचारे को जबर्दस्ती फँसा दिया गया है। उस जैसा मेहनती और ईमानदार आदमी तो ढूंढ़े नहीं मिलेगा। पर वो कहते हैं न, ईमानदार आदमी की हर जगह मौत है। अरे साहब, उसने कुछ नहीं किया है। हमें पक्की खबर मिली है कि प्रिंसिपल उसके हाथों कुछ गड़बड़ी कराना चाहता था, उसने करने से इन्कार किया और प्रिंसिपल ने उसे फँसा दिया।"

"वाह ! यह भी कोई बात हुई ? कोई किसी को यों ही फँसा देगा ? और इस तरह कि उसे आम पब्लिक में ज़लील करते हुए हथकड़ी डालकर पुलिस ले जाये ! सही बात क्या है, आप हमसे पूछिये। मास्टर है राजनीतिक आदमी। नक्सलवादियों में उठता-बैठता है। दिल्ली-बंबई-कलकत्ता सब जगह के लोग उसके पास आते रहते हैं। और ऐसे लोगों के पीछे आप जानें, पुलिस और सी० आई० डी० लगी रहती है। कोई मजबूत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मिला नहीं कि धर दबोचा।"

"अजी भाई साहब, आप हिंदुस्तान की पुलिस को जानते नहीं। हमारी पुलिस असली मुजरिमों को पकड़ने लगे तो फिर बात ही क्या है! सारा भ्रष्टाचार दो दिन में बंद हो जाये। लेकिन पुलिस की लीला ही निराली है। नेक लोगों को पकड़ के बंद कर देती है और बदमाशों को छुट्टा घूमने देती है।"

"फिर भी शर्मा जी, कोई कारण भी तो होता है! पुलिस यों ही तो किसी को ले नहीं जा सकती। आखिर हम और आप भी तो रहते हैं, इस मुहल्ले में!"

"देखते जाइये, यही हाल रहा तो हम-आप भी पकड़े जायेंगे।"

कहने वाले ने आगे का एक वाक्य मन में ही रोककर घोंट लिया। कहना चाहता था—और हममें से प्रत्येक की गिरफ्तारी पर मुहल्ले के बाकी लोग इसी तरह की अटकलें लगायेंगे और अफवाहें फैलायेंगे। कहने वाला अपने मन का भय उजागर नहीं करना चाहता था, लेकिन सुनने वालों ने यह अनकहा वाक्य भी सुन लिया। यह भय उनका भी भय था। और वे इस भय को बाहर आने देना नहीं चाहते थे, इसीलिए जल्दी से यह कह-कर कि 'जो करेगा, सो भरेगा' वे अपने-अपने काम से खिसक लिये।

मास्टर विश्वजीत ने गली में कदम रखा तो ठंडी रात में इधर-उधर दुबके पड़े कुत्ते भौंकने लगे। साढ़े ग्यारह बजे होंगे, विश्वजीत ने अनुमान लगाया। गली एकदम सुनसान थी। सारे मकानों के दरवाज़े बंद थे। दो-तीन मकान वालों को छोड़कर बाकी सब मकान वाले बत्तियाँ बुझाकर सो गये थे। उसे अच्छा लगा। कुत्तों के भौंकने की परवाह किये बिना वह अपने घर तक बढ़ आया। कुत्ते भी उसे पहचानकर चुप हो गये। उसने ताला खोला और भीतर आकर दरवाज़ा बंद कर लिया। अँधेरे में आँगन के स्विच की ओर बढ़ते हुए वह ठहाका मारकर हँसा। लेकिन ठहाके की आवाज़ उसके कानों को सुनायी नहीं पड़ी। स्वर जैसे भीतर ही कहीं डूब गया था, और हँसने के लिए खुले मुँह का अर्थ उसकी समझ में नहीं आया। वह सिहर उठा। दौड़कर बत्ती जला दी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंदर कमरे में गया। वहाँ भी बत्ती जलायी। शीशा सामने ही था। अपना चेहरा देखा, मुस्कराया। बोला, "आपसे मिलकर खुशी हुई। मुझे तो पता ही नहीं था कि आप नक्सलवादी हैं। खैर, अब पता चल गया है। बताइये, आपने कितनी हत्याएँ की हैं? आपके पास कितनी बंदूकें हैं? कितने छुरे? कितने चाकू? आपका गुप्त अड्डा कहाँ है? गुप्त प्रेस कहाँ है? गुप्त साहित्य कहाँ है? आपके गिरोह के दूसरे सदस्य कहाँ हैं?"

उसने फिर एक ठहाका लगाना चाहा। आवाज़ फिर नहीं निकली। मुँह फिर खुला रह गया। फर्क सिर्फ इतना था कि पहले अँधेरे में वह अपना खुला हुआ मुँह देख नहीं पाया था, अब शीशे में देख पा रहा था। भयंकर! उसे लगा, हाथ-पैर ठंडे होकर सुन्न होते जा रहे हैं। वह सचमुच ठंड से काँप रहा था। सुबह जब वे उसे पकड़कर ले गये थे, वह शर्ट-पट के ऊपर सिर्फ स्वेटर पहने हुए था—बिना बाँहों का। उसने और कुछ पहन जाने की जरूरत भी नहीं समझी थी। सोचा था, उसे गलती से ले जाया जा रहा है। थाने में पूछताछ के बाद घंटेभर में छोड़ दिया जायेगा और वह वापस घर आकर, तैयार होकर, समय पर स्कूल जा सकेगा। उसे क्या पता था कि वाकई वह अपराधी है और जमानत पर छूटते-छूटते उसे रात के दस बज जायेंगे।

शीशे के सामने से हटकर वह अपने बिस्तर पर बैठ गया। ठंड में फिर काँपा तो रजाई ओढ़कर लेट गया। आँखें बंद कर लीं। उसने चाहा, बिस्तर में उसका यह लेटना कल रात का लेटना हो जाये, जब वह रोज़ की तरह पढ़ते-पढ़ते आँखों में नींद झुक आने पर सोया था। इस क्षण को बीते हुए कल से जोड़कर आज के दिन को खारिज कर दे। लेकिन वह जानता था कि वह ऐसा नहीं कर सकता। आज का दिन उसी को खारिज कर गया है।

हवालात से निकलने के बाद उसने गौरीशंकर से कहा था, "तुम क्यों जमानत के चक्कर में पड़े? मैंने किया ही क्या है? वे मुझे खामख्वाह तो सज़ा दे नहीं सकते!"

गौरीशंकर हँस दिया था, "भोले हो विशु! तुम्हें पता नहीं है कि यह [illegible] किया जा सकता है। इसमें जो फँसा, आसानी से

CC-0 Agamnigam Digital Research Foundation Chandigarh. Funding by IKS MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निकलता नहीं।" मास्टर ने कहा था, "लेकिन लोकतंत्र में बोलने की आजादी तो सबको है। संविधान में भी···।" गौरीशंकर ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया था और ठंडे स्वर में कहा था, "संविधान पढ़कर ही तो तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। तुम समझते हो इसमें जो लिखा है सब सच है ? तुम अपने स्कूल को भी सच मानते हो ? अपनी नौकरी को भी सच मानते हो ?"

"तो क्या···?" मास्टर विश्वजीत का मुँह तब भी खुला रह गया था।

"हाँ विशु, तुम्हारे प्रिंसिपल के पास मैं गया था ! उन्होंने तुम्हारी कोई भी मदद करने से इन्कार कर दिया। और शायद···मेरा मतलब, मुझे पक्का पता नहीं है, पर उनकी बातों से लगा कि शायद तुम्हारी नौकरी गयी।"

"गयी ?" वह रुककर खड़ा हो गया था।

"मैं कैसे कह सकता हूँ, शायद की बात है। उन्होंने इस तरफ इशारा किया था कि ऐसा हो सकता है।"

मास्टर विश्वजीत की समझ में कुछ नहीं आया था। वह बौखला गया। ऐसा कैसे हो सकता है ? प्रिंसिपल ही ने तो कहा था कि सेमिनार में किसी भी विद्वान् को बुला लो और लड़कों के साथ फ्री डिस्कशन करा दो ! और विश्वजीत ने तुषार को बुला लिया था। बहस में अपने भी विचार प्रकट कर दिये थे। क्या इतने से ही वह कम्युनिस्ट और नक्सलाइट हो गया ? और माना, वह कम्युनिस्ट विचारों का है भी, तो क्या हुआ ? उसके साथ पढ़ाने वाले अग्रवाल साहब जनसंघी नहीं हैं ? वर्माजी स्वतन्त्र पार्टी के लिए काम नहीं करते ? विनयजी संसोपा में नहीं हैं ? स्वतन्त्र भारतीय गणतंत्र में प्रत्येक नागरिक को स्वेच्छा से धार्मिक और राजनैतिक संगठनों और दलों में शामिल होने का अधिकार···संविधान···?

उसे लगा, उसे अपनी सारी जानकारी दिमाग से निकाल देनी चाहिए। शायद वह सचमुच दलदल में फँस गया है और अब उभरना मुश्किल है। उसे पत्नी का ध्यान आया, अपने दोनों बच्चों का ध्यान आया, माँ का ध्यान आया। नौकरी किये तीन वर्ष हो चुके हैं, पर वह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभी तक परिवार को गाँव से उठाकर अपने पास नहीं ला सका है। मकान सस्ते में मिल गया है, फिर भी लाये कैसे ? प्राइवेट स्कूल है। ढाई सौ पर हस्ताक्षर कराते हैं और डेढ़ सौ देते हैं। करनी हो नौकरी तो करो, न करनी हो तो जाओ। डेढ़ सौ में गाँव में तो चल जाता है—मोटा-झोटा खा-पहनकर। शहर में कैसे चलेगा ? अपना अकेले का काम चलाने के लिए ही उसे स्कूल में पढ़ाने के बाद तीन-तीन ट्यूशनें करनी पड़ती हैं। और फिर कर्ज़ ?जब तक गाँव के सहुआ से लिया हुआ कर्ज़ नहीं चुक जाये, वह गाँव छोड़ने भी तो नहीं देगा। गाँव छोड़ो तो गाँव वाला अपना मकान उसके नाम करो।

मास्टर विश्वजीत की आँखों के आगे अँधेरा छा गया था। गौरीशंकर के कंधे का सहारा लेकर उसने भरी हुई आवाज़ में पूछा था, "नौकरी नहीं रहेगी तो मैं करूँगा क्या ?" और पूछते ही उसे लगा कि यह सवाल वह अपने-आपसे अक्सर पूछता रहा है। शहर में बसने के लिए सहुआ को गाँव वाला मकान देने की हिम्मत इसीलिए नहीं पड़ी थी कि नौकरी नहीं रही तो सब कहाँ रहेंगे। लेकिन अब उस सवाल की शक्ल बदल गयी थी। गाँव-वाला मकान रहे तो भी क्या ? वह बेकार होकर उसमें तो रहने जा नहीं सकता। क्या करेगा वहाँ ? दूसरों के खेतों में मजूरी ?

"देखेंगे, कुछ सोचेंगे।" गौरीशंकर ने कुछ आश्वासन दिया था। लेकिन दोनों जानते थे कि यह कोई आश्वासन नहीं है। शायद इसीलिए गौरीशंकर ने जल्दी से कहा था, "प्रिंसिपल के पास अभी चलें। उनसे बात तो कर लें !"

वे गये थे। प्रिंसिपल से बात भी की थी, लेकिन प्रिंसिपल ने स्पष्ट कह दिया था, "सॉरी, मैं कुछ नहीं कर सकता। आपसे मेरी कोई जाती दुश्मनी थोड़े ही है ! मैं तो, आप जानते हैं, हमेशा आपका फेवर करता रहा हूँ, लेकिन अब इट इज इंपासिबल। कमेटी ने आपको नौकरी से निकाल देने का प्रस्ताव पास कर दिया है। आप हैं भी टेंपरेरी, फाइट भी नहीं कर सकते।"

"तीन साल हो गये हैं मुझे···।" विश्वजीत ने रुँधे गले से किसी तरह कहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"उससे क्या होता है, जब तक आपको बाकायदा परमानेंट न किया जाये, आप···"

"लेकिन मेरा कसूर क्या है ? यह तो मुझे मालूम पड़ना चाहिए।"

"अरे भाई, कसूर-वसूर किसी का कुछ नहीं होता। बस, आदमी को ज़रा होशियार रहना चाहिए। हमें ही देखिए, दाँतों में जीभ की तरह रहते हैं। स्टाफ का पक्ष लें तो कमेटी नाराज़, कमेटी के आदेशों का पालन करें तो स्टाफ नाखुश। किसी तरह बैलेंस बनाकर नौकरी बनाये हुए हैं, वरना हमें भी अब तक उखाड़कर फेंक दिया होता।"

"फिर भी मैं जानना चाहता हूँ कि मुझे क्यों निकाला जा रहा है ?"

"सुनना ही चाहते हैं तो सुनिये, आपने स्कूल में हिंसावाद का प्रचार किया है। उस दिन आपने जो भाषण दिया, उसमें सत्यमेव जयते और अहिंसा परमोधर्मः का मजाक उड़ाया। आपने कहा कि ये बातें अमीर लोग गरीबों को गुलाम बनाये रखने के लिए करते हैं। और तो और, आपने यह भी कहा कि शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने वाली पुलिस केवल गरीबों को सताने और डराने के लिए है। आपने यह भी कहा कि फौजें और जेलें भी पूँजीवाद को बनाये रखने का साधन हैं।"

"लेकिन प्रिंसिपल साहब, ये बातें मैंने अपने मन से गढ़कर तो नहीं कही थीं। आपने समाजवाद पर डिस्कशन रखा था और मैं उसमें मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन को 'कोट' कर रहा था।"

"वह तो ठीक है, लेकिन आप अध्यापक हैं। आपका काम सिर्फ कोटेशन सुनाना नहीं है। अगर कोई कोटेशन गलत है तो आप उसे गलत नहीं कहेंगे ? रिफ्यूट नहीं करेंगे ? उलटे आप तो अपने जोश में सारी टेक्स्ट बुक्स को ही गलत ठहरा रहे थे, सारी शिक्षा-प्रणाली पर ही अटैक कर रहे थे। अग्रवाल साहब ने आपको इशारा भी किया था, पर आप समझे ही नहीं। उनसे भी बहस करने लगे।"

"मगर वह तो फ्री डिस्कशन···"

"कमाल है ! आप अब भी नहीं समझ रहे हैं। फ्री डिस्कशन क्या होता है ? फ्री डिस्कशन का मतलब यह होता है कि आप स्कूल के लड़कों को [illegible] ! अरे मैं तो वहाँ मौजूद था, मैंने सुन लिया कि [illegible]

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Digitized funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के कानून को भी चुनौती दे रहे थे। आइ कैन कोट योर ओन वर्ड्स। आपने कहा था, कानून भी वे ही बनाते हैं जिनके हाथों में शोषण की सत्ता होती है। बोलिये, नहीं कहा था आपने ?"

"लेकिन···"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। काम की बात करनी हो तो कीजिये, फालतू बहस के लिए मेरे पास वक्त नहीं है। आप यह नहीं सोच रहे हैं कि मैंने कमेटी में आपके लिए कितना कहा है। कितना लड़ा हूँ मैं आपके लिए !"

विश्वजीत नहीं समझा, लेकिन गौरीशंकर प्रिंसिपल का इशारा समझ गया। अब तक चुप बैठा हुआ था, अब बोला, "कोई सूरत है प्रिंसिपल साहब, कि इनकी नौकरी बच जाये ?"

"है क्यों नहीं, पर आप इनका रवैया देख रहे हैं ? इस तरह कोई सूरत निकल सकती है ? मैंने कमेटी में इनके फेवर में क्या नहीं कहा है ! आप ही सोचिये, इस तरह बेइज़्ज़त करके निकाला जाना कितने शर्म की बात है। आगे भी कहीं नौकरी नहीं मिलेगी। लेकिन मैं भी इंसान हूँ, मेरे भी बाल-बच्चे हैं। मुझे तरस आ गया। मैंने कहा, इस तरह किसी गरीब को निकालना ठीक नहीं। निकालना ही है तो विश्वजीत से इस्तीफा लिखवा लीजिए ताकि कहीं मुँह दिखाने के काबिल तो रहें। और अब कमेटी ने मेरी बात मान ली तो मैंने केस आगे प्लीड किया। मैंने कहा, इस्तीफा भी क्यों लिखवाते हैं, विश्वजीत लिखकर माफी माँग लें और यह लिखकर दे दें कि आइंदा वे ऐसा कोई काम नहीं करेंगे, तो उन्हें नौकरी ही करने दीजिये। एंड यू विल वंडर, वे लोग मेरी बात मान गये हैं।"

विश्वजीत कुछ कहना चाहता था, लेकिन बौखलाहट में उससे बोला नहीं गया। उठकर खड़ा हो गया, जैसे पैरों में लगे स्प्रिंगों ने उसे उछाल दिया हो। गौरीशंकर ने हाथ पकड़कर उसे बैठाना चाहा, पर विश्वजीत ने उसका हाथ झटक दिया। यह देखकर प्रिंसिपल भी उठ खड़ा हुआ। बोला, "ठीक है, कल सुबह तक आप अच्छी तरह सोच लीजिये।" फिर उसने गौरीशंकर की ओर देखकर विश्वजीत से कहा, "कम से कम इनकी जमानत का ख्याल तो कीजियेगा ! केस तो आप पर चलेगा, यह तय है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अगर नौकरी गयी तो निश्चित है कि आप केस हार जायेंगे। स्कूल की बदनामी न हो, इसलिए मैंने यह खबर बड़ी मुश्किल से अखबार में जाने से रोकी है, लेकिन आपने इस्तीफा दे दिया तो शायद मैं भी आपको डिफेंड नहीं कर पाऊँगा। नौकरी में रहें तो शायद कमेटी के कुछ लोग भी आपका मामला रफा-दफा कराने में कुछ मदद करें। सोच लीजिये।"

प्रिंसिपल के घर से निकलकर विश्वजीत को बाहर चलती हुई तेज़-तीखी-ठंडी हवा अच्छी लगी थी। गौरीशंकर पहले की ही तरह शान्त और गंभीर था। हमेशा के अच्छे दोस्त की तरह। विश्वजीत ने कुछ कदम खामोश चलने के बाद कहा, "तुम क्या कहते हो गौरी ?"

एकाएक निर्णायक उत्तर देते गौरीशंकर को हिचक हुई। बोला, "तुम्हें शायद मेरी सलाह गलत लगे, लेकिन इस हालत में मैं समझता हूँ कि माफीनामा लिख देना ही ठीक होगा।" कुछ देर चुप रहकर फिर बोला, "और मेरे ख्याल से तुम्हें कुछ दिन अपने उस तरह के दोस्तों से भी अलग रहना चाहिए।"

"उस तरह के ? क्या मतलब ?"

"मतलब नक्सलाइट लोगों से।"

विश्वजीत को आश्चर्य हुआ। गौरीशंकर भी यही समझ रहा है कि मैं नक्सलाइट हूँ ? इससे तो हमेशा कहता रहा हूँ कि आज के संदर्भ में वे लोग गलत हैं और मैं उनकी गतिविधियों का समर्थन नहीं करता। फिर भी यह···?

उसे लगा, उसके साथ गौरीशंकर नहीं, पुलिस या स्कूल-कमेटी का ही कोई आदमी चल रहा है। जाने क्यों उसे लगा कि गौरीशंकर और प्रिंसिपल में कोई फर्क नहीं है। प्रिंसिपल कमेटी में उसका केस प्लीड कर आया है और गौरीशंकर पुलिस में उसकी जमानत दे आया है। दोनों ही उसके हितैषी हैं। लेकिन क्या वे उसके मामले को समझ रहे हैं ? प्रिंसिपल तो खैर प्रिंसिपल है, लेकिन गौरीशंकर तो दोस्त है ! बचपन से साथ पढ़ा है। फर्क इतना ही तो है कि विश्वजीत अध्यापक हो गया और गौरीशंकर इमारतों का ठेकेदार !

"गौरी, तुम अपनी जमानत वापस नहीं ले सकते ?" उसने गौरी से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विदा लेते समय कहा था। और गौरीशंकर ने कहा था, "कैसी बातें करते हो यार ! दोस्त होते किस दिन के लिए हैं ! तुम उत्तेजित हो गये हो, चलो आज हमारे ही यहाँ चलो। सुबह तक ठंडे दिमाग से सारी बातें सोच लेना।"

"नहीं, मैं अपने घर ही जाऊँगा।" विश्वजीत के स्वर में कुछ कठोरता-सी आ गयी थी। फिर उसने गौरीशंकर से हाथ मिलाया था और अपने घर की दिशा में चल दिया था।

और अब घर आकर वह 'सारी बातें' सोच रहा है। आँगन और कमरे की दोनों बत्तियाँ बेकार जल रही हैं। कमरे का दरवाज़ा खुला पड़ा है और उसमें से ठंड भीतर आ रही है। वह रजाई में दुबका पड़ा है, लेकिन ठंड से काँप रहा है। पेट सुबह से खाली है और वह एक कप चाय के लिए मर रहा है, पर हिम्मत नहीं हो रही है कि स्टोव जलाकर कुछ खा-पी ले। एक दिन और एक घटना। लेकिन लगता यों है जैसे पूरी एक ज़िंदगी उसके देखते-देखते सामने से गुज़र गयी हो। आँखों में चेहरे ही चेहरे घूम रहे हैं। बच्चे, पत्नी, माँ। पुलिस, प्रिंसिपल, गौरी। माँ, पत्नी, बच्चे। गौरी, प्रिंसिपल, पुलिस। रह-रहकर सारे चेहरे आपस में घुल-मिल जाते हैं और स्कूल के लड़कों के चेहरे उभर आते हैं। हायर सेकेंडरी तक के किशोर चेहरे। सोमवार वाले दिन विश्वजीत की बातें हैरत और नासमझी के भाव से सुनते हुए चेहरे। उन्हीं लड़कों ने अपने पिताओं और अभिभावकों से शिकायत की होगी कि विश्वजीत उन्हें हिंसा का पाठ पढ़ा रहा था ? और उन्हीं की शिकायत पर पिताओं और अभिभावकों ने पुलिस में विश्वजीत की रिपोर्ट की होगी ?

बाहर कोई दरवाज़ा खटखटा रहा है। आवाज़ भी दे रहा है, "मास्टर जी ! मास्टर साब !" लेकिन विश्वजीत को विश्वास नहीं होता कि उसी का दरवाज़ा खटखटाया जा रहा है, कि उसी को आवाज़ दी जा रही है। लेकिन खटखट बन्द नहीं होती। आवाज़ फिर आती है, "मास्टर जी ! मास्टर साब !"

वह हड़बड़ाकर रजाई से निकलते हुए पूछता है, "कौन ?"

"मैं हूँ मास्टर जी, रामा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रामा ही है। सुबह उबले हुए सिंघाड़े और रात को मूँगफली बेचने वाला रामा। सिनेमा का आखिरी शो छूट जाने के बाद ठेला लेकर लौटा है। दरवाज़ा खुलने पर दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते करते हुए पूछता है, "क्या बात थी मास्टर जी ? क्या हो गया था ?"

विश्वजीत का मन हुआ 'कुछ नहीं, यों ही' कहकर टाल जाये। इतनी लम्बी और उलझी हुई बात यों खड़े-खड़े वह कैसे बता सकता है ? यह रामा ठेलेवाला समझेगा भी ? लेकिन पता नहीं क्यों और कैसे उसके मुँह से निकल गया, "बहुत लंबी बात है रामा, तुम थक गये होगे, जाकर सो रहो, सवेरे वक्त मिले तो आ जाना।"

"आप तो अभी नहीं सो रहे हो ? मैं ठेला उठाकर अभी आया।" रामा ने कहा और ठेले के नीचे से बोरी निकालकर उसमें मूँगफलियाँ भरने लगा। विश्वजीत दरवाज़ा खुला छोड़कर अन्दर लौट आया। किचन में जाकर स्टोव जलाया और चाय का पानी रख दिया। रामा के लिए भी। सुबह ली हुई डबलरोटी के टुकड़े सूख-से गये थे, पर उसने डिब्बे में रखा गुड़ निकालकर स्लाइसों में दबाया और जल्दी-जल्दी खाने लगा। रोज़ सुबह स्कूल जाने से पहले किया जाने वाला 'भोजन' ! पत्नी को पता चल जाये तो अपना सिर फोड़ ले। कहे—बस, यही खाकर सारे दिन खटते हो ? वह मुस्कराया ! नौकरी चली भी जाये तो ज़िन्दा रहने में ज़्यादा तकलीफ नहीं होगी ! यह 'ट्रेनिंग' काम देगी।

रामा के आने तक वह 'भोजन' समाप्त कर चुका था और चाय बनाकर दो गिलासों में छान चुका था। एक गिलास रामा को देकर, अपनी कुर्सी पर रामा को बिठाकर, खुद बिस्तर पर बैठ गया। मन हलका हो आया था। गरम चाय के घूँट तन को ही नहीं, जैसे मन को भी गरमा गये। सहजभाव से वह आपबीती सुनाने लगा। आज सुबह से नहीं, कल से नहीं, सेमिनार वाले दिन से नहीं, उसने अपनी कहानी वहाँ से शुरू की, जहाँ से उसकी जिन्दगी शुरू हुई थी। और रामा को ताज्जुब लगा कि यह मास्टर विश्वजीत की कहानी नहीं, उसकी अपनी कहानी है।

वही एक गरीब किसान बाप, जो दूसरों के खेतों पर मजूरी करता है। वही एक नंगा-भूखा परिवार, जो महाजन से एक बार कर्ज लेकर ब्याज

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चुकाते-चुकाते ही मर-खप जाता है। वही एक बेटा, जो थोड़ा-सा पढ़ लिखकर गाँव में गुजारा होते न देख शहर चला आता है। फर्क इतना ही तो था कि विश्वजीत मास्टर हो गया था और रामा डेढ़-दो रुपये के लिए सारे दिन शहर में फेरी लगाने वाला। मास्टर की समझ में यह नहीं आता था कि बोलने की आजादी होने के बावजूद पुलिस क्यों पकड़ ले जाती है, और फेरीवाले की समझ में यह नहीं आता था कि जब हर किसी को अपना रोजगार करने की आज़ादी है तो बाज़ार में ज़रा देर ठेला खड़ा कर लेने पर सिपाही डंडा क्यों मारता है, चालान क्यों कर देता है और जब-तब उसकी गाढ़ी कमाई में से रुपया-अठन्नी क्यों मार ले जाता है ?

"तो ये बात है।" विश्वजीत की कहानी सुनकर रामा ने एक लंबी साँस लेकर कहा, "सब जगह एक ही बात है।"

"तो बताओ, अब क्या करूँ मैं ? माफीनामा लिख दूँ ?"

"आप जानो। ठीक समझो तो लिख दो।"

"तुम क्या कहते हो ?"

"मैं क्या कहूँ मास्टर जी ! जो बातें आपने अपने स्कूल में लड़कों को बतायीं, वे ही बातें हमारे यहाँ के एक ग्रामसेवक कहा करते थे। उन्हें हमारे लंबरदार ने पिटवा दिया, आपको कमेटी के लोग पिटवा देंगे। फिर जैसे ग्रामसेवक लापता हो गये, आप भी हो जाओगे।"

"लापता हो गये ? कहीं भाग गये ?"

"अब सही-सच्ची हमें क्या मालूम। यों ही उड़ती-उड़ती सुनी थी कि लंबरदार ने उन्हें गोली मारकर नहर में फिंकवा दिया। पुलिस आई थी, पर लंबरदार के घर दारू-कलिया खा-पीकर चली गई। ग्रामसेवक का आज तक पता नहीं।"

विश्वजीत की रीढ़ में सिहरन-सी दौड़ गई। उसका भी यही होना है ? उसके लिए तो शायद गोली की भी जरूरत नहीं होगी। नौकरी छीन ली गई और दो-चार महीने के लिए भी जेल में डाल दिया गया तो वह वैसे ही मर जायेगा। सहुआ गाँव वाला मकान जरूर ले लेगा। पत्नी माँ और बच्चों को लेकर कहाँ जायेगी ? कौन जाने, लोग उसकी इज्ज़त नहीं उतारेंगे ?

वह काँपने लगा। रामा ने शायद उसका काँपना देख लिया। बोला,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"आपको ठंड लग रही है मास्टर साब, आराम करो।" फिर उठकर जाते-जाते उसने जैसे अपने आप से कहा, "ससुरी ठंड ही इतनी है, कोई ठिकाना है !"

पता नहीं, रामा की बात में व्यंग्य था या नहीं, लेकिन मास्टर विश्वजीत को लगा कि व्यंग्य है। तेज, ठंडे चाकू-सा, जिसकी काट का पता नहीं चलता। उसकी कनपटियाँ गरम हो गईं। जाते हुए रामा को रोककर उसने कहा, "सुनो रामा, तुम्हारे भी तो बाल-बच्चे हैं ! अगर तुम्हारे सामने, मान लो, ऐसी समस्या आ जाये तो तुम क्या करो ?"

रामा ठिठककर हँस दिया, "हम लोगों की बात और है मास्टर साब। लड़ना-मरना होता है तो लड़-मर लेते हैं। जेल भी काट आते हैं। और हमारे बाल-बच्चों का क्या, उन्हें बाबूजी तो बनना नहीं। जब तक जीता हूँ, खिला रहा हूँ। मर जाऊँगा तो सब अपना-अपना काम करेंगे और खायेंगे। घर वाली है, सो ठीक समझेगी तो मेहनत-मजूरी कर लेगी, नहीं तो किसी और के घर जा बैठेगी। पर आप लोगों में ऐसा कहाँ होता है !"

"यही तो दिक्कत है !" मास्टर विश्वजीत के मुँह से एक गंदी गाली निकलने को हुई, पर उसने उसे रोक लिया। रामा चला गया तो उसे अपने ऊपर गुस्सा आया—खूब आदमी हो तुम ! कैसे लोगों से अपनी समस्या का समाधान चाहते हो। रामा की और तुम्हारी जिन्दगी क्या एक-सी है कि तुम्हारी समस्या उसकी भी समस्या हो सके ?

लेकिन दरवाज़ा अन्दर से बन्द करते-करते उसके हाथ रुक गये। उसे लगा, रामा के साथ उसका ही एक रूप बाहर चला गया है। वह चौंक गया। अपनी यह पहचान उसे झकझोर गई। सिहरन-सी हुई, लेकिन वह जान रहा था कि यह सर्दी की सिहरन नहीं है।

कमरे में आकर वह फिर शीशे के सामने खड़ा हो गया, साहसपूर्वक। अपने-आपको समझ लेने के से अन्दाज़ में। उसने स्वयं से पूछा—आखिर मुझमें और रामा में फर्क क्या है ?

उत्तर में उसके बाप का चेहरा उसके सामने आ गया। उजड्ड हँसी हँसता हुआ।

बाबू साब कैसे बनेगा रे बिसुआ ! पहले बाबुओं का बाप तो बन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ले। हम ज़मींदार नहीं हैं कि हमारे घरों की औरतें बाहर काम न करें और घर में पानदान ले के बैठी रहें। सिरफ तेरी तनखा से क्या होगा बच्चा ?"

लेकिन बच्चा बिसुआ अपनी बात पर अड़ा रहा था। उसने बाप से कह दिया था, "नहीं, अब मैं अम्मा को दूसरों के बर्तन नहीं माँजने दूँगा। घर में चाहे जैसे रह लो, पर बाहर काम करने से बदनामी होती है।" बाप हँसता रहा था। शायद खुश भी हुआ था। विश्वजीत ने मास्टरी लगते ही माँ को दूसरों के जूठे बर्तन माँजने से रोक दिया था। वह नहीं चाहता था कि उसकी पत्नी भी यही करे और उसके बच्चों को भी गाँव के लोग नीची नज़र से देखें, जैसे उसे देखते रहे हैं। अब वह मास्टर हो गया है। छोटे-मोटे स्कूल का नहीं, शहर के हायर सेकेंडरी स्कूल का मास्टर ! अब उसकी भी कुछ इज्ज़त है। डेढ़ सौ तनखा के मिलेंगे, सौ-पचास ट्यूशन करके कमा लेगा। ठाठ से काम चलेगा। वह जल्दी ही परिवार को शहर ले जायेगा और इज्ज़तदार लोगों की तरह रहेगा।

और उसने परिवार की व्यवस्था अपने हाथों में ले ली थी। बाप ने विरोध किया था। लेकिन विरोध करने के लिए ज़्यादा दिन ज़िन्दा नहीं रहा। विश्वजीत ने माँ को बाहर निकलने से मना कर दिया। यह क्या पिछड़ापन है कि घर का आँगन लीपने के लिए बुढ़िया तसला लेकर गोबर बटोरती फिर रही है ! विश्वजीत दस पैसे देगा और कोई भी फालतू छोकरा गोबर घर में डाल जायेगा। उसने पत्नी को कुएँ से पानी लाने से रोक दिया। गाँव का धीमर किसलिए है ? दो रुपये महीने लेगा और दो रोटियाँ, सुबह-शाम पानी भर जायेगा। पहले माँ ठाकुरों के घर से छाछ माँग लाती थी, जिसे पी-पीकर विश्वजीत बड़ा हुआ था, लेकिन अब यह मँगतूपना नहीं चलेगा। बच्चे दूध पियेंगे और दूध खरीदा जायेगा। उसे इसी में संतोष था कि शहर में दूध डेढ़ रुपये किलो मिलता है, गाँव में रुपये सेर के ही भाव मिल जाता है। माँ इस 'साहबी' से ज़्यादा ज़रूरी समझती थी सहुआ का कर्ज़ चुकाना, जो बाप-दादों के बनाये मकान पर दाँत गड़ाये बैठा था। और विश्वजीत को यही बात सबसे ज़्यादा कचोटती थी। उसे लगता, वह तरक्की तो कर रहा है, अपने पिछड़ेपन से लड़ भी रहा है, लेकिन वह तरक्की खोखली है। उसके बाबा आगमो और बापू [illegible]

CC-0 Agamnigam Foundation. Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहन-सहन को तो बदल लिया है, लेकिन गाँव अब भी वैसा ही है। गाँव का सहुआ अब भी कर्ज़ पर जुल्मी ब्याज वसूल करता है। और गाँव के लोग अब भी विश्वजीत को काने अहीर का लड़का या बिसुआ ही कहते हैं। ज्यादा से ज्यादा मास्टर बिसुआ। इस चीज़ से विश्वजीत को नफरत थी और वह गाँव से नफरत करने लगा था। कोशिश में था कि जल्दी से जल्दी इस गाँव से नाता टूटे, लेकिन नाता टूटता नहीं था, अम्मा पुश्तैनी मकान पर अपना अधिकार छोड़ना नहीं चाहती थीं और सहुआ पूरा कर्ज़ चुकता कराये बिना विश्वजीत को गाँव से जाने नहीं देना चाहता था। और अब··· अब···?

ठंडी हवा का एक झोंका कमरे में घुस आया। विश्वजीत सिहर उठा। नौकरी खोकर उसे गाँव लौटना पड़ा और अपने बाप की तरह दूसरों के खेतों में मज़दूरी करने के लिए मजबूर होना पड़ा तो वह जीते-जी मर जायेगा। गाँव वाले कहेंगे—क्यों बेटा, आ गये अपनी पे ? बहुत आग मूतते थे, अब नाक रगड़ो !

उसे लगा, वह निर्णय पर पहुँच रहा है। कमरे का दरवाज़ा बन्द करके उसने बत्ती बुझा दी और बिस्तर में घुस गया। ठीक है, माफीनामे का पता कितनों को चलेगा, चुपचाप सब काम हो जायेगा। प्रिंसिपल फेवर करेगा। कमेटी के कुछ लोग गौरीशंकर के समझाने से मान जायेंगे। बेकार पुलिस-कचहरी के चक्कर में पड़ने की क्या जरूरत है ! और समाजवाद···उसे क्या पड़ी है ! आना होगा तो समाजवाद अपने आप आ जायेगा। सरकार कोशिश कर ही रही है। दूसरी पार्टियाँ भी तो हैं ! दूसरे लोग भी तो हैं ! एक उसी ने ठेका ले रखा है समाजवाद लाने का ? उसका काम स्कूल के लड़कों को पढ़ाना है, कोर्स पूरा कराना है। बस ! अब वह किसी सेमिनार-वेमिनार के चक्कर में नहीं पड़ेगा। बेकार का झंझट !

रजाई की गरमाहट में उसने आँखें बन्द कर लीं। एक लम्बी साँस लेकर खुद को ढीला छोड़ दिया। अब सो जाना चाहिए। शायद दो बज गये होंगे। उसने अपनी माँ, पत्नी और बच्चों के चेहरे याद करने की कोशिश की। वे चेहरे रोज़ सोते समय उसे याद आते थे। लेकिन आज उन्हें याद करने में उसे कठिनाई हो रही थी। कल सुबह उसे तो अपने स्कूल के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लड़कों के गुमसुम चेहरों की भीड़ आँखों में उमड़ आती। उन्हें धकियाकर वह उनके पार देखने की कोशिश करता तो रामा फेरी वाले का चेहरा दिखायी देने लगता—ससुरी, ठंड ही इतनी है, कोई ठिकाना है !

वह परेशान हो गया। नींद क्यों नहीं आती, जब कि वह एक निर्णय कर चुका है ? उसने करवट बदली। इससे भी कोई फायदा नहीं हुआ। सहसा उसे मुहल्ले वालों का ध्यान आया। सुबह जब सब लोगों ने देखा-सुना होगा कि उसे पुलिस पकड़ ले गयी है तो क्या सोचा कहा होगा ? वे जरूर उसे कोई अपराधी समझ रहे होंगे। रामा ने बताया भी तो था, मुहल्ले के लोग अटकलें लगा रहे थे···परीक्षा की कापियों में हेर-फेर··· कन्या पाठशाला की मास्टरनी से इश्क···उसे हँसी आने को हुई, लेकिन हँसी की जगह क्रोध आ गया, "उल्लू के पट्ठो, मैं अपराधी नहीं हूँ।"

जैसे बिजली का तार छू गया हो, वह फिर उठ बैठा। उसने अपने कानों से सुना, वह प्रिंसिपल को गालियाँ दे रहा था और कहता जा रहा था, "मैं माफी किस बात की माँगूँ ? स्साले ढोंगी कहीं के ! तू मेरा फेवर करेगा ? ढाई सौ की रसीद लेकर डेढ़ सौ देता है, सौ अपनी अंटी में रखता है, तू मुझे डिफेंड करेगा ? अग्रवाल क्या तेरा बाप लगता है कि उसकी बकवास तेरे लिए ब्रह्मवाक्य हो जाती है! स्साले ! तू रोज़ प्रेयर के बाद सारे लड़कों को चरित्रवान बनने की शिक्षा देता है, सच बोलने के उपदेश देता है, स्वाभिमानी बनने के लिए कहता है और मास्टर का सच और स्वाभिमान तुझसे बर्दाश्त नहीं होता ! तेरी ऐसी-तैसी ! तूने अभी मास्टर विश्वजीत को ही देखा है, काने अहीर के लड़के बिसुआ को नहीं देखा ! साले ! यह बिसुआ उसी बाप का बेटा है, जिसने ठाकुर के खेतों में मजूरी करने वालों पर होने वाले अत्याचारों का विरोध छाती ठोककर किया था और ठाकुर के हंटरों से पिटा था और ठाकुर के लगाये चोरी के झूठे इल्ज़ाम में जेल चला गया, पर झुका नहीं···

अचानक विश्वजीत को अपना यह इतिहास नये अर्थ लेकर अपने सामने खुलता प्रतीत हुआ। यह इतिहास वह आज तक सबसे छिपाता रहा, खुद भी भूलने की कोशिश करता रहा। रामा को अपनी कहानी सुनाते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funded by MoE-IKS 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalaj Kanpur

समय यह बात जान-बूझकर बचा गया था। लेकिन अब नहीं। अब इस बात को छिपाने की कोई जरूरत नहीं है। वह सवेरा होते ही रामा को यह बात बतायेगा और अपना निर्णय भी। उसने खुलकर एक ठहाका लगाया और उसकी आवाज़ भी सुनी।

•••

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Gran

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रमेश उपाध्याय

जन्म : 1 मार्च, 1942

शिक्षा : एम. ए., पीएच. डी.

कृतियाँ

उपन्यास : चक्रबद्ध, दंड-द्वीप, स्वप्नजीवी, हरे फूल की खुशबू

कहानी संग्रह : जमी हुई झील, शेष इतिहास, नदी के साथ, चतुर्दिक, पैदल अँधेरे में, राष्ट्रीय राजमार्ग, किसी देश के किसी शहर में, कहाँ हो प्यारेलाल, चर्चित कहानियाँ, अर्थतंत्र तथा अन्य कहानियाँ

नाटक : पेपरवेट, सफाई चालू है, बच्चों की अदालत, भारत-भाग्य-विधाता

नुक्कड़ नाटक : गिरगिट, हरिजन-दहन, राजा की रसोई, हिंसा परमो धर्मः, ब्रह्म का स्वाँग, मधुआ

आलोचना : कहानी की समाजशास्त्रीय समीक्षा, आज का पूँजीवाद और उसका उत्तर-आधुनिकतावाद

साहित्यिक इतिहास : जनवादी कहानी : पृष्ठभूमि से पुनर्विचार तक

परिचर्चा : हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकार

अनुवाद : कला की जरूरत, जनता का नया साहित्य, उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र, सुभाष चंद्र बोस – एक जीवनी (अंग्रेजी से), सोनल छाया, कंचुकीबंध, गुजराती कहानियाँ, धूप-छाँह, समकालीन गुजराती कहानियाँ (गुजराती से)

संप्रति : कॉलेज ऑफ वोकेशनल स्टडीज (दिल्ली विश्वविद्यालय) के हिंदी विभाग में वरिष्ठ प्राध्यापक, साहित्य और संस्कृति की पत्रिका 'कथन' का संपादन

संपर्क : 107, साक्षरा अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नयी दिल्ली-110 063

शब्दांकन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant